टेमसुला आओ की हिन्दी कहानी संग्रह ''लाबुरनम फॉर माई हेड'' का हिन्दी अनुवाद तथा भाषिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण

TEMSULA AO KE ANGREZI KAHANI SANGRAH "LABURNUM FOR MY HEAD" KA HINDI ANUVAD TATHAA BHASHIK EVAM SAMAJIK-SANSKRITIK VISHLESHAN

(HINDI TRANSLATION AND LINGUISTIC AND SOCIAL-CULTURAL ANALYSIS OF ENGLISH SHORT STORIES "LABURNAM FOR MY HEAD" BY TEMSULA AO)

पीएच.डी. की उपाधि हेतु शोध-प्रबन्ध

शोध-निर्देशक

प्रो. देवेन्द्र कुमार चौबे

शोधार्थी

दर्शनी प्रिय

भारतीय भाषा केन्द्र

भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली-110067

2017

CENTRE OF INDIAN LANGUAGES
SCHOOL OF LANGUAGE, LITERATURE & CULTURE STUDIES
NEW DELHI-110067

Dated : 20/07 **2017**

DECLARATION

I hereby declare that the research work done in this Ph.D. Thesis entitle **"TEMSULA AO KE ANGREZI KAHANI SANGRAH "LABURNUM FOR MY HEAD" KA HINDI ANUVAD TATHAA BHASHIK EVAM SAMAJIK-SANSKRITIK VISHLESHAN"** by me is the original research work and it has not been previously submitted for any other degree in this or any other University/Institution.

NAME DARSHANT PRIYA
(Research Scholar)

NAME Prof. Devendra Kumar Choubey
(Supervisor)
CIL/SLL&CS/JNU

Prof. Gobind Prasad
(CHAIRPERSON)
CIL/SLL&CS/JNU

आदरणीय

दादी जी को

सादर समर्पित

अनुक्रम

पृष्ठ संख्या

आभार

आमुख

प्रथम अध्याय : भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास और अंग्रेज़ी अनुवाद की परंपरा **1-33**

1.1 अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास

1.2 अनुवाद की परंपरा

1.3 टेमसुला आओ का जीवनवृत्त एवं उनका रचना संसार

द्वितीय अध्याय : टेमसुला आओ के अंग्रेज़ी कहानी संग्रह 'लाबुरनम फॉर माई हेड' का हिन्दी अनुवाद **34-197**

2.1 लाबुरनम फॉर माई हेड 42-68

2.2 डेथ ऑफ हंटर 69-93

2.3 द ब्वाय हू सोल्ड एन एयर फिल्ड 94-109

2.4 द लेटर 110-123

2.5 थ्री वूमेन 124-151

2.6 ए सिम्पल क्वैश्चन 152-164

2.7 सौन्नी 165-189

2.8 फ्लाइट 190-197

तृतीय अध्याय : टेमसुला आओ के अंग्रेजी कहानी संग्रह ''लाबरनुम फॉर माई हेड'' का भाषिक विश्लेषण **198-214**

चतुर्थ अध्याय : ''लाबुरनम फॉर माई हेड'' का सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण **215-238**

पंचम अध्यायः अनुवाद की स्वानुभूति एवं अनुवाद की समस्याएँ **239-276**

उपसंहार **277-280**

परिशिष्ट

1. संदर्भ ग्रंथ सूचि 281-284

2. पत्र पत्रिकाएँ

3. वेबसाईट

4. ''लाबुरनम फॉर माई हेड'' का मूल अंग्रेज़ी पाठ

आभार

शिक्षकों और मित्रों की प्रेरणा का ही प्रतिफल है कि आज मैं इस शोध प्रबंध को लिख पाने में सफल हुई हूँ। आदरणीय निर्देशक प्रो. देवेन्द्र चौबे का मार्गदर्शन न होता तो कभी मैं अपने इस शोध को पूरा न कर पाती। उनके प्रति कृतज्ञ हूँ क्योंकि उन्होंने न केवल धैर्य के साथ मेरा उत्साह बढ़ाया बल्कि समय-समय पर शोध-सामग्री से मेरी सहायता भी की।

मैं टेमसुला आओ की भी आभारी हूँ कि लेखिका और अध्येता होने के नाते उन्होंने हर प्रकार से मेरी सहायता की और अपना अमूल्य समय मुझे दिया। मैं उनके सहयोग और स्नेह के प्रति कृतज्ञ हूँ। मैं साहित्य अकादमी और जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के कर्मचारियों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने शोध संबंधी सामग्री मेरे लिए सहज ही उपलब्ध कराया।

कर्मठता एवं वात्सल्य मूर्ति स्वर्गीय दादी जी श्रीमती मोलन देवी के अमोघ आर्शीवचनों से ही इस 'साधना' के मूल में स्वयं को फलित पाती हूँ। जो प्रत्यक्ष न रहते हुए भी हमेशा मुझे आत्मसंबल व आत्मज्ञान देती रहीं। परिवार के अन्य सदस्यों विशेषकर साथी संजय को आभार जिनके बगैर मेरा यह प्रयास कभी सफल न होता। स्नेही मित्र व बहन सदृश कमलेश दत्त जी जिन्होंने गाहे-बगाहे मेरा उत्साहवर्द्धन किया और मुझे आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। इसके अतिरिक्त प्रीति प्रियंका, राखी गुप्ता, शबनम कुमारी और राजेन्द्र जी जैसे स्नेहिल मित्रों का आभार जो मेरे संबल बने। अंत में अपने टाइपिस्ट उदय जी का धन्यवाद जिनके सहयोग के बिना यह शोध कार्य अपनी मंजिल तक न पहुँच पाता।

दर्शनी प्रिय

आमुख

टेमसुला आओ का दृष्टिकोण लेखन को लेकर बड़ा ही व्यापक और समदर्शी रहा है। पूर्वोत्तर समाज में घटित होने वाली घटनाओं को आत्मसात करते हुए जिस जीवंतता के साथ उन्होंने इन सभी आठ कहानियों को गहरी संवेदना व यथार्थपरकता के धागे में पिरोया है वो वाकई अद्‌भूत व प्रभावी है।

समाज की विभिन्न परिस्थितियों में घटने वाले कथानक को जोड़-जोड़ कर घरौंदा बनाने की यह कहानी कहीं मार्मिक तो कहीं अतिशय द्रावक भी है। इसमें साधारण से पात्र हैं, साधारण-सी घटनाएँ, साधारण सा सहज वातावरण। परन्तु यही साधारण और सहज जब असहज हो उठता है, तब सारी सोच बदलने लगती है। हर शब्द का संदर्भ बदल जाता है। और तब कुछ नए अर्थ नए रूप में परिभाषित होने लगते हैं और तब एक साधारण सी घरेलू कहानी असाधारण बन जाती है।

'टेमसुला आओ' की लगभग सभी कहानियां एक तरह से प्रतिरोध की कहानियाँ है। उन्होंने प्रतीकारात्मक, रूपात्मक और यथार्थवादी हर अन्दाज़ में अपने समय के सियासी, सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्थितियों की कहानियाँ लिखी है। उनके यहाँ वस्तुएँ प्रतीक है और प्रतीक वस्तुएँ है इसलिए अपने समय की समस्त समस्याएँ जिस बेतक्कलुफ़ी और सहजता के साथ उसकी कहानियों में समा जाती है, वे अपने आप में किसी करिश्में से कम नहीं। उनकी कहानियों में मानवीय अस्तित्व जीवन, व्यक्ति और समाज, इतिहास और मनुष्य की मन:स्थिति और भाषा व काल के बीच होने वाले हर इंसानी तमाशे के विषय में प्रश्नों का एक जुलूस या रेला बहता हुआ नज़र आता है।

कहानियों के केन्द्र में एक कहानी है 'लाबुरनम फॉर माई हेड' जिसकी मुख्य पात्र लेंटिना है जो मृत्युपरांत 'अमलतास' के फूलों का मोह त्याग नहीं पाती। यह उसकी अकाट्य जीजिविषा, अतृप्त स्वप्नों व अपरिमित इच्छाओं की कहानी है जो मृत्युपर्यंत मोक्ष प्राप्ति की जीजिविषा को स्वत: स्फूर्त्त अमलतास प्रेम में तब्दील कर देती है जो तमाम झंझावातों और बाधाओं के बाद भी उसे इस ध्येय प्राप्ति के चरम सुख तक पहुँचाती है। यह एक विकासवादी कहानी है। कहानी की मुख्य पात्र लेंटिना सशक्त और कभी न हार माननेवाली दृढ़ व मजबूत चरित्र की महिला है। वह इक्कीसवीं सदी की स्त्री है। समता और समानता की बात करती है। गाँव में सदियों से चली आ रही पुरुषों के कब्र पर अमलतास उगाये जाने की परंपरा का पुरजोर विरोध करती है। उसका मानना है कि स्त्रियाँ भी इस नई परंपरा की वाहक बनें। इसके लिए वह पूरे प्राणपण से प्रयास करती है। समय आने पर न केवल घर के सदस्यों से बल्कि समाज के पुरुषों से भी दृढ़तापूर्वक लड़ती है, उनकी चुनौतीयाँ स्वीकार करती है और अंतत: कभी न हार मानने वाले अपने मजबूत इरादों से समाज की रूढ़िवादी परम्परा को तोड़ने में कामयाब होती है। लेखिका ने लेंटिना को एक सशक्त स्त्री चरित्र के रूप में बड़ी संजीदगी और साफ़गोई से उभारा है। उसका किरदार असल मायने में नई सदी की एक सबल और सचेत और सुदृढ़ महिला के किरदार को विस्तृत फलक पर एक नये आईने में पेश करता है। उसके चरित्र को इस पैनेपन से गढ़ा गया है कि वह स्वत: ही प्रतिरोध की तेज धार से समाज में व्याप्त कुंठित परंपराओं और रूढ़वादी मान्यताओं को बड़ी साफ़गोई से काटती है।

बाद की कहानियाँ भी स्त्री संबल, प्रेम, उन्माद, उन्मुक्तता और प्रतिरोध की कहानियाँ हैं जिनमें संवेदना के प्रत्येक स्तर पर एक नये अनुभव का सामना होता है। और यही अनुभव लगातार सभी कहानियों में अविच्छन्न रूप से चलता रहता है। इसी क्रम में एक कहानी भावनाओं की समस्त सीमा बिंदुओं को तोड़ती प्रतीत होती है। जिसका शीर्षक है 'सोन्नी'। आकर्षण और विकर्षण, मिलन और बिछुड़न के पदक्रम पर आगे बढ़ती यह कहानी पाठकों को अनायास ही उद्वेलित करती है। इससे गुजरते हुए एक वक्त पर ऐसा लगता है जैसे भावनाओं के रेले में सबकुछ बह गया हो। और पाठक अपने सुध-बुध खोता जब इससे उबरता है तो नायक-नायिका के विछोह की पीड़ा से आहत हो उठता है। लेखिका कहानी के मुख्य पुरुष पात्र सौन्नी के किरदार के जरिये जाने कैसा ताना-बाना बुनती है कि अपरिचित, अनजान, सौन्नी पाठकों को अपना लगने लगता है। अपने मृदुल व मार्मिक किरदार के जरिये वो सीधे पाठकों के दिलों में घर कर लेता है। परसुख के लिए स्वयं को आहूत करने वाले इस चरित्र ने उत्कृष्टता की ज़मीं पर एक नई पौध खड़ी की है। उसके इस पुनित कार्य से एक नया संसार सृजित होता है जहां रिश्ते पराये होकर भी प्रेम व अपनेपन के खांचे में स्वत: फिट होते चले जाते हैं। जाने-अनजाने, चाहे-अनचाहे एक दूजे के लिए कुछ बड़ा कर गुजरने का सम्बल देती ये कहानी बताती है कि कैसे अनायास रिश्ते बौने होकर विलिन होने लगते हैं जब उन्हें प्रेम, स्निग्धता और अर्पण की तरावट से सींचा नहीं जाता। लेखिका ने लगभग हर कहानी में जीवन के कई रंग उकेरे है। प्रेम, बलिदान, प्रतिशोध, अत्याचार, नक्सलवाद और नागा विद्रोह की कई-कई परतों को सिरे से उघाड़ती

तमाम कहानियां अलग-अलग जायके में परोसी गई। भिन्न-भिनन तेवर की कहानियां हैं जो ये माद्दा देती है कि हम ज़िन्दगी की आँखों में आँखे डालकर उसकी सच्चाईयों को बाहर खींच लायें।

आकर्षक कलेवर और इंद्रधनुषी रंगो में पिरोई गई लगभग सभी कहानियां मजेदार और रोचक तो है हीं साथ ही यथार्थ की कसौटी पर भी बिल्कुल खड़ी उतरती है। लेखिका ने विचारों के व्यापक कैनवस पर कथा पात्रों के माध्यम से कभी न मिलने वाली ऐसी छाप छोड़ी है जो सदियों तक अपनी जबर्दस्त ताजगी और अलहदा तासीर से पाठकों को रोमोंचित और अह्लादित करती रहेगी।

टेमसुला आओ ने अब तक कई कहानियां लिखीं; संग्रह भी छपे, परन्तु कहानी-संग्रह के रूप में यह प्रयास अनेक मायनों में उल्लेखनीय है। सहज शैली ही नहीं अपितु कथ्य एवं तथ्य के धरातल पर भी यह संग्रह गंभीर रूप से पाठकों को बांधता है। जब कहानियाँ, कहानियां न रहकर यथार्थ लगे, तब साधारण सी रचना असाधारण बन जाती है। इससे बड़ी सार्थकता किसी कृति के लिए और क्या हो सकती है।

इन सभी आठ अंग्रेजी कहानियों का न केवल हिंदी में अनुवाद किया गया है बल्कि उसका पाठाधारित एवं सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण भी किया गया है। ऐसे में अनुवाद के स्तर पर एक अनुवादक के रूप में मुझे कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। इसमें सांस्कृतिक सीमाएं कभी चुनौती बनी तो कभी ठेठ गँवई शैली तो कभी क्षेत्रीय बोलियों ने अड़चनें पैदा की। कभी संवेदना के अंतरण में भीतर तक उतरना पड़ा तो कभी शैलीगत व्यंजनाओं के भँवर जाल में बार-बार उलझना पड़ा। कुल मिलाकर हर कदम पर चुनौतियाँ सामने खड़ी रहीं।

अनुवादक के तौर पर न केवल उन चुनौतियों से जूझने का प्रयास किया गया है बल्कि उसके लिए एक सटीक रास्ता भी कदम-दर-कदम तैयार करते चलना पड़ा। अनुवाद के दौरान स्त्रोत पाठ के अनुरूप मौलिकता और प्रवाहमयता को बनाये रखने का संतुलित प्रयास किया गया है। चूंकि 'लाबुरनम फोर माई हेड' को साहित्य अकादमी अवार्ड से सम्मानित पुस्तक है, जाहिर है हिंदी का पाठक वर्ग भी ऐसी ही उत्कृष्टता और उम्देपन की अपेक्षा इसके हिंदी रूपांतरण को अंग्रेजी के मूल पाठ के सममक्ष उसी भाव और कथ्य के साथ खड़ा करने की कोशिश की गई है। हालाँकि शत प्रतिशत यह संभव नहीं। पर एक अनुवादक के तौर पर मैं कहाँ तक सफल रही, यह बताना मुश्किल है। मूल में उतरकर उसकी आत्मा को लक्ष्य पाठ में उतार पाने के ध्येय में मैं कहाँ तक सफल रही इसके मूल्यांकन का महती कार्य मैं आप पाठकों पर छोड़ती हूं। शेष दायित्व का निर्वहन मैंने कर दिया है।

प्रथम अध्याय

भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास और अंग्रेज़ी अनुवाद की परंपरा

1.1 अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास

1.2 अनुवाद की परंपरा

1.3 टेमसुला आओ का जीवनवृत्त एवं उनका रचना संसार

अध्याय-एक

भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास और अंग्रेज़ी अनुवाद की परंपरा

1.1 अंग्रेज़ी कथा साहित्य का विकास

भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य का इतिहास ज्यादा पुराना नहीं है। 19वीं शताब्दी में बंकिम चंद्र चटर्जी की 'राजमोहन वाइफ' ओर गोविंद सामंता की 'लालबिहारी डेज' के साथ ही भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य का उदय हुआ। दोनों ही पुस्तकों में भारतीय सामाजिक संदर्भ में कथा को अभूतपूर्व विस्तार दिया। इससे पूर्व के अंग्रेज़ी कथा साहित्य अनुकरण मात्र थे। इन दो अंग्रेज़ी उपन्यास के जरिये भारतीय जनमानस की मनोवृत्ति को प्रत्यक्ष रूप से समझा गया।

''अंग्रेज़ी शिक्षा का बढ़ता प्रभाव राष्ट्रीय जनजागरण और यूरोपियन शिक्षा प्रारूप ये कुछ ऐसे तत्त्व थे जिन्होंने भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य की नींव तैयार की। पूर्व में लिखे गये अंग्रेज़ी के तमाम उपन्यास और कहानियाँ अनुकरण ही प्रतीत होती थी। आज़ादी के पूर्व भारतीय बुद्धिजीवी वर्ग राष्ट्रीय जनजागरण की लौ समाज में फैला तो रहे थे पर अपने अपने तरीके से। बंगाल को भारतीय अंग्रेज़ी कथा साहित्य के प्रारंभ की भूमि मानी जा सकती है। 19वीं सदी के तमाम बंगाली लेखक अभिजात्य वर्ग से आते थे। जैसे बंकिम चंद्र चटर्जी, रमेश चन्द्र दत्त, तोरू दत्त और रविन्द्रनाथ टैगोर जो अपने अपने तरीके से सामाजिक समस्याओं का विरोध कर रहे थे। इन लेखकों ने भारतीय जनमानस की असल समस्या को अपने लेखन के माध्यम से सबके सामने रखा।

भारतीय अंग्रेज़ी कथाकारों की जड़ें दो परम्पराओं में है- भारतीय और विदेशी। एक विदेशी भाषा में भारतींय मनोभावों को पिरोना उनके लिए एक बड़ी चुनौती थी। यद्यपि उपन्यास क्षेत्रिय भाषाओं में लिखे जा रहे थे- जैसे-बंगाली, हिन्दी, मराठी, मलयालम। तब अंग्रेज़ी लेखन की परम्परा नहीं थी। ज़ाहिर है शुरू में भारतीय लेखक यूरोपियन लेखक व अनुवादक जैसे- लियो तोलसताय, हेनरी, बालजेक ओर फ्योदोर दोतोवोस्की जैसे अंग्रेज़ी अनुवादकों से खासे प्रभावित थे। पर धीरे-धीरे भारतीय अंग्रेज़ी कथाकारों ने पटकथा, तकनीक और मानव मूल्यों जैसे तत्वों को अपनी लेखन-कला में जज्ब कर लिया। और कथायें अब नए कलेवर और नये भारतीय रंग से ओतप्रोत हो पाठकों तक पहुंचने लगी।

भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य के विस्तार को समझने के लिए इसकी उत्पत्ति, विकास स्तरों और इसकी संस्कृतिनिष्ठ परम्पराओं को समझना आवश्यक होगा। अंग्रेज़ी कथा साहित्य को तीन अनुवर्त्ती कालों में विभाजित किया गया है यथा- (क) सन् 1875 से 1920 तक की कथा (ख) सन् 1920 से 1947 तक का कथा- विस्तार और (ग) सन् 1947 के बाद भारतीय विद्वानों द्वारा जैसे- के आर.एस. अयंगर (1962), एम.के. नाइक (1982) और मीनाक्षी मुखर्जी (1985) द्वारा लिखी गई कहानियाँ।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद भारतीय अंग्रेज़ी कथा साहित्य में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। इस युद्ध ने भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय भावनाओं को उत्प्रेरित किया और बाद में महात्मा गांधी द्वारा चलाये गये राष्ट्रीय आंदोलन ने अनेक भारतीयों लेखकों के भीतर देशभक्ति और राष्ट्रीयता की भावना का संचार किया जिससे प्रभावित

होकर उन्होंने ऐतिहासिक कृतियों का सृजन किया। हालांकि इन लेखकों पर विक्टोरियन, डिकेन और थैकरे का खासा प्रभाव था पर इन्होंने कभी भी आंख बंद कर इन पश्चिमी साहित्यकारों का अनुकरण नहीं किया। इससे इतर वे एक अलग किस्म की भारतीय कथा लेखन शैली को विस्तार देना चाहते थे। बंकिम चंद्र चटर्जी का अंग्रेज़ी उपन्यास 'राजमोहनं वाइफ' ने भारत में एक समृद्ध लेखन परंपरा की नींव डाली। बाद के ज़्यादातर कथाकारों के लेखन में राजनैतिक उदासीनता दिखती है। उन्होंने अपने लेखन में अधिकतर ग्रामीण और देहाती जीवन शैली को उभारा। एक तरफ तो अधिकतर समाज में फैले अंधविश्वास, कुरीतियों और रूढ़िवादिता का ज़मकर विरोध किया वहीं दूसरी ओर भावनात्मकता से ओत-प्रोत किरदारों को भी अपने अनुभवों से जीवंत किया।''[1]

स्वतंत्रतापूर्व के तीन लेखकों मुल्कराज आनंद, आर.के. नारायण और राजा राव ने अंग्रेजी कथा लेखन की परंपरा की विधिवत शुरूआत की। स्वतंत्रता पश्चात् के भारतीय अंग्रेज़ी कथाकारों को आधुनिक लेखकों की संज्ञा दी गई है। इन आधुनिक कथाकारों में प्रमुख रूप से- भवानी भट्टाचार्य, बी. रंजन, मंगोलकर, खुशवंत सिंह, चमन बहल, अरूण जोशी, कमला मार्केण्डेय, रा.पी.जाधव, नयनतारा सहगल, अमित देसाई आदि प्रमुख है। अनेक कथाकारों ने अंग्रेज़ी भाषा में खूब लेखनी चलाई। भारतीय अंग्रेज़ी कथा परम्परा पर सन् 1930 के दौरान घटनेवाली सामाजिक-राजनैतिक घटनाओं का खासा प्रभाव रहा। मुल्कराज आनंद, आर.के. नारायण और राजा राव जैसे लेखकों ने बिना वास्तविकता छुपाये तत्कालीन भारतीय

---

[1] अनुवाद चिंतन, विजयराघव रेड्डी, पृ. 48

समाज की सामाजिक समस्याओं को अपने लेखन में प्रमुखता से स्थान दिया। वे सुधारवादी प्रवृति के थे जिसे उन्होंने अपनी लेखनी के जरिये नयी धार दी। सन् 1930 में उपर्युक्त सभी लेखकों का अंग्रेज़ी साहित्य के क्षेत्र में आर्विभाव हुआ। वास्तव में यही वो समय था जब भारत में अंग्रेज़ी कथा साहित्य की विधिवत् शुरूआत हुई। 30 के दशक के दौरान उनकी रचनाओं 'अनटचेबल' (1935), स्वामी और फ्रेन्ड्स (1935) और कानतापुरा (1938) ने उन्हें साहित्यिक फलक पर उभरने का अवसर दिया। इन्हीं रचनाओं ने भारतीय इंगलिश फिक्शन को मजबूत आधार दिया।

''जिस भू-भाग को आज हम ब्रिटेन कहते हैं वह किसी समय यूरोप का पश्चिमोत्तर प्रदेश था। परवर्ती प्राकृतिक परिवर्तनों ने उसे एक अलग द्वीप का रूप दे दिया। पुरातत्त्वविदों के अनुसार आज से चार लाख वर्ष पूर्व ही इस क्षेत्र में मानव का आवागमन प्रारम्भ हो गया था; किन्तु अंग्रेज़ी भाषा के इतिहास के लिए हमें इतने सुदूर काल तक जाने की आवश्यकता नहीं। इस भाषा का प्रारम्भ तो ईसा की पांचवीं शताब्दी से ही होता है। लगभग 400 वर्ष के आधिपत्य के उपरान्त 410 ई. में रोम के अन्तिम सैनिक दस्ते इंग्लैंड छोड़ कर चले गए। किन्तु ब्रिटेन के कन्धों पर से विदेशी शासन का जुआ उतरे कुछ ही वर्ष बीते होंगे कि वहां तीन ट्यूटन जातियों के आक्रमण प्रारम्भ हो गए। ये जातियां थीं-ऐंगिल, सैक्सन और जूट। इन्हीं से आगे चल कर अंग्रेज़ी राष्ट्र का निर्माण हुआ। पहले इनका निवास स्थान डेनमार्क में था, किन्तु धीरे-धीरे ये जातियाँ दक्षिण की ओर बढ़ीं और एल्ब, वेसर, टेम्स और र्‌हाइन, इन चार बड़ी नदियों के आसपास बस गईं।

लगभग एक शताब्दी तक इन विदेशी आक्रमणकारियों के जत्थे अपने यूरोपीय निवास स्थान से निकल कर ब्रिटेन पर आक्रमण करते और वहां बसते रहे। प्रारम्भ में उन्होंने इस द्वीप के दक्षिण-पूर्वी भाग को ही अपनाया; किन्तु धीरे-धीरे ये उत्तर-पश्चिम में भी बढ़ते गए, यहां तक कि पश्चिम और उत्तर के पहाड़ी क्षेत्र को छोड़ कर लगभग सारे द्वीप पर इनका कब्जा हो गया।

जब यह आक्रमण प्रारम्भ हुए उस समय इंग्लैंड में कैल्ट जाति के लोग रहते थे, जिनके पूर्वजों ने ईसा पूर्व आठवीं शताब्दी में तथा तदुपरान्त ब्रिटेन पर आक्रमण करके वहाँ बसना प्रारम्भ कर दिया था। इनकी अपनी कैल्टिक भाषा थी, जिसकी वर्तमान संतति है वेल्श, जो वेल्स के लगभग दस लाख निवासियों द्वारा अब भी बोली जाती है, ब्रेटन जो फ़्रांस के ब्रिटेनी प्रदेश में उतने ही लोगों द्वारा अब भी बोली जाती है, इसी परिवार की भाषाएँ हैं। मक्स, जो आइल ऑफ मैन में बोली जाती है, स्काटिश गायलिक, जिसे स्काटलैंड के लगभग एक लाख व्यक्ति बोलते हैं, तथा आयरिश, जो आयरलैंड की राजभाषा है। ट्यूटन जातियों के प्रभाव से कैल्ट पश्चिम की ओर आगे बढ़ते चले गए। इंग्लैंड में या तो वे समाप्त कर दिए गए या ट्यूटन आक्रमणकारियों द्वारा अपने में मिला लिए गए। कुछ छुटपुट स्थानों को छोड़ कर कैल्टिक भाषा ही इंग्लैंड से समाप्त हो गई। यह वो भाषा थी जो इंग्लैंड में उस समय भी सामान्य प्रयोग में थी जब वह रोम साम्राज्य का अंग था। इसमें संदेह नहीं कि रोम वालों की भाषा लैटिन थी, किन्तु इंग्लैंड में इसके प्रयोक्ता गिने-चुने लोग ही थे- शासक वर्ग, प्रशासन से सम्बद्ध व्यक्ति, सेना, कुछ व्यापारी और नगरों में रहने वाले कुछ शिक्षित व्यक्ति। तत्कालीन शिलालेख इस

सरकारी क्षेत्र में ही लैटिन का प्रयोग प्रदर्शित करते हैं। यह भाषा सभ्य एवं सुसंकृत समाज की भाषा समझी जाती थी; किन्तु सामान्य जन इसका प्रयोग नहीं करते थे। वे अपनी कैल्टिक भाषा का ही प्रयोग करते थे। लिखित रूप में अवश्य केवल लैटिन का ही प्रयोग होता था। ट्यूटन जातियों के आक्रमण का एक प्रभाव यह हुआ कि इंग्लैंड में शिक्षा और उसके साथ-साथ लैटिन भाषा भी लुप्तप्राय हो गई। कैल्टिक भाषा भी केवल कुछ पश्चिमी भाग में बची रही।

ऐंग्लो-सैक्सन जातियाँ भारोपीय परिवार की निम्न पश्चिमी जर्मन भाषा की विभाषाएं बोलती थीं। वर्तमान अंग्रेज़ी भाषा का विकास इन्हीं विभाषाओं के सम्मिलिन से हुआ। अंग्रेज़ी भाषा के इस विकास की धारा पिछले 1500 वर्षों में इंग्लैंड में निर्बाध गति से प्रवाहित होती रही है; किन्तु भाषा-वैज्ञानिकों ने कुछ मुख्य लक्षणों तथा विकास की प्रवृत्तियों को दृष्टि में रखते हुए उसे तीन कालों में विभाजित किया है। सन् 450 से 1150 ई. तक का काल प्राचीन अंग्रेज़ी काल कहा जाता है; 1150 से 1500 ई. तक का मध्य अंग्रेज़ी काल और उसके बाद का आधुनिक अंग्रेज़ी काल कहा जाता है।

प्राचीन अंग्रेज़ी कोई एकरूप भाषा नहीं थी। स्थानभेद से उसके रूप में भी अन्तर हो जाता था। भाषा-वैज्ञानिकों ने उसकी चार मुख्य विभाषाओं में विभेद किया है। ये विभाषाएं थीं नार्थम्ब्रियन, मर्सियन, पश्चिमी सैक्सन और कैंटिश। नार्थम्ब्रियन हम्बर नदी के उत्तर की ओर बोली जाती थी; मर्सियन का प्रयोग हम्बर और टेम्स नदियों के बीच में होता था। कैंटिश दक्षिण-पूर्वी इंग्लैंड की विभाषा थी और पश्चिमी सैक्सन का प्रयोग दक्षिणी इंग्लैंड में स्थित पश्चिमी सैक्सन राज्य में

होता था। पश्चिमी सैक्सन राज्य की उन्नति के साथ उसकी विभाषा ने भी एक साहित्यिक स्तर प्राप्त कर लिया और बहुत सम्भव था कि इसी विभाषा से भावी इंग्लैंड की भाषा का निर्माण होता; किन्तु नार्मन विजय के कारण इसकी प्रगति रुक गई और तत्पश्चात् आधुनिक अंग्रेज़ी का विकास पश्चिमी सैक्सन न हो कर एक अन्य विभाषा से हुआ।''[2]

''प्राचीन अंग्रेज़ी के सामान्य लक्षणों के विषय में हम यह कह सकते हैं कि वह आधुनिक अंग्रेज़ी से बहुत भिन्न थी। वास्तव में प्राचीन अंग्रेज़ी में लिखा हुआ कोई पृष्ठ आज आधुनिक अंग्रेज़ी के ज्ञाता को फ्रेंच और इटालियन भाषाओं से भी अधिक अपरिचित लगेगा। प्राचीन और आधुनिक अंग्रेज़ी का अन्तर केवल उच्चारण, शब्दावली और व्याकरण का न हो कर वर्णमाला का भी है। संस्कृत की भांति प्राचीन अंग्रेज़ी में भी विभक्तियों का प्रयोग होता था। प्राचीन अंग्रेज़ी की संज्ञाओं के विभिन्न रूपों में केवल दो वचनों (एक वचन और बहुवचन) का ही भेद नहीं था, अपितु उनमें चार विभक्तियों (कर्ता, कर्म, सम्प्रदान और सम्बन्ध) के कारण भी रूप-भेद होता था। अपादान के अलग रूप नहीं थे और प्राय:करण तथा अधिकरण के अलग रूप नहीं थे। इनके स्थान पर प्राय: सम्प्रदान के रूपों का ही प्रयोग होता था। सम्बोधन के भी प्राय: अलग रूप न होकर कर्ताकारक के रूप में ही उसके लिए प्रयुक्त होते थे। सर्वनामों और विशेषणों के रूप कारक और वचन के अनुसार ही नहीं अपितु लिंग के अनुसार भी परिवर्तित होते थे। डेफिनिट आर्टिकिल जिसे आधुनिक अंग्रेज़ी में एक ही रूप प्राप्त है, प्राचीन अंग्रेज़ी में

---

[2] भारतीय अंग्रेज़ी साहित्य का इतिहास, एम.के. नाईक, पृ. 21

वचन, लिंग और कारक के अनुसार भिन्न रूप ग्रहण करता रहता था। किन्तु क्रियाओं में केवल दो कालों का रूपभेद था–वर्तमान और भूत। क्रियाओं में सामान्य या निश्चितार्थ (इंडीकेटिव), आज्ञा और सम्भावना के अनुसार तथा दो सामान्य वचनों के अनुसार भी रूप–परिवर्तन होता था।

लिंग के क्षेत्र में प्राचीन अंग्रेज़ी आधुनिक अंग्रेज़ी से बिल्कुल भिन्न थी। आज की अंग्रेज़ी में लिंग–भेद प्राकृतिक है, अर्थात् शब्द के लिंग का निर्णय सामान्यतः शब्द–विशेष पर आधृत न होकर उस शब्द से अभिप्रेत वस्तु के लिंग पर निर्भर रहता है। किन्तु संस्कृत की भांति प्राचीन अंग्रेज़ी में लिंग–भेदक व्याकरणिक था, अर्थात् वह द्योतित वस्तु के लिंग पर आश्रित न हो कर शब्द–विशेष के स्वरूप पर आश्रित होता था। इस प्रकार stan (stone-पाषाण) और mona (moon-चन्द्रमा) पुलिंग थे; sunne (sun-सूर्य) स्त्रीलिंग था; किन्तु wiff (wife-पत्नी) ने नपुंसकलिग था और wifmann woman-स्त्री) शब्द पुल्लिंग था क्योंकि इस समास का अन्तिम पद पुल्लिंग है।

जहां तक शब्दावली का सम्बन्ध है प्राचीन अंग्रेज़ी में लैटिन और फ्रेंच भाशाओं के वे शब्द नहीं थे जिनसे आधुनिक अंग्रेज़ी भरी पड़ी है। प्राचीन अंग्रेज़ी शब्दों के रूपें में परिवर्तन करके शब्दों की कमी की पूर्ति करती थी। उपसर्ग और प्रत्यय लगा कर एक मूल शब्द से अनेक व्युत्पन्न शब्द बना लिए जाते थे और अनेक शब्दों से समस्त पद बनाकर उनका विशिष्ट अर्थों में प्रयोग होता था।

इंग्लैंड में तो अंग्रेज़ी का विकास अंग्रेजों के सतत् प्रयत्न करने पर ही हो सका; किन्तु भारत में उसके प्रसार के लिए स्वयं अंग्रेजों को अधिक प्रयत्न नहीं

करना पड़ा क्योंकि यहां अंग्रेज़ी का प्रचार मुख्यत: भारतीयों के कारण ही हो गया। अंग्रेजों की अपनी भाषा अंग्रेज़ी अवश्य थी; किन्तु प्रारम्भ में ईस्ट इण्डिया कंपनी ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया कि भारतीय अंग्रेज़ी सीखें, और इसके लिए कोई संस्थागत प्रयास नहीं किये गए बल्कि उन्होंने इसे सीखने को केवल प्रेरित किया। फोर्ट विलियम जैसे कॉलेज की स्थापना इसी उद्देश्य से की गई। इस प्रकार स्वयं अंग्रेजों ने प्रथमत: भारतीय भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया और यथावसर उनका यथाचित प्रयोग भी किया। वास्तव में सरकारी स्तर पर अंग्रेज़ी का प्रयोग करते हुए भी ईस्ट इण्डिया कंपनी ने प्रारम्भ में अपने शासन कार्य में भारतीय भाषाओं के प्रयोग के लिए काफी अवसर दिया। विभिन्न विधिसम्मत दस्तावेजों के भारतीय भाषओं में अनुवाद उपलब्ध कराए गए। बंगाल रेगुलेशन के विषय में तो बहुत समय तक यह स्पष्ट और अनिवार्य विधान रहा कि उनका स्थानीय भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित किया जाए। जब न्याय व विधिक प्रकृति के दस्तावेजों का देश की क्षेत्रिय भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित करना अनिवार्य नहीं रह गया तब भी ये अनुवाद बराबर तैयार व प्रकाशित किए जाते रहें। तत्कालीन अभिलेखों से यह भी पता लगता है कि उनका जनता द्वारा उनका बहुतायत उपयोग हुआ। आगे चल कर तत्कालीन विधि व न्याय के प्रचार के लिए पश्चिमोत्तर प्रान्त का गजट बहुत समय तक हिन्दी में निकाला गया। न्यायालयों में (मुख्यतया जिला स्तर तक के न्यायालयों में) स्थानीय भाषाओं के प्रयोग की पर्याप्त छूट थी तथा न्यायालय के बाहर भेजे जाने वाले सम्मन व न्यायिक आदेशों के लिए प्रांतीय भाषा का प्रयोग अनिवार्य था। निर्णय आदि में भी अंग्रेज़ी का प्रयोग अनिवार्य नहीं था।

1930 के दौरान भारतीय कथा साहित्य लेखन के क्षेत्र में ऐसे उपन्यासकारों की आवश्यकता भी जिनमें सामाजिक समस्याओं को देखने और समझने की गहरी अनुभूति हो और जो बिना किसी लाग-लपेट के भारतीय जनमानस की समस्याओं को उठा सके। मुल्कराज आनंद एक ऐसे ही मानवतावादी लेखक थे। वो अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर कहानियाँ लिखते जो यर्थाथ के बहुत करीब होती। मुल्कराज आनंद के शब्दों में-''कथा लेखन मानवता के करीब पहुंचने का सबसे सशक्त माध्यम है। यह मानवीयता के गुणों से भरपूर है।'' उन्होंने समाज के सबसे निचले तबके के जीवन से जुड़ी विभिन्न समस्याओं को अपनी लेखनी में स्थान दिया। यद्यपि वे चार्ल्स डिकेन्स, एच जी वेल्स और टॉल्स्टॉय आदि लेखकों से खासे प्रभावित थे। तथापि उन्होंने प्राचीन पारंपरिक भारतीय कथा शैली का ही अनुकरण किया। साथ ही कुरूतियों और रूढ़ियों पर अपने प्रभावशाली लेखन का प्रभाव छोड़ा। अतः उन्होंने अपने अधिकतर उपन्यासों में सामाजिक संत्रास, पोंगापंथी, अंधविश्वास आदि के प्रति विरोध के स्वर को मुखरित किया। उनके कुछ प्रमुख उपन्यास इस प्रकार हैं:- कूली (1936), टु लिव्स एंड ए बड (1937), विलेज (1939), अक्रॉस द ब्लैक वाटर्स (1940), द स्वोर्ड एंड द सिकल (1942) एंड द बिग हर्ट (1942)। आनंद की कहानियों के केन्द्रिय पात्र सदैव समाज के निचले तबके और हाशिये पर जी रहे लोग होते। डोम, कुली, चमार, जैसे सामाजिक रूप से परित्यक्त वर्ग जो भारतीय समाज में हासिये पर थे उनकी दारूणता और बेबसी को आनंद ने अपनी कहानियों में प्रमुखता से स्थान दिया।''[3]

---

[3] अनुवाद कला के मूल स्रोत, एन.ई. विश्वनाथन अय्यर, पृ. 26

1.2 अनुवाद की परंपरा

आधुनिक काल में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं से अनुवाद की परंपरा ईस्ट इंडिया कंपनी के शासनकाल तथा अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रसार-प्रसार से प्रारंभ होती है। वैसे तो अंग्रेज़ी से वैज्ञानिक, धार्मिक एवं शैक्षिक साहित्य के भी अनेक अनुवाद हुए हैं; किंतु अधिकतर अनुवाद सर्जनात्मक साहित्य के ही हुए हैं। वर्ड्सवर्थ, कीट्स, शैली, बायरन, टामस ग्रे, गोल्डस्मिथ एवं काउपर आदि की कविताओं के अनेक अनुवाद मिलते हैं। अंग्रेज़ी की फुटकर कविताओं के हिन्दी अनुवाद सर्वप्रथम श्रीयुत् श्रीनिवास दास ने किए। उन्होंने अपने उपन्यास 'परीक्षा गुरु' में शेक्सपियर, बायरन की कविताओं की कई पंक्तियों को अनूदित रूप में प्रस्तुत किया है।

''हिन्दी में अनुवाद की व्यवस्थित परंपरा सोलहवीं शताब्दी से मिलती है। अट्ठारहवीं शताब्दी तक प्राचीन साहित्य का अनुवाद होता रहा। इस अवधि में अरबी-फ़ारसी के कुछ प्राचीन ग्रंथों का अनुवाद हुआ, क्योंकि उस काल में समकालीन ग्रंथ उपलब्ध नहीं थे। हिन्दू धर्म के ग्रंथों के साथ-साथ बौद्ध, जैन और इस्लाम मतों के ग्रंथों का अनुवाद हुआ। इसके अलावा संस्कृत और अरबी-फ़ारसी के साहित्य, चिकित्सा, ज्योतिष, नीति आदि विषयक ग्रंथों का अनुवाद हुआ। इन अनुवादों में कई पांडुलिपियां तो ग्रंथागारों में पड़ी है। वशिष्ट कृत संस्कृत वेदांत ग्रंथ 'योग वशिष्ट' का अनुवाद रामप्रसाद 'निरंजनी' की भाषायोग वशिष्ट (1741) को खड़ीबोली हिन्दी गद्य की प्राचीनतम पुस्तक मानी जाती है। 18वीं और 19वीं शताब्दी में श्रीमद्भागवत के दशक स्कंध का अनुवाद मुंशी सदासुख लाल 'नियाज'

(1746-1824) का 'सुखसागर' है और भागवत पुराण के दशम स्कंध का चतुर्भुज शर्मा के ब्रजभाषा रूपांतरण का खड़ीबोली गद्य में अनुवाद लल्लू लाल (1763-1825) का 'प्रेमसागर' (1803) है; सदल मिश्र (1786-1848) की बहुचर्चित कृति 'नासिकेतोपाख्यान' (1803) भी नचिकेता के प्रसिद्ध संस्कृत आख्यान का खड़ी बोली में रूपांतर है। खड़ीबोली काव्य की प्रथम कृति श्रीधर पाठक की 'एकांतवासी योगी' (1886) ऑलिवर गोल्डस्मिथ की 'द हरमिट' का काव्यानुवाद है। 'सरस्वती' के प्रथम वर्ष (1900) में प्रकाशित किशोरी लाल गोस्वामी की जिस कृति 'इन्दुमति' को हिन्दी की प्रथम कहानी माना जाता है, उसमें विलियम शेक्सपियर की 'द टेम्पेस्ट' की छाया मिलती है। खड़ीबोली हिन्दी में निबंध विधा का उद्‌भव करने वाली निबंधमालादर्श (1899) और बेकन-विचार -रत्नावली (1900) नामक दो अनूदित ग्रंथ हैं। 'निबंधमालादर्श' विष्णु कृष्ण चिपलूणकर के मराठी निबंधों का गंगा प्रसाद अग्निहोत्री द्वारा अनूदित ग्रंथ है और 'बेकन-विचार-रत्नावली' में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने फ्रांसिस बेकन के अंग्रेज़ी निबंधों का अनुवाद प्रस्तुत किया है। लाला सीताराम के अनूदित नाटकों पर महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी में जो 'कालिदास की अलोचना' लिखी वह अनुवाद की समालोचना है। टॉमस ग्रे की कविता को 'गड़रिया और आलिम' नाम से 1884 में अनूदित किया। लाँग फैलो की कविता 'इवैंजलीन' को 'अंजलैता' नाम से, पर्नेल की कविता 'हरमिट' को 'योगी' शीर्षक से अनूदित किया। मैकाले के कथाकाव्य 'लेज ऑफ एन्शेन्ट रोम' ने हिन्दी अनुवादकों को अपनी ओर बहुत आकर्षित किया। यद्यपि संपूर्ण काव्य का हिन्दी में अनुवाद नहीं हुआ, किंतु इसके एक अंश

'होरेशस' को छंगा लाल मिश्र ने 1903 में अनूदित किया। इसी को बच्चन पांडेय ने 1911 में तथा रघुनाथ प्रसाद कपूर ने 1912 में अनूदित किया। इस प्रकार हिन्दी की प्राय: हर विधा का प्रारंभ किसी अनूदित या अनुवाद से संबंधित किसी ग्रंथ से हुआ है। अन्य साहित्यों में अनुवाद न केवल एक स्वतंत्र विधा या विषय के रूप में स्थापित हुआ है, बलिक उसका एक स्वतंत्र शास्त्र भी बन चुका है।

भारतीय भाषाओं की अनेक कालजयी कृतियों का अनेक आधुनिक विश्वभाषाओं में अनुवाद किया गया है। अंग्रेज़ी व जर्मन इस क्षेत्र में सबसे प्रमुख हैं। मूलत: इन्हीं दोनों भाषाओं में अनुवाद-कार्य प्रारंभ हुआ। अंग्रेज़ी अनुवाद का कार्य ईस्ट इंडिया कंपनी की प्रेरणा से शुरू किया गया। बाद में विद्वानों ने साहित्यिक प्रेरणा से इसमें भाग लेना शुरू किया। अंग्रेज़ी कंपनी का चरम ध्येय भारत पर शासन करना और संपत्ति पर मिल्कियत जमाना था। किंतु व्यक्तिगत रूप से कुछ अंग्रेज़ सज्जन प्राचीन भारतीय साहित्य के भक्त निकले। उन्होंने गहन अध्ययन और कठिन परिश्रम से संस्कृत भाषा सीखी। कट्टर परंपरागत विचारधारा वाले संस्कृत अध्यापक विद्वान, विधर्मी विदेशियों को संस्कृत सिखाने को आसानी से तैयार न थे। ऐसी विषम परिस्थिति के बावजूद अंग्रेज़ों ने संस्कृत भाषा सीखा और संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया।

एक बार जब ईस्ट इंडिया कंपनी के पाँव भारत में पूरी तरह पाँव जम गए तब उसे भारत की पुरानी प्रशासनिक व राजनीतिक बातें समझने की जरूरत महसूस हुई। उसने कलकत्ता के फोर्ट विलियम कॉलेज और कुछ अन्य संस्थाओं में विद्वानों के ज़रिए कई ऐतिहासिक ग्रंथों का अनुवाद कराया। कारसपोंड्स एंड

डायरीज ऑफ टीपू सुल्तान, टीपू सुल्तान का पत्राचार व दैनंदिनी, मिर्ज़ा अबूतलब खाँ का मासीर-ए- तालीबी-फी-बिलाद, मीर इज्जत्तुल्ला का सफ़रनामा, मोहनलाल कश्मीरी का यात्रा संस्मरण, एक पठान सिपाही का संस्मरण आदि का अनुवाद भी कराया गया। इन ग्रंथों के अनुवाद से एक बड़ा फायदा ये हुआ कि अवध, पंजाब, रोहिलखंड, सिंध, अफगानिस्तान, कर्नाटक, भरतपुर आदि रियासतों के गोपनीय विवरण इस्ट इंडिया कंपनी को आसानी से उपलब्ध हो गये।

भारतीय ग्रंथों के पश्चिमी अनुवाद के क्षेत्र में सबसे विख्यात नाम सर विलियम जोन्स का है। उन्होंने कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम् का अनुवाद किया। सर चार्ल्स विलिकंस ने भगवद्गीता का सर्वप्रथम अंग्रेज़ी अनुवाद प्रस्तुत किया। लेफ्टीनेंट कर्नल मार्क विलकंस ने अखलाक-ए-नसीरी नामक फ़ारसी दर्शन ग्रंथ का अनुवाद किया था।

विलियम एर्सकीन ने 'जाहिर-इद-दिन-बाबर'-(बाबरनामा) का अनुवाद फ़ारसी से सन् 1826 में किया। फ्रांसिस ग्लैडविन ने अबुल फज़ल के आइन-ए-अकबरी का अनुवाद सन् 1783 में फ़ारसी से किया। चाल्स स्टुअर्ट ने मुलफ़ज़त तैमूरी और तज़केरे अल वाकयात का अनुवाद किया था। ऐसे ही कई अन्य इतिहास-ग्रंथ अंग्रेज़ी में अनुवाद किए गए।

1774 में सर विलियम जोन्स ने कलकत्ते में बंगाल एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना की। इसके तत्त्वावधान में भारत के महत्त्वपूर्ण ग्रंथों की प्राप्ति और अनुवाद का कार्य बड़े पैमाने पर हो सका। सर विलियम जोन्स ने गीतगोविंद, अभिज्ञान शाकुंतलम् तथा मनुस्मृति के प्रामाणिक संस्करण प्राप्त किए। लूचि मैथ्यू

लैंगिलस ने हितोपदेश का फ्रेंच अनुवाद प्रस्तुत किया। वे आइन-ए-अकबरी की अकबर के दस्तखतवाली संपूर्ण प्रति प्राप्त कर सके। अंटोयिन पोलियर स्विट्जरलैंडवासी इंजीनियर एवं वास्तुशिल्पी थे। उनहोंने दिल्ली व लखनऊ में हिंदू धर्म का अध्ययन करके वेदों की एक संपूर्ण प्रति प्राप्त की। किंतु वापसी के दौरान आक्रमण कर उन्हें लूट लिया गया और वे उनका कत्ल कर दिया गया।

नथानियेल हेड नामक सज्जन ने सन् 1776 में मानव सूत्र (मनुस्मृति) का अंग्रेज़ी अनुवाद तैयार किया। यह संस्कृत ग्रंथ के फ़ारसी अनुवाद से किया गया। कंपनी के मद्रास कार्यालय के श्री जी.ए. हेर्लोट्स नामक डॉक्टर ने 1832 में जाफर शरीफ़ की कानून-ए-इस्लाम का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया। सरकारी अफ़सरों को प्रशासन में मदद देने के लिए कनी ने फोर्ट विलियम कॉलेज, फोर्ट सेंट जार्ज, रायल मिलिटरी कॉलेज तथा हेयिलीबरी कॉलेज में विद्वानों से पाठ्य- पुस्तकों का अनुवाद का कार्य कराया।'[4]

उमर खैय्यामी फ़ारसी में रचित रूबाइयों का अंग्रेज़ी में सर्वप्रथम अनुवाद सन् 1859 में फिट्ज़जेराल्ड ने किया। फिट्ज़जेराल्ड में मौलिक रचनाकार की प्रतिभा थी और इसी कारण उमर खैय्याम की रूबाइयों का अनुवाद पुनर्सृजन अधिक था, अनुवाद कम। फिर इसके बाद इन रूबाइयों के अनुवाद विश्व की अनेक भाषाओं में हुए। हिन्दी में भी फिट्टज़ेराल्ड के अधिकतर अनुवाद 1930-40 के दौरान हुए। सन् 1930 और उसके बाद हरिवंश राय बच्चन, मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, केशव प्रसाद पाठक, रघुवंश लाल गुप्त, बलदेव

---

[4] अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत एंव प्रविधि, भोलानाथ तिवारी, पृ. 30

प्रसाद मिश्र, गया प्रसाद गुप्त, सूर्यनाथ टकसर, गिरिधर शर्मा (नवरत्न), ब्रजमोहन तिवारी, किशोरी रमण टंडन, जगदंबा प्रसाद हितैषी, कमला देवी चौधरी, रामचंद्र सैनी, सत्यपाल बेदार साहित्यकारों और अनुवादकों ने किया है।

अंग्रेज़ी में साहित्य का सृजन अंग्रेज़ी की स्थिति के अनुसार ही हुआ है। जब सभी पढ़े-लिखे लोग विदेशी भाषाओं का प्रयोग करते हों तो देशीय भाषा में साहित्य कौन लिखे और किसके लिए लिखे! अतः 12वीं तथा 13वीं शताब्दियों का अंग्रेज़ी साहित्य नगण्य ही है। इन शताब्दियों में कुछ धार्मिक साहित्य अवश्य अंग्रेज़ी में लिखा गया क्योंकि सामान्य जन को उसकी आवश्यकता थी किन्तु 14वीं शताब्दी में जैसे-जैसे अंग्रेज़ी का प्रसार होता गया उसमें साहित्य-रचना की भी अभिवृद्धि होती गई। इस शताब्दी के साहित्यकारों में महाकवि जाफ्रे चॉंसर (1340-1400 ई.) विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके साथ विलियम लैंग्लैण्ड और जॉन वाइक्लिफ का भी उल्लेख किया जा सकता है। इनके बाद पन्द्रहवीं शताब्दी में अनेक साहित्यकार हुए जिन्होंने अंग्रेज़ी भाषा की साहित्य-वृद्धि की तथा अंग्रेज़ी भाषा का विकास किया।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पाश्चात्य प्रणाली के बहुत से विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। इस प्रकार एक ओर तो राजकीय क्षेत्र में अंग्रेज़ी का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ता गया और दूसरी ओर अंग्रेज़ी शिक्षा का अधिकाधिक प्रसार होता गया और मैकाले के ऊपर उद्धृत कथन का वह पूर्वांश सत्य में परिणत हो गया जिसमें भारतीय अंग्रेज उत्पन्न करने की आशा की गई थी। आज स्थिति यह आ गई है कि कुछ भारतीय ही देशी भाषाओं की अपेक्षा अंग्रेज़ी का समर्थन करते हैं।

यद्यपि अभी भी बहुत कम भारतीय अंग्रेज़ी जानते हैं, फिर भी अंग्रेज़ी को ही शिक्षा का माध्यम बनाए रखने की बात बार-बार कही जाती है। पाश्चात्य शिक्षा-प्रणाली तथा शासकीय कार्यों के लिए अंग्रेज़ी के प्रयोग का प्रभाव यह हुआ है कि अधिकांश पढ़े-लिखे लोगों को अपनी भाषा की अपेक्षा अंग्रेज़ी का अभ्यास अधिक है तथा उनमें से कुछ तो अपनी भाषा को हीन दृष्टि से भी देखते हैं।

भारतीय नवजागरण में संस्कृत और अंग्रेज़ी के अनुवादों की भूमिका एकसमान रही है। इसमें भारतेंदु ने श्री हर्ष कृत 'रत्नावली' कृष्ण मिश्र के 'प्रबोध चन्द्रोदय' नाटक का 'पाखंड विडम्बन' (1873), कंचन पंडित के 'धनंजय विजय' (1873), महाकवि विशाखदत्त के 'मुद्राराक्षस' (1875), जैसे संस्कृत ग्रंथों और राजशेखर कृत 'सदृक प्राकृत रचना कर्पूर मंजरी (1875) अनुवाद के साथ-साथ शेक्सपीयर के 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का भी अनुवाद किया। लाला सीताराम ने सन् 1885 से 1915 के बीच शेक्सपीयर के ग्यारह नाटकों का अनुवाद किया और साथ ही भवभूति के 'महावीरचरित' (1897), 'उत्तररामचरित' (1897), 'मालती माधव' (1898), कालिदास के 'मेघदूत' (1883), 'कुमार' संभव (1884), 'रघुवंश' (1886), 'मालविकाग्निमित्र' (1898), शूद्रक के 'मृच्छकटिक' (1899) और हर्षदेव के 'नागानंद' (1900) का भी अनुवाद किया। गोल्डस्मिथ, थॉमस ग्रे, लांगफेलो एवं पार्नेल के प्रसिद्ध अनुवादक श्रीधर पाठक कालिदास के 'ऋतुसंहार' के भी अनुवादक हैं। इस प्रकार नवजागरण काल में दो विजातीय भाषाओं के अंतर्विरोधी परंपराओं के बीच हिन्दी की अनूदित साहित्यिक प्रणाली का विकास हुआ।

भक्तकवि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित विश्वविद्यालय क्लासिक महाकाव्य 'रामचरित मानस' (1574) का अनुवाद लगभग सभी भारतीय भाषाओं में ही नहीं हुआ, वरन् अंग्रेज़ी, रूसी, फ्रांसीसी, चीनी आदि अनेक विदेशी भाषाओं में भी हुआ है। कहा जाता है कि यह महाकाव्य अपने समय में इतना महत्त्वपूर्ण हो गया था कि संस्कृत के एक विद्वान रामू द्विवेदी ने सन् 1605 के आसपास 'प्रेम नारायण' नाम से इसका अनुवाद संस्कृत में किया था जिसकी हस्तलिखित प्रति लंदन में रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑफ इंडिया के ग्रंथालय में उपलब्ध है। इसके बाद रघुनंदन शर्मा, बलभद्र, शिवकुमार शुक्ल, सुधाकर द्विवेदी आदि ने भी पद्यानुवाद किए हैं। आधुनिक काल में भारतीय भाषाओं में भी 'मानस' के अनेक अनुवाद हुए हैं। भारत की विभिन्न भाषाओं में मानस का सर्वप्रथम अनुवाद असमिया में मिलता है जो सूर्यकांत विप्र द्वारा सन् 1794 में आहोम के राजा कमलेश्वर सिंह की प्रेरणा से हुआ था। उसके बाद कई अनुवाद हुए किंतु बापचंद महंत तथा केशव महंत का अनुवाद (1981) अच्छा माना जाता है। उड़िया में जगबंधु महापात्र का 'तुलसी रामायण' (1952), रघुनाथ महापात्र का 'रामचरित मानस कथा' (1980), बंगला में हरिनारायण मिश्र (1903) द्वारा अनूदित हुए। कन्नड़ में नरसिंह राव द्वारा अनूदित 'तुलसी दास रामायण' (1935), गुरुनाथ जोशी द्वारा अनूदित 'श्री रामचरित मानस' (1968), तमिल में टी. वेंकट कृष्ण अय्यंगर द्वारा अनूदित 'रामायणम्' (1967), तेलुगु में 'मानस' का अनूदित रूप लाने का सर्वप्रथम श्रेय शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री को जाता है जिन्होंने सन् 1880 में अपना पद्यानुवाद 'रामचरित मानस सरोवरमु' से प्रस्तुत किया। बाद में कई अनुवाद हुए

जिनमें ताकल्ल सांबमूर्ति द्वारा अनूदित 'आंध्र वचन तुलसी रामायणम्' (1955) डी. सत्य नारायण द्वारा अनूदित 'श्री रामचरित मानसमु' (1956) उल्लेखनीय हैं। मलयालम में टी.के. रामन मेमन द्वारा अनूदित 'तुलसी रामायणम्' (1967) प्रकाशित हुआ। गुजराती में गिरजाशंकर मायाशंकर शास्त्री द्वारा अनूदित 'तुलसी कृत रामायण' (1927), शंकर भाई विक्रम भाई पटेल द्वारा 'श्री रामचरित मानस' (1954) प्रस्तुत हुए। मराठी में यादवशंकर जामदार द्वारा 'श्री तुलसी रामायण' (1940), गणेश सदाशिव भोपटकर द्वारा 'मराठी चौपाई वृत्त रामायण' प्रज्ञानंद सरस्वती द्वारा 'रामचरित मानस' (1920), रामचंद्र चिंतामणि श्रीखंडे द्वारा 'सुश्लोक मानस' (1955), एम.जी. घाटे द्वारा मानस सूक्ति सुधा (1961) और नारायण भास्कर द्वारा अनूदित 'संपूर्ण मराठी तुलसी रामायण' (1970) प्रकाशित हुए। पंजाबी में ज्ञानी संत सिंह ने सन् 1984 में मानस का गद्यानुवाद और संत गुरमुख सिंह 'प्रेमी' ने पद्यानुवाद सन् 1917 में किया। बाद में हरपाल सिंह बेदी ने, रत्नसिंह डोंगी ने 1977 में और संत सिंह ने सन् 1987 में मानस का अनुवाद किया। सिंधी में लोकराम पेसूमल डोडेजा ने तुलसी रामायण (1947) नाम से गद्यानुवाद प्रकाशित किया। नेपाली में कुलचंद्र गौतम का अनुवाद (1972) प्रकाशित किया। उर्दू में जगन्नाथ खुश्तर ने सन् 1860 में मानस का संक्षिप्त पद्यात्मक अनुवाद प्रकाशित किया। सुखदेव लाल द्वारा अनूदित 'तुलसी रामायण उर्दू' (1956), हकीम वाइसराय वहमी द्वारा अनूदित 'रामायण मंजूम' (1960) प्रकाशित हुए। यदि हिन्दी और उर्दू को एक भाषा की दो शैलियाँ मानी जाए तो यह एक प्रकार का अंत:भाषिक अनुवाद है। हिन्दी की बोलियों में राम निरंजन

पांडेय ने खड़ी बोली में 'रामायण तुलसी दल' शीर्षक से मानस का अनुवाद सन् 1990 में प्रकाशित किया। मैथिली में रामलोचन शरण ने 'मैथिली श्री रामचरित मानस' (1968) नाम से अनुवाद किया। हरियाणवी मेकं श्री रामेश्वर दयाल शास्त्री ने मानस का पद्यानुवाद प्रकाशित किया। ये अनुवाद भी अंतः भाषिक अनुवाद अथवा अन्वयंतरण कहलाते हैं।

अंग्रेज़ी में अदालत खाँ (1874), एस.एफ. ग्राउज़ (1883), डगलस पी. हिल (1971), एस.पी. बहादुर (1971) रामचंद्र प्रसाद (1988) और सी.एल. ढोंडी (1991) ने 'मानस' के जो अनुवाद किए हैं उनमें अधिकतर अनुवाद गद्य में हैं और कुछ पद्य में कुछ अनुवाद पूर्ण हैं और कुछ खंड ए.जी. एटकिन्स ने (1954) मानस का अनुवाद संपूर्ण पद्य में किया। अंग्रेज़ी अनुवादों में एटकिन्स का अनुवाद अन्य अनुवादों की अपेक्षा श्रेष्ठ और तुलसी के अधिक निकट जान पड़ता है। अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य विदेशी भाषाओं में जो अनुवाद हुए, वे मानस के कालजयी और समूचे विश्व की अनुभूति के प्रमाण हैं। रूसी भाषा में अलेक्सेई पेत्रेविच बरान्नि कोव ने सन् 1948 में 'तुलसीदास रामायण' नाम से जो पद्यानुवाद प्रस्तुत किया। वह शब्दानुवाद होते हुए भी मानस के काव्यार्थ को बनाए हुए हैं। इसलिए रूसी पाठकों की सुविधा के लिए उन्हें भारतीय दर्शन, धर्म, संस्कृति की अनेक संकल्पनाओं और पौराणिक संदर्भों की व्याख्या करनी पड़ी है। इन व्याख्यात्मक पाद टिप्पणियों के निर्माण में उन्हें उनके सुपुत्र प्यात्र अलेक्सेयेविच बरान्निकोव ने भी सहायता की थी। चीनी भाषा में 'मानस' का छंदबद्ध पद्यानुवाद जिन-दिग-हान ने 1988 में किया था। यह चीनी अनुवाद चीनी भाषियों में काफी

लोकप्रिय हुआ। जापानी में 'मानस' का प्रथम अनुवाद 1991 में उन इकेदा ने 'भगवान राम के चरित का सरोवर' नाम से किया जो मुख्यत: शाब्दिक अनुवाद है। भोलानाथ नादान ने 'समर: अल् हयात्' (जीवन का फल या उपलब्धि) नाम से फ़ारसी अनुवाद किया था। इसकी हस्तलिखित पांडुलिपि अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के मौलाना आजाद ग्रंथालय में उपलब्ध है। माना जाता है कि इस अनुवाद का काल 1195-1203 हिजरी (सन् 1781-1788) के मध्य रहा है। अनुवाद के अंतर्गत गद्य में विभिन्न मार्मिक प्रसंगों और चरित्र का संवेदनशील और आकर्षक वर्णन है। अंत में कुछ शेर भी दिए गए हैं जिसमें ईश्वर की कृपा से शुभ वर्ष में शुभ कार्य करने का संकेत किया गया है। फ़ारसी में और भी अनेक अनुवाद हुए जिनमें शेख सांडदुल्लाह मसीहा पानीपती का 1050 हिजरी (सन् 1640) में अनूदित 'राम सीता' महत्त्वपूर्ण है। ये भी उल्लेखनीय है कि गार्सा द तासी (1851) और एल.पी. टेसीटोरी (1911-12) ने भी मानस के कुछ अंशों को अनुवाद फ्रांसीसी भाषा में किया है।

''हिन्दी के आधुनिक काल में लेखकों का ध्यान जीवनचरितों की ओर भी गया। प्रारंभ में जिन नायक-नायिकाओं के जीवन-चरित लिखे गए, उनमें रानी दुर्गावती, रानी लक्ष्मीबाई, जवाहर बाई, कर्मदेवी, वीरधात्री पन्ना, वीर बालक और वीर नारी, राजकुमार चंड, महाराज पृथ्वीराज, बादलचंद्र, रायमल सिख वीर रणजीत सिंह, हमीर, महाराणा प्रताप सिंह, छत्रपति शिवाजी आदि चौदह वीर कहानियाँ प्रमुख हैं। भारतेन्दु जी ने इसका प्रारंभ एक साहित्यिक विधा के रूप में किया और इनका अनुवाद भी कराया। जीवन चरित के अनुवादों का सिलसिला काशीप्रसाद

खत्री से प्रारंभ होता है। उन्होंने ऐलिजाबेथ स्टर्लिंग की रचना का 'यूरोपियन पतिव्रता और धर्मशील स्त्रियों के जीवन चरित्र' शीर्षक से 1884 ई. में अनुवाद प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् राधाकृष्ण दास और हरिऔंध ने बंगला से 'आर्यचरितामृत' एवं 'चरितावली' का क्रमशः 1884 ई. में 1889 में हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया। सन् 1900 में केशवप्रसाद सिंह ने लाला लाजपत राय की मूल रूप में उर्दू में लिखी 'ग्विसेप मैजिनी का जीवन चरित्र' का अनुवाद किया। इसमें चरित नायक के विचारों का आलोचनात्मक विवेचन भी है। जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ने बंकिम चंद्र चटर्जी की सुविख्यात 'कृष्ण चरित्र' का अनुवाद सन् 1913 में प्रस्तुत किया। बंगला से बंकिमचंद्र लाहिड़ी के 'सम्राट अकबर' का अनुवाद गुलजारी लाल चतुर्वेदी ने सन् 1919 ई. में तथा वीरेंद्र बाजीराव का अनुवाद वामनाचार्य गिरि ने 1907 ई. में प्रस्तुत किया। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी में अनूदित जीवनचरितों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है।

हिन्दी में अनूदित प्रथम आत्मकथा महर्षि दयानंद की है। दयानंद सरस्वती द्वारा लिखी आत्मकथा हिन्दी से अंग्रेज़ी में, अंग्रेज़ी से उर्दू तथा उर्दू से हिन्दी में अनूदित हुई। 1904 में मुंशी दयाराम ने उर्दू से हिन्दी में, 1912 में देवेंद्र मुखोपाध्याय ने अंग्रेज़ी से हिन्दी में इसका अनुवाद किया। 1915 में अंग्रेज़ी में के टी. वाशिंगटन की आत्मकथा 'अप फ्राम स्लेवरी' का अनुवाद पंडित लक्ष्मीनारायाण गर्दे द्वारा 'आत्मोद्धार' नाम से हुआ। यद्यपि इसका अनुवाद पहले अंग्रेज़ी से मराठी में हुआ, बाद में मराठी के हिन्दी में। गुजराती में लिखी गई महात्मा गांधी की आत्मकथा हरिभाऊ उपाध्याय ने 'सत्य के प्रयोग' (1927) शीर्षक से अनूदित

किया। रवींद्रनाथ ठाकुर की आत्मकथा को सूरजमल जैन ने 'जीवन स्मृति' नाम से अनूदित किया। रवींद्र की आत्मकथा को धन्य कुमार जैन ने 1917 में 'मेरी आत्मकथा' नाम से पुनः अनूदित किया। जवाहर लाल नेहरू की आत्मकथा 'माई स्टोरी' का अनुवाद हरिभाऊ उपाध्याय ने 'मेरी कहानी' शीर्षक से किया। गिरिशचंद्र जोशी द्वारा अनूदित नेताजी सुभाषचंद्र बोस की आत्मकथा 'तरुण के स्वप्न' शीर्षक से अनूदित हुई। शचींद्रनाथ सान्याल की बंग्ला भाषा में लिखी आत्मकथा हिन्दी में 'बंदी जीवन' (1938) नाम से अनूदित हुई। डॉ. राधाकृष्णन की आत्मकथा को शालिग्राम ने 'सत्य की खोज' नाम से अनूदित किया।'"[5]

चेकोस्लोवाकिया के शहीद जूलियस फ्यूचिक की आत्मकथा का अनुवाद नेमिचंद्र ने 'फाँसी के तख्ते से' किया और काका कालेलकर की आत्मकथा का अनुवाद खुशहाल सिंह चौहान ने 'स्मरण यात्रा' (1953) नाम से किया। कालेलकर जी की आत्मकथा आत्म-विश्लेषण तथा गांधीवाद चिंतन से ओत-प्रोत है। विनायक दामोदर सावरकर की आत्मकथा का पहला अनुवाद (1956) में 'काला पानी' नाम से तथा दूसरा अनुवाद 'आजन्म कारावास' अर्थात् अंडमान का प्रिय प्रवास शीर्षक से (1969) में प्रकाशित हुआ। मुगल सम्राट जहाँगीर की फ़ारसी में लिखी आत्मकथा का हिन्दी में ब्रजरत्नदास ने 'जहाँगीरनामा' अथवा 'जहाँगीर की आत्मकथा' (1957) नाम से अनुवाद किया। नयनतारा सहगल की अंग्रेज़ी में रचित आत्मकथा का हिन्दी अनुवाद मुकुंदीलाल श्रीवास्तव ने 'मेरे बचपन की कहानी' से किया। त्रैलोक्यनाथ चतुर्वेदी की आत्मकथा का हिन्दी अनुवाद महादेव साहा ने

---

[5] अनुवाद कला के मूल स्रोत, एन.ई. विश्वनाथन अय्यर, पृ. 33

'जेल में तीस वर्ष' और वेद मेहता की आत्मकथा के डॉ. शिवकुमार शर्मा ने 'मेरा जीवन संघर्ष' (1957) और अनंत वासुदेव सहस्रबुद्धे की मराठी में लिखित आत्मकथा का अनुवाद बी.एन. आत्रेय ने 'मेरा जीवन विकास' (1958) से नाम से अनूदित किया। बीसवीं शताब्दी के छठे दशक में लिखी गई आत्मकथाओं में दीवान सिंह मफ्तून की उर्दू में रचित 'नाकाबिले फरामोश' का अनुवाद जगन्नाथ प्रभाकर ने 'त्रिवेणी' नाम से और मौलाना अबुल कलाम आजाद की आत्मकथा का अनुवाद महेंद्र चतुर्वेदी ने 'आजादी की कहानी' (1965) नाम से किया।

बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक में विदेशी लेखकों की आत्मकथाएँ काफी प्रकाशित हुईं। क्यामें एंक्रमा को 'घाना का गांधी' माना जाता है, जिनकी आत्मकथा का अनुवाद श्यामू संन्यासी ने 'अफ्रीका जग्गा' नाम से किया। प्रसिद्ध चीनी क्रांतिकारी यू.टी. हेसू की आत्मकथा 'अदृश्य संघर्ष' (1964) प्रकाशित हुई। एंथनी सिलवेस्टर कृत 'लिविंग विद कम्यूनिज्म' का अनुवाद विजयश्री भारद्वाज ने 'साम्यवाद के मेरे अनुभव' नाम से किया। तुर्की में लिखी गई जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर की आत्मकथा 'तजुक-ए-बबरी' का अनुवाद अब्दुर्रहीम खानखाना ने 1590 में किया था। इसका हिन्दी में अनुवाद 1971 में श्री मथुरा लाल शर्मा ने किया। यह आत्मकथा बाबरकालीन भारत का एक प्रामाणिक दस्तावेज है।

अरविंद घोष की आत्मकथा का अनुवाद जगन्नाथ ने 'अपने विषय में' और उर्दू के सुप्रसिद्ध कवि जोश मलीहावादी की आत्मकथा को हंसराज रहबर ने 'यादों की बारात' के नाम से अनूदित किया। बी.के. माधवन कुट्टी की आत्मकथा का अनुवाद ए. गोपीनाथ ने 'खतरा मेरा हमराही' (1976) नामक शीर्षक से किया।

आत्मकथा में आत्मविश्लेषण के स्थान पर रहस्य तथा रोमांचक वर्णनों का आधिक्य है। पंजाबी साहित्यकार अमृता प्रीतम की आत्मकथा का अनुवाद बटुक शंकर भटनागर ने 'रसीदी टिकट' (1977) नाम से किया। इस रचना में आत्मकथा में प्रस्तुत आत्मसत्य बेझिझक मिलते हैं। कमलादास की आत्मकथा का अनुवाद सुदर्शन चोपड़ा ने 'मेरी कहानी' नाम से किया। इस आत्मकथा के द्वारा पश्चिमी सभ्यता में रंगे संगत समाज का वास्तविक रूप उद्घाटित हुआ है। लक्ष्मीनाथ बेजबरूआ की बंगला में लिखित आत्मकथा को हंस कुमार तिवारी ने 'मेरी स्मृतियाँ' (1979) नाम से अनूदित किया। प्रसिद्ध भारतीय धावक मिल्खा सिंह की आत्मकथा पंजाबी भाषा से हिन्दी में अरुण सरीन ने 'फ्लाइंग सिक्ख मिल्खा सिंह' नाम से अनूदित किया। प्रसिद्ध पंजाबी कथाकार कर्तार सिंह दुग्गल की आत्मकथा 'स्मृतियों के आइने में' नाम से अनूदित हुई। नाटककार एवं रंगकर्मी बलवंत गार्गी की अंग्रेज़ी में रचित आत्मकथा का हिन्दी अनुवाद 'नंगी धूप' (1980) नाम से प्रकाशित हुआ। फिल्म अभिनेत्री दुर्गा खोटे की मराठी में लिखी आत्मकथा को कुसुम ताँबे ने 'मैं दुर्गा खोटे' नाम से अनूदित किया। इसी प्रकार सत्यजीत रे की आत्मकथा का अनुवाद संदीप मुखोपाध्याय ने 'जब मैं छोटा था' नाम से किया। इसमें आत्मकथाकार ने अपने बाल्य जीवन को जीवंत रूप में चित्रित किया है। कन्नड़ साहित्यकार शिवराम कारंत की आत्मकथा को बी.आर. नारायण ने 'पगले मन के दस चेहरे' नाम से 1985 में अनूदित किया। कश्मीर के पूर्व राजा डॉ. कर्ण सिंह की आत्मकथा को हिन्दी में रामेश्वर प्रसाद मालवीय ने 'युवराज : बदलते कश्मीर की कहानी' (1985) नाम से अनूदित किया। शंकरराव खैतरा की

आत्मकथा को डॉ. केशव प्रथमवीर ने 'तरल-अंतराल' (1987) नाम से अनूदित किया। यह आत्मकथा समकालीन भारतीय समाज का एक दस्तावेज कही जा सकती है। इसमें समाज में व्याप्त भयंकर विषमता, दरिद्रता, पीड़ा एवं शोषण का भी सटीक चित्रण मिलता है। मराठी के दलित साहित्यकार शरण कुमार लिंबाले की आत्मकथा 'अक्कर माशी' और प्र.ई. सोनकबिले की आत्मकथा 'आठवणीचे पक्षी' का 'यादों के पंछी' नाम से अनुवाद सूर्यनारायण मिश्रा ने किया।

अनुवाद की और एक प्रवृत्ति है। इसे अंग्रेज़ी में 'अडाप्टेशन' कहा जाता है। हिन्दी में 'रूपांतरण' कहें या 'संक्षिप्त भावान्तरण'। संस्कृत साहित्य के ही युग में यह प्रणाली लोकप्रिय हो चली थी। इस साहित्य में रामायण, महाभारत और भागवत सब से लोकप्रिय ग्रंथ है। इन तीनों में कई मुख्य कथाएँ और उपकथाएँ हैं। अनेक प्रतिभाशील एवं सामान्य कोटि के दोनों प्रकार के साहित्यकारों ने उन कथाओं को अपनी प्रतिभा से नये कलेवर में प्रस्तुत किया। ऐसी रचनाओं में नई उद्‌भावना, नई व्याख्या आदि की गुंजाइश रहती थी। इसी प्रविधि से जो प्रशस्त रचनाएं लिखी गईं उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं:-

जानकीपरिणय, जानकीहरण, उत्तररामचरित, अनर्घराघव, प्रतिमानाटक, हनुमन्नाटक आदि नाटक। महाभारत के ही एक पर्व से ली हुई शकुंतला कथा को लेकर कालिदास ने अभिज्ञानशाकुंतल नाटक लिखा था। महाभारत से ही ली हुई नल-दमयंती की कथा आगे नैषध, नलोपाख्यान आदि ग्रंथों में पल्लवित हो गई। भागवत की श्री कृष्णकथा को लेकर कितनी ही रचनाएँ की गईं। जयदेव का गीतगोविन्द अन्यतम उदाहरण है।

प्राकृत और अपभ्रंश के युगों में अनुवाद अत्यधिक प्रचलित था। प्राकृत को पंडित लोग संस्कृतवत समान मानते थे। प्राकृत रचनाएँ संस्कृत में भी अनूदित की जाती थी।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में कोई ऐसी नहीं जिसमें अनुवाद नहीं हुआ। दक्षिण की प्राचीनतम भाषा तमिल में भी अनुवाद को साहित्य के विकास की अन्यतम विधा स्वीकार किया था। तमिल के प्रथम व्याकरण तोलकप्पियम में अनूदित ग्रंथों को 'वषिनूल' संज्ञा दी गई है। संस्कृत के कई ग्रंथों का सीधा अनुवाद और भवान्तरण तमिल में किया गया।

तमिल में जैनकथा, बौद्धकथा, महाभारत कथा आदि पर आधारित जो रचनाएँ लिखी गईं उनका स्वरूप किसी न किसी रूप में अनुवाद का ही है। सभी भारतीय भाषाएँ प्राचीन संस्कृत और प्राकृत से अनुवाद करने में समान मात्रा में रुचि लेती आई हैं। आधुनिक भारतीय भाषाओं के प्राचीन वाङ्मय का अध्ययन करने से पता चलता है कि अधिकांश भाषाओं ने रामायण, महाभारत, भागवत आदि का रूपान्तरण अपने यहां किया है। इन तीन ग्रंथों के अलावा कालिदास के शाकुंतल–मेघसंदेश, जयदेव का गीतगोविंद एवं विष्णुशर्मा का पंचतंत्र तब से अधिक मात्रा में अनूदित संस्कृत ग्रंथ कहला सकते हैं। पंचतंत्र का तो विश्वव्यापी स्तर पर अरबी, चीनी आदि न जाने कितनी भाषाओं में अनुवाद हुआ था।

फ़ारसी और अरबी का भारत से संबंध रहा था। आध्यात्मिक क्षेत्र में यहां फ़ारसी सूफ़ीवाद था ही। राजनीतिक क्षेत्र में सदियों तक फ़ारसी का प्रभाव छाया था। इस प्रभाव से अधिकांश भारतीय भाषाओं के शब्दकोश में फ़ारसी शब्द घुल

मिल गये थे। साहित्य के क्षेत्र में तो फ़ारसी के गुलिस्ताँ, शाहनामा आदि का अनुवाद होता रहा। इसी माध्यम से सुहराबरुस्तम, लैला-मजनूँ आदि की कथाएँ भारतीय भाषाओं में आ सकीं। ये कथाएँ यहाँ इतनी लोकप्रिय हो गई हैं कि इनको विदशेी कहने पर भी हमारा मन इन्हें विदेशी मानना नहीं चाहता।

भारतीय भाषाओं में भाषान्तरण-रूपी अनुवाद का तीसरा दौर अंग्रेज़ी के संपर्क के बाद शुरू हुआ। अंग्रेज़ी साहित्य पश्चिम की संस्कृति, जीवन, चिंतन आदि का वाहक था। उसे हमने शिक्षाक्रम में स्थान दिया और गंभीरता से पढ़ने लगे। मुद्रण के चमत्कार से अंग्रेज़ी ग्रंथ धड़ा-धड़ निकलते रहे। उसमें उपन्यास, कहानी, नाटक आदि शाखाओं में नई-नई रचनाएँ निकलीं जो भारतीय साहित्य की प्रकृति से भिन्न प्रकृति की थीं। अतएव इनका अध्ययन विशेष जिज्ञासा और कौतूहल से होने लगा। सृजनशील साहित्यप्रेमी उन नवीन रुचि के ग्रंथों के अनुवाद में रुचि लेने लगे। रोमांचक कथाएँ और उपन्यास अधिक प्रेम से अनूदित किये गये। 'मिस्टरीस ऑफ कोर्ट आफ लन्दन' जैसे ग्रंथ इसके उदाहरण हैं। इस धारा के अनुवाद में एक सरस प्रयोग भी हुआ था। भारतीय अनुवादक विदेशी कथापात्रों के नामों का भारतीयकरण कुछ कुछ करते थे। उपन्यासों के अलावा शेक्सपीयर के नाटक, मिल्टन का पैरडाइस लॉस्ट, ईसप्त फेबिल्स आदि खूब अनूदित हुए। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि इस प्रक्रिया से केवल अंग्रेज़ी में अनूदित अन्य विदेशी भाषाओं की रचनाएँ भी भारतीय भाषाओं में अनूदित होने लगी।

फ्रांसीसी की श्रेष्ठ रचना 'ले मिराबिल', 'स्टोरीस ऑफ अरेबियन नाइट्स', 'ग्रिस्म फेयरी टेल्स' आदि इस कोटि की हैं। यद्यपि अरबी, भारत में पहले ही

आई थी और फ़ारसी भी सुपरिचित थी, तो भी विचित्र बात है कि इन दोनों भाषाओं की कई रचनाएं अंग्रेज़ी अनुवाद के माध्यम से है। ज्यादातर भारतीय भाषाओं में अनूदित होती थीं। इस अनुवाद धारा ने हमारी सभी भाषाओं की साहित्यिक गतिविधियों को नई दिशाओं में मोड़ दिया।

हमारे देश में अनुवाद की परंपरा का अगला मोड़ भारतीय वाङ्मय के नवोत्थान से प्रेरणा पाता है। कुछ तो पश्चिम के संपर्क से और कुछ अपने प्रान्त की सहज प्रगति से-भारत में दो तीन प्रान्त दूसरों से अधिक सजग और साहित्यिक संपत्ति में अधिक धनी निकले। इनमें पहला स्थान बंगाल का है, दूसरा महाराष्ट्र का और तीसरा मद्रास का (तमिलनाड)। हिन्दी में उच्च कोटि के कई कवि, कथाकार और नाटककार हुए। आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों में कई ने इनसे प्रेरणा ग्रहण की। वे इनकी कृतियों का अनुवाद करते चले। बंगला के कवियों में माइकेल मधुसूदन दत्त, महाकवि रवींद्रनाथ टैगोर आदि प्रमुख निकले। बंकिमचंद्र, शरद्चन्द्र आदि का कथासाहित्य अन्य भारतीय भाषाओं में कई विद्वानों ने अनेक बार अनूदित किया गया। गिरीशचंद्र घोष, द्विजेंद्रलाल राय आदि नाटककारों की रचनाएं अन्य भाषाओं में अनूदित की गईं। मराठी की रचनाओं में बाल गंगाधर तिलक के गीता रहस्य जैसे ग्रंथ अन्य भाषाओं में अनूदित होते चले।

1.3 टेमसुला आओ का जीवनवृत्त एवं उनका रचना संसार

''टेमसुला आओ पूर्वोत्तर के नागा जनजातीय समुदाय से आती हैं। वर्तमान में भारत के नागालैंड राज्य में रहती हैं। उनका जन्म अक्तूबर सन् 1945 में जोरहाट के असम में हुआ था। उन्होंने गोलाघाट, असम से मैट्रीकुलेशन के उपरांत

फज़ल अली महाविद्यालय, नागालैंड से स्नातक, परास्नातक, गुवाहाटी विश्वविद्यालय से तथा नॉर्थ ईस्ट हिल यूनिवर्सिटी (NEHU) से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। सन् 1985-86 तक वे मीनीसोटा विश्वविद्यालय में फुलब्राइट फैलो रहीं। वहाँ लंबे अरसे तक उन्होंने भाषा के अध्ययन व विश्लेषण पर कार्य किया। विदेश प्रवास के दौरान मूल अमरीकियों के संपर्क में आई और उनकी संस्कृति, विरासत एवं विशेष रूप से उनकी मौखिक व लिखित परंपरा पर गहन अध्ययन व कार्य किया। इससे उन्हें अपने समुदाय 'नागा' की मौखिक परंपरा को अभिलिखित व अनुरक्षित करने की प्रेरणा मिली।

मिनीसोटा विश्वविद्यालय से लौटने के उपरांत 12 वर्षों तक उन्होंने नागा समुदाय के संप्रेषण और उनके मिथक, आंचलिक कथाओं, धर्म, अनुष्ठान, नियम, पद्धति परंपरा, विश्वास, मान्यता आदि पर महत्वपूर्ण संग्रहण किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने टिचिंग ऑफ इंगलिश में सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ इंग्लिश एंड फॉरेन लैंग्वेज, हैदराबाद से पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा भी प्राप्त किया है।

शैक्षिक जीवन से इतर व्यावसायिक जीवन में भी उनकी उपलब्धियां कम नहीं रहीं। उन्होंने सन् 1992 से 1997 तक NEHU से प्रतिनियुक्ति के आधार पर नॉर्थ ईस्ट जोन कल्चरल सेंटर, दीमापुर में निदेशक के पद पर अपनी सेवायें दी। दूसरी तरफ कुछ समय के लिए NEHU में अंग्रेज़ी विभाग के कला व शिक्षा विभाग में दो वर्षों तक हेड रही और बाद में चलकर डीन का पद भी संभाला।

विश्वविद्यालय में अपने सेवाकाल के दौरान उन्होंने एम.फिल. और पीएच.डी शोधार्थियों को उनके शोधकार्य में अपना मार्गदर्शन दिया और देश के अन्य

विश्वविद्यालयों में बाह्य विशेषज्ञ के तौर पर अपनी सक्रिय भूमिका निभाई। वे मणिपुर केन्द्रिय विश्वविद्यालय की हुमैनिटिज और एजुकेशन तथा झारखंड के रांची विश्वविद्यालय में भाषा स्कूल की विजिटर नोमिनी रह चुकी है।

अब तक उनकी पांच कविता-संग्रह और दो किताबें प्रकाशित हो चुकी है। जिसमें एक 'हेनरी जेम्स' और एक किताब उनकी अपनी संस्कृति 'ओ नागा ओरल ट्रैडिशन' पर आधारित है। दो लघु कहानी संग्रह 'दिज हिल्स कॉल्ड होम : स्टोरिज फ्राम ए वार जोन, 2006 और लाबुरनम फॉर माई हेड, 2009 भी खासी चर्चित रही। इसके अलावा नागा संस्कृति पर आधारित निबंध पुस्तक : वन्स अपॉन ए लाइफ : बर्नट करी और ब्लडी रैग्स, 2013 और ऑन बीइंग ए नागा 2014 में भी उन्होंने अपनी गंभीर लेखनी का जादू चलाया।

आओ-नागा ओरल ट्रैडिशन का दूसरा संस्करण वर्ष 2012 में प्रकाशित हुआ और पांच कविता पुस्तक संग्रह वर्ष 2013 में 'बुक ऑफ सांग्स' एक खंड में प्रकाशित हुआ है। लोकसंस्कृति और लोकपरंपरा पर आधारित उनकी अनेक कवितायें, लघु कथायें और निबंध देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होती रही है।''[6]

उनकी पहली लघु कथा संग्रह की एक कहानी 'द लास्ट सौंग' का जर्मन भाषा में अनुवाद व प्रकाशन किया गया है। इस पुस्तक का अनुवाद कन्नड़ में भी किया गया है। जिसे वर्ष 2010 में प्रकाशित किया गया। उनकी कविता संग्रह 'बुक ऑफ सौंग्स की कुछ कविताओं का असमिया में भी अनुवाद किया गया है जो अभी हाल ही में प्रकाशित हुआ है।

---

[6] स्रोत: डब्ल्यू डब्ल्यू डॉट गूगल.कॉम

इसके अतिरिक्त 'ग्रीनवुड इनसाइक्लोपीडिया ऑफ वर्ल्ड फोल्कलोर एंड फोल्कलाइफ, भाग 2, में नागालैंड की लोकसंस्कृति पर आधारित उनकी कहानियों को स्थान मिलना उनकी एक और महत्त्वपूर्ण उपलब्धि रही। उनकी कुछ कहानियों और कविताओं को नागालैंड विश्वविद्यालय के एमफिल व पीएच.डी. विषय में डाली गयी है। हैदराबाद और तिरूपति विश्वविद्यालयों ने स्नातक और परास्तनातक स्तर के पाठ्यक्रम में उनकी रचनाओं को अध्ययन का विषय बनाया है। विभिन्न विश्वविद्यालयों के अनेक शोधार्थियों ने उनकी कहानियों और कविताओं को अपने शोध का विषय बनाया है।

उनकी पुस्तक 'द आओ नागा ओरल ट्रैडिशन' को संघर्षशतक में शामिल किया गया है। साहित्य के क्षेत्र में उन्हें निम्नलिखित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है–

1. वर्ष 2007 में साहित्य व भाषा के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री सम्मान।
2. वर्ष 2007 में साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान के लिए नागालैंड के राज्यपाल द्वारा पुरस्कार सम्मान।
3. वर्ष 2013 में अंग्रेज़ी के लिए साहित्य अकादमी अवार्ड।
4. वर्ष 2015 में यशवंतराव चौहान, महाराष्ट्र व रजुला विश्वविद्यालय, नासिक द्वारा कुसुमंगराज नेशनल अवार्ड।

वर्तमान में वे एक उपन्यास व एक कविता संग्रह को अंतिम रूप देने में वे पूर्णरूपेण संलग्न हैं। संप्रति नागालैंड स्टेट कमीशन फॉर वूमन, कोहिमा की चेयरपर्शन है।

चूंकि टेमसुला आओ उत्तर-पूर्व राज्य से है इसलिए वे वहाँ की समस्याओं, विशेषकर प्रांतीय समस्याओं से बखूबी परिचित है। अभी तक अंग्रेज़ी भाषा में उनकी दो लघु कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुकी है। पूर्व के अपने कहानी संग्रह में उन्होंने नागा विद्रोह की भयावहता को पारदर्शी व सूक्ष्म रूप में व्यक्त किया है। प्रस्तुत लघु कहानी संग्रह में भी उन्होंने अपनी उसी लेखन परंपरा को आगे बढ़ाया है। सभी कहानियों में संवेदना और उद्‌वोधक का सम्पुट है जिसे बड़ी ही सशक्तता के साथ व्यक्त किया गया है।

प्रस्तुत कहानी संग्रह की शीर्षक कहानी ''लाबुरनम फॉर माई हेड'' विशेष रूप से पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती है जिसमें एक विधवा स्त्री के ''लाबुरनम'' (अमलतास) के प्रति विशेष आकर्षण और अपरिमित लगाव को प्रदर्शित किया गया है। उसका यह अमलतास प्रेम इस कदर गहरा है कि मृत्युपरांत भी वह अपनी कब्र पर संगमरमर की बजाय अमलतास उगाने की ख़्वाहिश व्यक्त करती है। यहां 'अमलतास' अमरत्व का पर्याय है। मानवीय पवृत्ति की अमरत्व की चाह को जीवन के विभिन्न रंगों व आयामों के जरिए व्यापक फलक पर संवदेनात्मक ढंग से उकेरा गया है।

द्वितीय अध्याय

टेमसुला आओ के अंग्रेज़ी कहानी संग्रह 'लाबुरनम फॉर माई हेड' का हिन्दी अनुवाद

2.1 लाबुरनम फॉर माई हेड
2.2 डेथ ऑफ हंटर
2.3 द ब्वाय हू सोल्ड एन एयर फिल्ड
2.4 द लेटर
2.5 थ्री वूमेन
2.6 ए सिम्पल क्वैश्चन
2.7 सौन्नी
2.8 फ्लाइट

अध्याय-दो

टेमसुला आओ की अंग्रेज़ी कहानी संग्रह ''लाबुरनम फॉर माई हेड'' का हिन्दी अनुवाद

अनुवाद का सामान्य अर्थ है- एक भाषा में व्यक्त विचारों अथवा तात्पर्य को दूसरी भाषा में अभिव्यक्त करना या रूपांतरित करना। सफल अनुवाद केवल शब्दों और वाक्यों का रूपांतरण नहीं होता, अनुवादक मूल के विचारों, संवेदना-अनुभूति को आत्मसात कर उन्हें नए रूप में प्रस्तुत करता है। वह मूल की पुनः सृष्टि होता है।

कहानी-उपन्यास में प्रायः स्थूल घटनाओं, मूर्त्त भावों, पात्रों के कार्य-कलाप, उनकी वेशभूषा, परिवेश आदि का चित्रण होता है और ये स्थूल है। अतः इनके अनुवाद में कठिनाई नहीं होता। अपनी संरचना में उपन्यास-कहानी पर्याप्त स्थलों पर जहाँ वर्णनात्मक होते हैं वहाँ अनुवादक को सतर्क वर्णनकार का दायित्व तो निभाना होता ही हैं, फिर भी यह कार्य बहुत कठिन नहीं है।

मानव सभ्यता के विकास में मानव संप्रेषण की संकल्पना का प्रादुर्भाव हुआ। इस संप्रेषण के मूल में अनुवाद की संकल्पना भी उभर कर आई। अनुवाद की संकल्पना को स्पष्ट करने के लिए प्राचीनकाल से ही चिंतन-मनन हुआ। इसमें भाषा की विभिन्न ईकाइयों-ध्वनि, रूप, शब्द या पद, पदबंध, वाक्य के साथ-साथ प्रोक्ति और पाठ पर भी ध्यान दिया गया। प्रोक्ति और पाठ में भाषा के व्याकरणिक विवेचन के साथ-साथ अर्थ को अपने चिंतन का विषय बनाया गया है।

टेमसुला 'आओ' के प्रस्तुत कहानी-संग्रह में कुल आठ कहानियों का समावेश किया गया है। सभी आठ कहानियां कथ्य, शिल्प और शैली स्तर पर अलग-अलग है। रचनाकार ने अपनी सृजन-प्रक्रिया में अवलोकन, अनुभव,

चिंतन-मनन और सर्जनात्मक अभिव्यक्ति का बखूबी इस्तेमाल किया है। अनुवाद में भी सृजनशीलता और संवेदनात्मकता की नितांत अपेक्षा रहती है, क्योंकि इस असंभव कार्य को अधिक से अधिक संभव बनाने के लिए एक अनुवादक के तौर कठिन दायित्व का निर्वाह करते हुए दोहरा प्रयास करना पड़ा। इसे मूल का रूपांतरण भी कह सकते हैं या पुनर्नवीकरण भी। संग्रह की पहली कहानी 'लाबुरनम फॉर माई हेड' (अनुवाद- 'अमलतास का सिरहाना') प्रेम, आकर्षण और जीजिविषा से ओतप्रोत यह कहानी आरंभ से अंत तक पाठकों के हृदय में अपनी सशक्त उपस्थिति बनाए रखने में कामयाब रहती है। जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती है अमलतास के प्रति मुख्य पात्र लेंटिना का मोह और भी गहरा होता जाता है। संघर्ष, प्रेम विरोध स्वीकृति और प्रतिवाद-प्रेमालाप की यह कहानी पाठकों के हृदय में गहराई से उतरती है और अनायास ही वे लेंटिना के प्रति सहानुभूति से भर उठते हैं। प्रस्तुत संग्रह की प्रत्येक कहानी का अनुवाद करते समय उन्हें अनुवाद सिद्धांतों की अलग-अलग कसौटी पर उसे कसा गया है तत्पश्चात् आवश्यकतानुसार समतुल्यता के आधार पर संबंधित सिद्धांत विशेष के परिपेक्ष्य में उसकी व्याख्या की गई है। प्रस्तुत कहानी में अनुवाद को संरचनात्मक सिद्धांत के आधार पर भाषांतरित किया गया है। यह स्वभाविक है कि भाषा की संरचना के भिन्न-भिन्न प्रारूपों के अध्ययन से इनमें न्यूनाधिक भेद मिल जाते हैं। इस आधार पर संबद्ध भाषाओं का विश्लेषण कोटि परिवर्तन के आधार पर किया गया है। इस प्रकार लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुकूल तकनीक अपनाई गई है। कई बार उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया गया है और कई बार मूल पाठ के भाव को लक्ष्य भाषा में कुछ ही शब्दों में संप्रेषित कर दिया गया है।

दूसरी कहानी 'डेथ ऑफ ए हंटर'- (अनुवाद : शिकारी की मौत) है। यह कहानी एक शिकारी और उसकी पत्नी टैगचेंतला की है। किस तरह एक माहिर शिकारी परिस्थितियों से हार मानकर अंततः अपने हूनर को हमेशा-हमेशा के लिए दफना देता है, यह कहानी यही दास्ता बयाँ करती है। किसी जमाने में माहिर शिकारी, इमचानोक अपने साहस, बल, बुद्धि और तेज-तर्रार शिकार कौशल के लिए समूचे इलाके में प्रसिद्ध था पर भाग्य की कुछ ऐसी मार पड़ी की, हमेशा-हमेशा के लिए उसने अपने इस पेशे से तौबा कर लिया।

टैंगचेतला रूहानी ताकतों में यकीन करने वाली एक रूढ़िवादी स्त्री थी जो तंत्र-मंत्र और झाड़-फूक के सहारे अपने पति इमचानोक को अदृश्य शक्तियों का भय दिखाकर उसे शिकार छोड़ने पर मजबूर कर देती है और अंततः वह इमचानोक के मन में भी बुरे साये का भय पैदा करने में सफल हो जाती है और इस तरह डरा, सहमता इमचानोक अपने शिकारी बंदूक और शिकार के अपने पेशे को हमेशा-हमेशा के लिए अलविदा कह देता है।

अनुवाद करते समय पाठ में अर्थपरक सिद्धांत का सहारा लिया गया है। शब्द, पदबंध अथवा वाक्य स्तर पर पाठ में अर्थ प्राप्ति की पूरी कोशिश की गई है। इस सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य में अंतर-वाक्य संरचना और उसकी संसक्ति तथा अर्थ-संगति से बोधगम्यता में वृद्धि हुई है। कथ्य में स्पष्टता और सहजता आ गई है। सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्व भी अर्थ को संदर्भानुकूल व्यक्त करने में सहायक साबित हुए हैं।

संग्रह की तीसरी कहानी 'द बॉय हू सोल्ड एन एयरफील्ड' (अनुवाद : 'हवाई पट्टी का सौदागर') एक ऐसे आदिवासी युवा लड़के की कहानी है जो

हरफन मौला है। कम उम्र में ही भाग अपनी सौतेली माँ के व्यवहार से तंग आकर घर छोड़कर भाग जाता है और शहर में लोगों के घरों में झाड़ू पोछा कर अपना पेट पालता है। संयोगवश भटकते-भटकते एक दिन अमेरिकन ट्रांजिट कैंप में अमेरिकी सैनिकों के हत्थे चढ़ जाता है और वहीं का होकर रह जाता है। सैन्य अफ़सर उसके सेवा भाव से इतने प्रभावित होते हैं कि अंत में उसे सब कुछ सौंपकर अपने देश रवाना हो जाते हैं। मुकद्दर के सिकंदर यह कहानी प्रभावी और मर्मस्पर्शी है। एक वक्त ऐसा था जब उसे दो जून की रोटी तक नसीब न थी पर भाग्य ने कुछ ऐसा पलटा खाया कि रातों-रात वह छोकड़ा अकूत संपत्ति का मालिक बन गया। और ये सब उसने ऐसे ही नहीं बल्कि अपनी बुद्धि, हाजिरज़बाबी, साहस और गजब की वाकपटुता से हासिल किया था।

अनुवाद के संदर्भ संप्रेषणात्मक सिद्धांत को भाषांतरण का प्रमुख आधार बनाया गया है। लक्ष्य भाषा को प्रकृति के अनुकूल तकनीक अपनाई गई है। कई बार आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया गया है तो कई बार मूल पाठ के भाव को लक्ष्य भाषा में कुछ ही शब्दों के माध्यम से संप्रेषित कर दिया गया है। इसके तहत मूल भाव को पकड़ने के बाद लक्ष्य भाषा की संरचना में संजोने का प्रयास किया गया है। इसमें स्रोत भाषा के आंतरिक अर्थ को लक्ष्य भाषा के निहित अर्थ के निकट लाकर अनुवाद को सुव्यवस्थित और संयोजित किया गया है।

चौथी कहानी 'द लेटर' (अनुवाद : 'खत') है। यह संघर्ष, हिंसा और पश्चाताप की कहानी है। नागा आंदोलन से उपजी हिंसा, कत्ल और आर्थिक विपन्नता को बड़े करीने से एक-एक कर संवेदनाओं के धागे में पिरोया गया है। कहानी के केन्द्र में तथाकथित छद्म आंदोलनकारी और आंदोलन के नाम पर

भोले-भाले लोगों से धन उगाही की घटना और उससे त्रस्त पीड़ित ग्रामीणों की व्यथा को मर्म की कलम से कतरा-कतरा लिखा गया है। खून-खराबे और हिंसा पर यकीन रखने वाले एक चरित्र 'लंबू' का एक हृदयविदारक घटना के उपरांत हुए हृदय परिवर्तन को कहानी की पृष्ठभूमि में मार्मिकता के साथ उकेरा गया है।

प्रकार्यात्मक अनुवाद सिद्धांत को आधार बनाकर इस कहानी के अनुवाद को उसी भाव के साथ रूपांतरित करने का प्रयत्न किया गया है। एक प्रकार से इसे अनसृजित करने की कोशिश की गई है। इसमें युगीन सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ सकता है। अनुवाद के दौरान इसमें परिवर्तन करने की छूट भी ली गई है। प्रस्तुत विश्लेषण में विषयवस्तु की व्याख्या के साथ-साथ अर्थग्रहण भी होता रहता है।

कथा संग्रह की पाँचवीं और सबसे रोचक कहानी है 'थ्री वुमन' (अनुवाद : 'तीन औरतें') हैं। भिन्न-भिन्न परिवेश की तीन अलग स्त्रियाँ और तीनों के जीवन के अलग-अलग कटु अनुभव। स्त्रीत्व और स्वाभिमान से जुड़ी प्रस्तुत कथा स्त्री जीवन के विभिन्न रंगों को गहराई और संवेदना से उकेरती है। भावना, उत्तेजना, उत्साह और खोने-पाने के ताने बाने से बुने इन चरित्रों को पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है जैसे पाठक उन चरित्रों के माध्यम से स्वयं को जी रहा हो। कथाकार, तीन पीढ़ियों की तीन अलग स्त्री चरित्रों को आत्मसात कर उन्हें अल्हदा जज़्बातों के साथ कथा के माध्यम से प्रस्तुत करता है।

मूल कृति का पठन करने के बाद एक अनुवादक के तौर पर मैंने जो समझा जो अनुभूत किया उस अनुभव को मन की कलम से लक्ष्य भाषा में रूपांतरन किया। यहाँ छायानुवाद करने का प्रयत्न किया गया है। इसमें एक

अनुवादक के तौर पर पूरी छूट लेते हुए मुख्य भाव को संजोते हुए पाठ रचना करने की कोशिश की गई है। वास्तव में छायानुवाद में मूल पाठ की छाया मात्र होती है। इसमें मूल पाठ के कथ्य का अनुकूलन लक्ष्य भाषा की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों के अनुसार होता है। अनुवाद के माध्यम से मूल पाठ के कथ्य का अनुकूलन लक्ष्य भाषा की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों के अनुसार किया गया है। अनुवाद के दौरान मूल पाठ का मंतव्य और भाव स्पष्ट कर मौलिकता बनाए रखने की यथासंभव कोशिश की गई है।

छठी कहानी 'ए सिम्पल 'कवैश्चन' (अनुवाद : 'एक सवाल छोटा सा') एक स्त्रीप्रधान कहानी है जिसकी नायिका इमडोंगला के चरित्र को अदम्य साहस, निर्भिक व्यक्तित्व और अद्‌भूत शौर्य के इंद्रधनुषी खांचों में भरकर पाठकों के समक्ष उड़ेल दिया गया है। अशिक्षित होने के बावजूद उसकी तर्कसंगतता, बुद्धिमत्ता और चतुराई अचंभित करती है। उसका पति टेकबा, राजनीतिक तौर पर सक्रिय किरदार के रूप में उतनी खास उपस्थिति नहीं छोड़ पाता जितना इमडोंगला का चरित्र एक घरेलू स्त्री के रूप में प्रभावित करता है। सेना के कैप्टन से अपने पति को छुड़वाने की खातिर वह कैप्टन से लोहा लेने से पीछे नहीं हटती। ये उसकी साहस और जीवटता ही है जो उसे ऐसा करने को प्रेरित करता है। हालांकि इसके लिए कई दफ़ा उसे अपने पति से तिरस्कार और फटकार भी झेलनी पड़ती है पर वो हार नहीं मानती और अपने पति के खोये सम्मान और गौरव को वापस लाकर ही दम लेती है। सशक्त स्त्री किरदार के रूप में इमडोंगला अपनी अमिट छाप छोड़ पाने में कामयाब रहती है।

इस कहानी का अनुवाद करते समय परिसीमित अनुवाद का सहारा लिया गया है। कहानी में निहित प्रवाहमयता को बनाये रखने के लिए कोटिमुक्त अनुवाद करने का प्रयत्न किया गया है। स्त्रोत भाषा की पाठ्यसामग्री में भाषा के किसी एक स्तर पर प्रतिस्थापन करना परिसीमित अनुवाद है। वस्तुतः अनुवाद संदर्भ को लेकर चलता है, जो व्याकरणिक और कोशगत इकाइयों में निहित रहता है। न भाषिक इकाइयों में स्थिति-विशेष का संयोजन संदर्भ से ही होता है, इसलिए ये इकाइयाँ एक-दूसरे के साथ जुड़ी होती है और व्यावहारिक दृष्टि से इन्हें अलग नहीं किया जा सकता। परिसीमित अनुवाद को ध्यान में रखते हुए व्याकरणिक और कोशगत स्तरों का अनुवाद यथासंभव एक साथ करने का प्रयत्न किया गया है जिससे बोधगम्यता का एहसास होता है।

कहानी संग्रह की दूसरी अंतिम कहानी 'सौन्नी' (अनुवाद : सौन्नी) को एक प्रणयकथा की संज्ञा दी जाए तो इसमें तनिक भी अतिश्योक्ति न होगी। नागा आंदोलन और भारतीय सेना के साथ उपजे संघर्ष की परिणति से इस प्रेम कहानी का बीजांकुर प्रस्फूटित होता है। कॉलेज के समय से जुड़े प्रेम के ये तार संघर्ष और आंदोलन के दौरान और ज्यादा मजबूत होता है। पर एक वक्त ऐसा भी आता है जब जोड़े शादी के बंधन में बँधने ही वाले होते हैं कि तभी कुछ ऐसा होता है कि प्रणय की मजबूत डोर अचानक टूट जाती है और दो युवा जोड़े एक-दूसरे से हमेशा-हमेशा के लिए अलग हो जाते हैं। प्रेम, मिलन, महत्त्वकांक्षा, बिछुड़न और अंततः मौत, कहानी के केन्द्र में इन तमाम घटनाओं का क्रम से घूमना लगातार जारी रहता है। नायक की मृत्यु के उपरांत नायिका का उसके मौत के रहस्यों को सुलझाने के लिए दर-दर भटकना और अंत में इस रहस्योदघाटन से स्तब्ध रह

जाना कि उसके प्रेमी की मृत्यु के तार उसके माँ और भाई से जुड़े हैं। प्रस्तुत कहानी-संग्रह की सबसे मार्मिक कहानियों में से एक इस कहानी में रोमानी अनुभव अपने चरम तक पहुँचती है और पाठकों के हृदय को छूकर निकलती है।

चूँकि कहानी कथ्य के माध्यम से बहुत कुछ कह जाती है और बहुत कुछ बिना कहे ही व्यक्त हो जाता है। इसलिए इसके अनुवाद के दौरान भावानुवाद का सहारा लिया गया है। वास्तव में भावानुवाद के जरिये इसे अलग अंदाज़ में प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। इस दौरान कभी अनुच्छेद, कभी समूचे वाक्य, तो कभी उपवाक्य तथा कभी शब्द या कभी संपूर्ण पाठ का अनुवाद किया गया है। मूल सामग्री में अंतर्निहित सूक्ष्म भाव को उसी संवेदना के साथ लक्ष्य पाठ में लाने का प्रयास किया गया है। भावानुवाद की वजह से कथ्य भावपरक बन पड़ा है। एक अनुवादक के तौर पर सृजनात्मकता की छूट भी ली गई है।

प्रस्तुत कथा संग्रह की अंतिम और लघु कहानी है 'फ्लाइट' (अनुवाद : उड़ान) संक्षिप्त पर सबसे सशक्त कहानी है। उड़ान के जरिये ये कहने का प्रयास किया गया है कि आज़ादी स्वर्ण पिंजड़े से कहीं अधिक आरामदायक और आजादी का दाना, स्वर्ण कटोरे से कहीं ज्यादा स्वादिष्ट होता है। एक बाल्य पात्र द्वारा एक कैटरपिलर को खेल-खेल में पकड़ना और अंत में अपनी अभिलाषाओं का त्याज्य करते हुए उसे मुक्त कर देना, कहानी का यह भाग अत्यंत रोचक बन पड़ा है।
स्रोत भाषा के लक्ष्य में अनुवाद करते हुए कथ्य और शैली का स्तर अनुवाद में ज्यादा छूट नहीं ली गई है। दरअसल समग्र अनुवाद की शैली को भाषांतरण के केन्द्र में रखा गया है। इसमें अनुवाद के ध्वन्यात्मक, व्याकरणिक और कोशगत सभी स्तरों पर समग्रता का ध्यान रखा गया है। सभी स्तरों पर संतुलित प्रतिस्थापना से कथा रूपांतरण रोचक बन पड़ी है।

2.1 अमलतास का सिरहाना

उस छोटे से शहर के नये कब्रिस्तान में हर साल मई के महीने में कुछ विचित्र घटता। सुदूर शहर के पुराने कब्रिस्तान (जो गर्व से सीना ताने खड़ा था और जिसके कब्रों के सिरहाने सुंदर, बेशकीमती नक्काशीदार पत्थर जड़े थे) के दक्षिणी कोने से थोड़ा हटकर अमलतास के पीले चमकीले फूल हर साल कब्र के सिरहाने उग आते। कुछ साल पहले कब्र पर फूल चढ़ाने आये लोगों ने जब पहली बार अमलतास की झाड़ियों को वहां देखा तो उन्हें प्रकृति की इस विचित्रता पर ज्यादा हैरानी नहीं हुई। पर जब साल-दर-साल कब्रों पर फूलों की चादर बिछने लगी तो एकबारगी लोगों को यकीन ही नहीं हुआ कि जिस धरती पर जिन्दगी और मौत के सिवाए कुछ भी स्थायी नहीं है वहां अमलतास की ये बेखौफ लतायें कैसे बेधड़क, बिना रोक-टोक हर साल अपने आप उग आती हैं। ये प्रकृति की जादूगरी नहीं तो और क्या है? बाहर से देखने पर कब्रिस्तान का चप्पा-चप्पा भव्यता और विशालता का एहसास कराता। कंक्रीट से अटे परे इस बेजान मैदान में लोगों ने बेशकीमती पत्थरों के नीचे चिरनिद्रा में सो रहे अपनों में जान डालने की क्या खूब कोशिश की है, हर कब्र के सिरहाने हैसियत और रूतबे के हिसाब से एक से बढ़कर एक बेशकीमती, नायाब पत्थरों को जड़ा गया है। जिसकी कब्र सबसे ज्यादा शानदार, आलिशान और अलहदा दिखती, समाज में उसकी नाक उतनी ही ऊंची होती। चिरनिद्रा में डूबी मृतआत्माओं की ये दुनियां खोखली और निहायत ही दिखावटी थी। लोग वहां शांति प्रार्थना के लिए कम, दूसरों की हैसियत की टोह लेने ज़्यादा आते। कब्रिस्तान के ज़र्रे-ज़र्रे से आडम्बर और खोखलेपन की प्रतिछाया प्रतिबिम्बित होती।

कब्रों की इस दिखावटी दुनियाँ में हाल ही में एक और चलन ने ज़ोर पकड़ा है, कब्रों के सिरहाने अपने दिवंगत प्रियजनों की तस्वीरें, पत्थरों में मढ़वाना। विशेषकर आभिजात्य तबके में इस चलन ने ज़्यादा ज़ोर पकड़ा है। अपने प्रियजनों के इन कब्रों को चमकाये रखने की लोगों की कोशिशें तब नाकाम हो जाती जब इन आलीशान, भव्य पत्थरों के पास जंगली झाड़-झंखाड़ उग आते। प्रकृति के आगे इन तमाम मानवीय प्रयासों पर एकाएक पानी फिर जाता। कब्रिस्तान की इंच-इंच ज़मीन को नायाब पत्थरों से ढक दिया गया था। इंसानी जोड़-तोड़ ने जैसे कायनात की सृजनशीलता को जड़ कर दिया हो। पर प्रकृति कहां हार मानने वाली थी? उसकी राहों को कौन रोक सका है? वो सतत् अपनी रचनाधर्मिता में रत है।

इस्टर एक ऐसा अवसर था जब मृतकों के परिवार वाले यहां आते और जंगली घास पौधों को साफ़ कर कब्र चमकाने का अपना फर्ज पूरा करते। पर फूलों से लदे अमलतास की झाड़ियों का यूं हर साल उग आना सामान्य नहीं था। यहाँ प्रकृति की प्रत्येक कारीगरी को इंसानों ने अपने जरूरत व स्वार्थ के खातिर बदल दिया था। शेष थी बस एक अमानत जिसे प्रकृति ने अब तक सहेज रखा था, ऋतुएँ जो हर बार बेरोकटोक नियत समय पर आती और अपनी जादूगरी दिखा जाती। और उसके इस जादूयी तमाशे में कोई भेदभाव नहीं था। वो अमीर-गरीब, बूढ़े-जवान, स्त्री-पुरुष सबके सिरहाने उग आये ठूंठ व बेज़ार अमलतास की डालियों में हौले से जीवन का संचार कर जाती, अपने हाथों से उन्हें सजाती, उनका रस-श्रृंगार करती है, और पुष्प गुच्छों से उन्हें अलंकृत करती। कब्रों के सिरहाने लगे पत्थर, मृतकों के बच्चों और प्रियजनों के चाहे अनचाहे कर्त्तव्यों की

मूक घोषणा करते प्रतीत होते। कब्रिस्तान में खड़े दूसरे पेड़ जहां मौसम की मार सहन नहीं कर पाते वहीं अमलतास पूरी दृढ़ता से मौसम को मुँह चिढ़ाता नजर आता। मई में जहाँ उसके फूल चमकीले और सुरमई लगते तो गर्मी के अंत तक डालियाँ पीले फूलों से लद जाती और भूरे रंग के मटमैली चादर में बदल जाती। बसंत में जहाँ इनमें हरी-हरी कोपलें उग आती तो वहीं मई में ये पीले पुष्प गुच्छों में परिवर्तित हो संगमरमरी स्मारकों की शोभा बढ़ाते।

कहानी का सिलसिला आगे बढ़ता रहे इसलिए इसे शुरू से बताना ठीक रहेगा। ये कहानी है लेंटिना नामक एक युवती की जो अपने बगीचे में अमलतास उगाना चाहती थी। हमेशा से ये हल्के पीले रंगों वाले फूल उसे भाते थे। उसका मानना था कि ये पीले फूल सच्चाई और पवित्रता के प्रतीक हैं। वे उन गंदे फूलों की तरह नहीं जो निर्लज्ज़ता से कहीं भी बेतरतीब उग आते। अमलतास की फूलों से लदी डालियों का धरती की ओर झुका होना उनकी सौम्यता व विनम्रता का प्रतीक है। अत: उसने अपने बगीचे में अमलतास के कुछ पौधे लगाने का विचार किया। वो ज़्यादा बड़े पौधे लगाना नहीं चाहती थी जो अन्य पेड़-पौधों के लिए रूकावट बनें। उसने नर्सरी से अमलतास के कुछ पौधे खरीदे और उन्हें अपने घर की चहारदीवारी के एक कोने में लगा दिया। अपने माली के बताये अनुसार वह इस उम्मीद से उन पौधों की अच्छी देखभल कर रही थी कि दो साल के भीतर वो बड़े पेड़ बन फूल देने लगेगें।

पहले साल कुछ ऐसा हुआ जिसने लेंटिना को दुखी कर दिया। एक दिन बगीचे की सफ़ाई करते समय उसके नये माली ने जंगली खर-पतवार के साथ अमलतास के उन पौधों को भी उखाड़ फेंका। लेंटिना को बहुत गुस्सा आया। उसने

माली को खूब खरी-खोटी सुनाई। हो-हल्ले के बाद वो बाज़ार से अमलतास के कुछ और पौधे खरीद लाई और इस बार उसने उन पौधों को अपने अहाते के भीतर तीन अलग-अलग कोनों में लगाया। इस उम्मीद के साथ कि शायद उनमें से कोई एक जीवित बच जाए। पर ऐसा हो न सका। एक दिन उसने अपने अहाते में कुत्तों के भौंकने और गायों के रंभाने की आवाज़ सुनी। बाहर आकर देखा तो उसका पड़ोसी गली के आवारा गायों को खदेड़ता उसके घर के अहाते में घुस आया है। और गायें मज़े से अहाते में लगे अलतास के पौधों को चट कर रही है। उसने जब से अमलतास के पौधे लगाने शुरु किये थे तब से कुछ न कुछ विचित्र घट रहा था। उसे सोचकर हैरानी हुई कि आखिर पौधे, अहाते में जम क्यों नहीं पा रहे? दोनों बार पौधे किसी न किसी कारण से नष्ट हो गये थे। पर उसने हिम्मत नहीं हारी। तीसरी बार वो बाज़ार से अमलतास के कुछ और पौधे उठा लाई और उन्हें अपने बगीचे में लगा दिया। और संयोग से इस बार पौधे अच्छी तरह जम गये थे और कुछ ही महीनों में घनी झाड़ियों में तब्दील हो गये।

लेंटिना बेहद उत्साहित थी। वो फूलों के खिलने का अब और इंतजार नहीं कर सकती थी। वह बेसब्र हो रही थी। इससे पहले कि उसकी इच्छा पूरी होती एक घटना घट गई। एक दिन जब लेंटिना अपनी सहेली के घर गई थी, उसके पीछे स्वास्थ्य विभाग के एक कर्मचारी ने उसके अहाते में ख़तरनाक डीडीटी का छिड़काव कर दिया। संयोग से उस रात काफ़ी तेज बारिश भी हुई थी। समूचा बगीचा पानी से भर गया। कुछ बड़े पौधों को छोड़कर सभी छोटे पौधे पानी की तेज बहाव में बह गये जिसमें अमलतास भी था।

यह देख लेंटिना भीतर तक टूट गई। उसे लगा अमलतास उगाने की उसकी चाहत शायद कभी पूरी नहीं होगी। इसलिए उसने अमलतास लगाने का विचार ही त्याग दिया लेकिन वह जब भी इन फूलों को सड़क किनारे या बगीचे में लगा देखती उसका जी ललचाता। वो फिर से उन्हें अपने घर में लगाने के सपने देखने लगती। उसके बच्चे और पति को समझ रहे थे, कि लेंटिना का अनुराग अमलतास के प्रति घटने की बजाय बढ़ता ही जा रहा है। यहां तक कि छोटे-छोटे पारिवारिक जलसों में भी उसने रिश्तेदारों से अमलतास पर खुलकर बातें करनी शुरू कर दी। फूलों के प्रति उनकी शुष्क प्रतिक्रिया से वह भीतर तक आहत हो जाती। उसे लगता लोग प्रकृति की इस नायाब खुबसूरती के प्रति कितने असंवेदनशील हो गये हैं? उसकी हर बात में अमलतास का ज़िक्र शामिल होता। उसने अब तक आस नहीं छोड़ी थी। उसे पता था एक न एक दिन उसके बगीचे में अमलतास जरूर खिलेंगे।

इसके बाद बहुत दिनों तक लेंटिना ने अमलतास के बारे में न तो किसी से कोई चर्चा की और न ही उसे अपने बगीचे में लगाने का प्रयास ही किया। जिसके लिए वो हमेशा लालायित और उत्साहित रहा करती थी। वो उत्साह शायद अब ठंडा पड़ गया था। इसी बीच उसके पति बुरी तरह बीमार पड़ गये। कई महीनों तक तो रोग का कुछ अता पता ही न चला। ईलाज की अथक कोशिशों के बाद भी नतीज़ा सिफर रहा। एक रात सोते-सोते वे दुनियां को अलविदा कह गये। दाह संस्कार की प्रक्रिया थोड़ी लंबी खींची क्योंकि दिवंगत व्यक्ति समाज के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। जिस दिन उन्हें दफ़नाने कब्रिस्तान ले जाया जा रहा था,

लेंटिना ने यह कहकर सबको चौंका दिया कि वो भी अपने मृत पति की अंतिम विदाई में शामिल होगी। हालांकि लेंटिना को खुद नहीं पता था, वो ऐसा कैसे बोल गई? नागा समाज में सिर्फ पुरुष ही अंतिम संस्कार क्रिया में भाग लेते हैं और मजबूत सुरक्षा घेरे में ताबूत को कब्र तक पहुँचाने के दायित्व को अंजाम देते हैं। ऐसे कामों में औरतों के शामिल होने पर प्रतिबंध है। घर के बाहर खुले में रखे ताबूत के पास अपने भाइयों और बेटों को खड़ा देख संभवतः लेंटिना के मन में भी अंतिम संस्कार में भाग लेने की इच्छा जागृत हुई होगी। तब उसकी इस बात का किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया क्योंकि कोई भी इस तरह की स्थिति के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं था। पर लेंटिना की जिद के आगे घरवालों को झुकना पड़ा और अंत में लेंटिना को साथ लेकर सभी कब्रिस्तान के लिए निकल पड़े। वहां अंतिम प्रार्थना के समय लेंटिना कब्रों के सिरहाने लगे उन कृत्रिम सजावटी पत्थरों को देख मन ही मन ये सोच रही थी कि कितने मूर्ख है ये मानव जो बेजान पत्थरों से मरने वाले की आत्मा को खुश करना चाहते हैं।

लेंटिना ने मन-ही-मन ये निर्णय लिया कि मरने के बाद वो अपने कब्र पर कभी इन पत्थरों को नहीं जड़वाएगी। लेकिन तभी उसकी अंर्तआत्मा ने कहा, ''क्यों न मरने के बाद वो अपनी कब्र पर इन सजावटी स्मारकों के बजाए अमलतास का पेड़ लगवाए?'' कम से कम वो इन कृत्रिम पत्थरों से तो ज्यादा सजीव है। इस तरह अमलतास लगाने की उसकी चाहत उसके मरने के बाद भी ज़िन्दा रहेगी। मन में ये विचार आते ही उसके चेहरे पर मुस्कुराहट छा गई। लेकिन जैसे ही रिश्तेदारों की नज़र उस पर पड़ी तो वो झट से पीछे भीड़ में जाकर

शोकाकुल दिखने का प्रयास करने लगी। अपने इस उत्साह को वो और ज़्यादा देर तक दबाकर नहीं रख सकती थी सो उसने पास खड़े अपने ड्राइवर को घर चलने का इशारा किया।

उस रात उत्साह के कारण वो ठीक से सो नहीं पाई। जैसे उसकी कोई बड़ी समस्या हल हो गई थी। लेकिन उसे पूरा करे तो कैसे? एक बड़ी समस्या थी। स्पष्ट था इस मामले में वो अपने बच्चों और रिश्तेदारों पर भरोसा नहीं कर सकती थी इसके लिए उसे किसी ऐसे व्यक्ति को ढूंढना था जो उसके अंतस में दबी अमलतास की लालसा को समझ सके। उसका ध्यान अपने नौकरों पर गया। कौन हो सकता है? किस पर विश्वास किया जा सकता है? रसोइया या माली। नहीं बिल्कुल नहीं। उनके परिवार है और परिवार में कभी भी कोई बात गोपनीय नहीं रखी जा सकती। उसका दिमाग तेज़ी से घूम रहा था। सोचते-सोचते उसका ध्यान अपने ड्राइवर पर गया जो पता नहीं कितने सालों से उसके परिवार का साथ निभाता आ रहा था। वह विधूर था लेंटिना ने उसे अपना राजदार बनाने का सोचा।

अगले दिन लेंटिना ड्राइवर को लेकर कब्रिस्तान गई जहां उसने अपनी योजना के बारे में उसे बताया कि मरने के बाद वो अपनी कब्र पर सुनहरे नक्क़ाशीदार जड़ाऊ पत्थर की बजाए अमलतास लगाना चाहती है? लेकिन उसकी एक शर्त थी कि जीते जी वो अमलतास के इन फूलों को खिलते देखना चाहती थी। ड्राइवर का असली नाम मापू था पर सब उसे बाबू कहकर पुकारते क्योंकि लेंटिना का पोता उसका नाम ठीक से बोल नहीं पाता था पहली बार जब उसने उसे मापू की जगह बाबू पुकारा तो सबको ये नाम अच्छा लगा। मापू ने भी अपने

इस नये नाम को सहर्ष स्वीकार कर लिया था। उसे कोई आपत्ति न थी। तब से घर के बड़े-बूढ़े सभी उसे वाबू कहने लगे।

अगली सुबह उसने बाबू को बुलवा भेजा और उसे कब्रिस्तान चलने को कहा। इसमें कुछ भी अज़ीब नहीं था। एक विधवा अपने पति की कब्र पर जा रही थी। लेकिन लेंटिना का इरादा तो कुछ और ही था। वो वहाँ किसी ऐसे खाली जगह को तलाशना चाहती थी जहां मरने के बाद उसे दफ़नाया जाए। ऐसी जगह जो सबसे अलग हटकर हो और उससे किसी को नुकसान न पहुँचे। कब्रगाह पहुंचने के बाद लेंटिना अपने पति की कब्र की बजाय मैदान के सबसे अंतिम छोर पर पहुंच गई और आस-पास कुछ ढूँढने का उपक्रम करने लगी जैसे कोई क़ीमती चीज गुम हो गई हो? वहाँ काफ़ी देर रूकने के बाद वह कब्रिस्तान के दक्षिणी छोर पर गई और संतुष्टि भाव से ऐसे सिर हिलाया जैसे उसे वो जगह मिल गई जिसकी उसे तलाश थी। बाबू यह सब देखकर चकित था उसे अब घर के लोगों की बातों पर यकीन होने लगा था जो ये कहते थे कि लेंटिना का दिमाग फिर गया है और पति की मृत्यु के बाद वो अपना मानसिक संतुलन खोती जा रही है। उधर लेंटिना ने जगह का मुआयना कर बाबू को अपनी तरफ आने का संकेत दिया। बाबू तेजी से उसकी ओर बढ़ा। लेंटिना ने कहा, ''बाबू गौर से देखो! यही वह जगह है जहां मरने के बाद मुझे दफनाना।''

बाबू अंचभित था। उसने तपाक से कहा, ''पर मैडम आपकी जगह तो साहब के कब्र के पास सुरक्षित है।'' बेवकूफ। सूरज की रोशनी जहाँ जाए हमें वही चलना चाहिए। क्या तुम्हें मालूम नहीं मेरी जगह यहां है? और देखा नहीं कैसे नगर सीमित वालों ने मुझे इस जगह के लिए लिखित सहमति भी दे दी है? पर

खबरदार जो तूने किसी से इसकी चर्चा भी की?'' लेंटिना ने लगभग डपटते हुए बाबु से कहा। लेंटिना को अच्छी तरह मालूम था कि बाबू का दामाद नगर समिति के दफ़्तर में एक छोटा सा अर्दली है। उसने लगभग धमकाते हुए बाबु को कहा, ''तुम अपने दामाद से मिलकर मेरा ये काम कराओ। जो भी खर्चा होगा मैं उठाने को तैयार हूँ। और हां इस बात का ध्यान रखना कि वो किसी को भी ये राज ना बताएं?'' ''क्या तुम मेरे राजदार बनोगे बाबू!'' फिर लेंटिना ने पूछा अपनी मालकिन की जलती आखों को देख बाबू ने हामी भरी, ''जी मैडम बिल्कुल। मैं आपके इस राज को राज ही रखूंगा और पूरी कोशिश करूँगा, मेरा दामाद भी इसमें राजदार बनें।'' ''ध्यान रखना, वो अपनी पत्नी से भी इसे साझा न करें।'' बाबू ने सिर हिलाते हुए कहा, ''जी मैडम मैं बिल्कुल ख्याल रखूंगा।'' ये तय होते ही दानों कार से घर लौट गये। लेंटिना थोड़ी थक गई थी सो घर आते ही अपने कमरे में जाकर लेट गई। किसी को भी इससे कुछ अजीब नहीं लगा। अंतिम संस्कार की क्रिया के बाद सब इतने थके थे कि उनमें और बोलने या टोकने की हिम्मत शेष न थी। इधर लेंटिना पूरी रात जागती रही। उसकी आंखों में दूर दूर तक नींद नहीं थी। वो अपनी योजना के अगले कदम के बारे में सोच रही थी। मरने के बाद अपने कब्र पर अमलतास के फूल उगाना और जीवित रहते हुए यह सुनिश्चित करना कि उसका राज, राज ही बना रहे। यही योजना सारी रात उसके दिल और दिमाग में आकार लेती रही। अगले सीजन तक किसी तरह वो अपना ये काम पूरा कर लेना चाहती थी। इसी कारण उसे अपने विश्वासपात्र बाबू की मदद लेनी पड़ी थी लेकिन दुर्भाग्यवश अभी सर्दी का मौसम था और उन्हें फूलों के

खिलने के लिए अगले वसंत तक इंतजार करना था।

इसी बीच बाबू ने अपने दामाद से कब्रगाह में कब्र के लिए जगह तय करने के संबंध में बात करनी शुरू की। पहले तो उसका दामाद इस उलझन में रहा कि उसके श्वसुर, ऐसे बीमारों जैसी बातें क्यों कर रहे हैं? क्या वो किसी बीमारी से जूझ रहे हैं जिसे वो परिवार वालों से छुपा कर रखना चाहते हैं? फिर क्यों मरने से पहले ही कब्रिस्तान की ज़मीन लेना चाहते हैं? आखिर माज़रा क्या है? लेकिन मामले की गंभीरता को देखते हुए वो चुप रहा। बाद में अपने श्वसूर से बात करने पर उसे सारी हकीकत का पता चला। उसे इस बात की हैरानी हो रही थी कि जब शहर के प्रतिष्ठित लोगों में कब्रिस्तान की पहली पंक्ति में जगह को लेकर हमेशा झगड़ा रहता है। फिर उसके ससुर मैडम के लिए कब्रिस्तान की बंजर और उपेक्षित ज़मीन के लिए क्यों गुजारिश कर रहे हैं? उसने आश्वासन दिया कि ज़मीन को लेकर उन्हें कोई समस्या नहीं होगी। साथ ही उसने ये बताया कि ज़मीन के लिए सरकारी अनुमति लेनी होगी। तभी समिति इस संबंध में कोई उचित कदम उठाएगी।

बाबू ने अपनी मालकिन को सरकारी अनुमति के बारे में बताया। जिससे एक बार फिर लेंटिना दुविधा में पड़ गई। क्या उसे आवेदन पत्र पर हस्ताक्षर कर देना चाहिए या फिर आवेदक की पहचान को छुपाए रखना चाहिए ताकि किसी को भी उसके बारे में भनक न लगे? उसे पत्र लिखना सबसे अच्छा विचार लगा लेकिन लिखे कैसे? दिमाग पर ज़ोर डालने से उसे अपने दिवंगत पति की सालों पहले कही गई एक बात याद आई। जिसमें उन्होंने अचल संपति की आगामी

योजना के बारे में बात करते हुए कहा था, ''देखो लेंटिना, अगर तुम्हें ज़मीन में निवेश करके फ़ायदा कमाना हो तो हमेशा अनउपजाऊ ज़मीन हीं खरीदना जिसकी भविष्य में बड़ी संभावनाएं होती हैं। क्योंकि ऐसे ज़मीनों की शुरू में तो कोई मांग नहीं होती लेकिन विकास की गति तेज होते ही इनकी लागत दुगनी तीगुनी हो जाती है।'' ये याद आते हीं लेंटिना ने कब्रिस्तान की भीड़-भाड़ वाली जगह में ज़मीन लेने की अपनी योजना रद्द कर दी और अगले दिन फिर से कब्रिस्तान गई। इस बार उसने बाबू को कब्रिस्तान में चारों ओर घूमकर उपयुक्त जगह तलाशने को कहा। इस पर बाबू, लेंटिना को आराम से कार में बिठाते हुए बोला, ''मैडम आप चिंता न करो, मैं अभी मैदान का चक्कर लगाकर आता हूँ।'' वापस लौटकर उसने बताया, ''मैडम दक्षिण ओर की चहारदीवारी वाली ज़मीन सबसे अच्छी रहेगी पर मुझे अभी भी ये समझ में नहीं आ रहा कि जब आपका काम ज़मीन के छोटे से टुकड़े से ही हो जाएगा फिर आप ऐसा क्यों कर रही हैं? लेंटिना ने बाबू की आंखों में झांकते हुए कहा, ''थोड़ा सब्र रखो बाबु। समय आने पर तुम्हें सब पता चल जाएगा।'' इतना कहकर लेंटिना चुप हो गई और वे वहाँ से चल पड़े। पूरे रास्ते वे खामोश रहे।

लेंटिना एक बार फिर अपने कमरे में बिस्तर पर लेटी ज़मीन हासिल करने के बारे में गंभीरता से सोच रही थी। सिर्फ एक ही ऐसा आदमी था, बाबू जिस पर वो पूरी तरह भरोसा कर सकती थी। लेकिन इससे पहले की वह ज़मीन में निवेश संबंधी अपनी योजना के बारे में उससे बात करती भाग्य ने अपना खेल दिखाया। पास के गांव का एक आदमी जो उसके स्वर्गीय पति के दोस्त का बेटा था, खुद

व खुद मददगार के रूप में सामने आ गया। दोस्त तो पहले ही मर चुका था पर उसका बेटा जिसका नाम खालोंग था, उसके पति की मृत्यु के समय शहर से दूर था जो अब वापस आने पर सांत्वना देने आया था। लेंटिना ने उसके व्यवहार में एक अजीब सी उदासी महसूस की। बहुत दबाव देने पर उसने बताया कि कैसे पिता की लंबी बीमारी और अस्पतालों के खर्चे से उसकी कमर टूट गई है और वह दिवालिया हो गया है। उसने गहरी सांस लेते हुए कहा, ''काश मैं अपनी ज़मीन बेच सकता''। लेकिन अब तो कब्रिस्तान का काफी विकास हो चुका है। अब अगर वहां की अपनी बेचूंगा तो लोग मुझ पर हंसेंगे ही। वे तो ये कहकर भी मेरा मज़ाक बनाएंगे कि, अब मैं कोई दूसरी कब्रगाह बना लूं और उसे किराये पर चढ़ा दूँ।'' आंटी मुझे नहीं पता हमारे साथ क्या होने जा रहा है? वो भर्रायी आवाज में बोला। उसके आंसू बस छलकने वाले ही थे। लेकिन बजाए उसे सांत्वना देने के लेंटिना उसके ज़मीन को लेकर और ज्यादा उत्तेजित हो गई।

वो उससे ज़मीन के बारे में विस्तार में पूछने लगी। पहले तो खालोंग को लगा कि वो बस ऐसी ही दिलचस्पी दिखा रही है पर जब उसने लेंटिना का प्रस्ताव सुना तो उसके पैरों तले ज़मीन खिसक गई। लेंटिना ने उत्तेजित होते हुए पूछा, ''क्या तुम अपनी ज़मीन मुझसे बेचोगे? तो वो अचकचा गया। उसने तुरंत जवाब नहीं दिया। वो उलझन में था और मन ही मन सोच रहा था कि कहीं लेंटिना दया दिखाकर उसके बेकार पड़े ज़मीन के टुकड़े को खरीदना तो नहीं चाहती? या फिर उसकी माली हालत खराब है इसलिए वह ऐसा कर रही है? क्या उसे लेंटिना की सहानुभूति का फायदा उठाना चाहिए? पर क्या ये सही होगा? वह

द्वंद्व में था। उसे उलझन में पड़ा देख लेंटिना मीठे स्वर में बोली, ''मुझे पता है तुम क्या सोच रहे हो? पर ये मत सोचो कि मैं सिर्फ सहानुभूतिवश तुम्हारे लिए ऐसा कर रही हूं बल्कि इसमें मेरा भी अपना स्वार्थ छिपा है। कुछ दिनों से मैं ज़मीन का एक ऐसा टुकड़ा देख रही थी जहां मरने के बाद मुझे दफनाया जाए। मैं उस बड़े कब्रिस्तान में उन निर्जिव स्मारकों के बीच दफनाया जाना नहीं चाहती। मुझे एक ऐसी जगह चाहिए जहां मेरी कब्र के चारो ओर सुंदर पेड़ हो। तो अब बताओ, क्या तुम मुझे अपनी ज़मीन बेचना चाहोगे? खलोंग को लगा जैसे लेंटिना उससे कोई व्यापारिक समझौता करना चाहती हो उसने धीरे से कहा, ''हाँ ठीक है।'' लेकिन लेंटिना वहीं नहीं रूकी, उसने गंभीर होकर कहा, ''सुनो मैं ज़मीन एक ही शर्त पर खरीदूंगी कि तुम इस बारे में किसी को नहीं बताओगे। यहां तक कि अपनी पत्नी को भी नहीं। अगर तुम राजी हो तो बताना कितना पैसा चाहिए? और कागज़ात के साथ कल आ जाना। हम कल ही सौदा तय करेंगे।''

खालोंग भाग्य को करवट लेते देख हैरान था उसे इतनी बड़ी डील की कतई उम्मीद न थी। उसने सपने में भी नहीं सोचा था कि उसके नसीब ऐसे खुलेंगे। उसे उम्मीद से ज्यादा पैसे मिल रहे थे। वह अधीर हो उठा। जब लेंटिना ने कहा, ''कल ठीक 11 बजे मिलो।'' अब तो वो और बेसब्र हो उठा। अब वह किसी और बेकार की औपचारिकता में नहीं पड़ना चाहता था। वह जल्दी से वहाँ से निकल गया। वो अभी भी सकते में था उसे यकीन ही नहीं हो रहा था कि अभी-अभी जो हुआ, वो सब सच था। लेंटिना जानती थी कि अगर वह थोड़ा मोल-भाव करती तो क़ीमत कम हो सकती थी। पर उसे तो मुंहमांगी मुराद मिल

गयी थी इसलिए उसने कुछ न बोलने में ही भलाई समझी। लेंटिना ने एक बार फिर बाबू की सहायता लेने की सोची। जब बाबू ने नगर समिति से हुए समझौते के बारे लेंटिना को में याद दिलाया कि कैसे उसके लिए उन्होंने अपनी ज़मीनें रोक रखी है, और सौदे के लिए किसी गवाह के अँगूठे की निशान की जरूरत है और नगर समिति के लोग इस संबंध में जल्द से जल्द उससे मिलना चाहते हैं। इतना सुनते ही लेंटिना मुस्कुराते हुए बोली, ''कोई बात नहीं उन्हें थोड़ा और इंतजार करने दो। उन्हें भी तो पता चले कि ये किसी औरत का अनोखा फैसला है।''

जैसा कि लेंटिना ने निर्देश दिया था खालोंग, सहमति पत्र पर अपने रिश्तेदार को अंगूठे के निशान के साथ आया। सौदा बिना किसी रूकावट के तय हो गया लेंटिना अब पुराने कब्रिस्तान के उत्तरी कोने से लगे दाहिनी हिस्से की ज़मीन की मालकिन हो गई थी। लेंटिना ने बाबू को ज़मीन के चारों ओर चारदिवारी बनवाने का आदेश दिया। चारदिवारी लगभग बनकर तैयार होने ही वाली थी तब लेंटिना के बच्चों को उनकी मां की बेवकूफी भरी योजना के बारे में किसी अन्य माध्यम से पता चला तो उन्होंने इसका विरोध किया।

वे इस बात को लेकर दुखी थे कि उनकी माँ ने उन पर भरोसा न करके घर के एक अदने से ड्राइवर पर यकीन किया था, और कब्रिस्तान की ज़मीन से लेकर डिजाइन तक के चुनाव में उन्होंने उस पर भरोसा किया था। ड्राइवर ने उन्हें कानों-कान खबर न लगने दिया था, इससे वे बहुत आहत थे। लेंटिना ने उन्हें शांत कराने की कोशिश की और कहा कि वो उन पर इस काम का बोझ डालना नहीं चाहती थी और जब बाबू और वो मिलकर इसे आसानी से कर सकते थे तो उन्हें

किसी और को बताने की क्या जरूरत थी? इस पर बेटे तो चुप हो गये पर बड़ी बहू अपना प्रभाव दिखाने के लिए बीच में कूद पड़ी और नौकर पर इतना विश्वास करने के लिए लेंटिना का अपमान करने लगी। लेंटिना ने अपने उपर लगाये इस आरोप का बड़ी ही चतुराई से खंडन किया। अपने पति के क्रिया-क्रम के दौरान उसने दोनों बहुओं की बातें सुनी थी। तब से उसने इसे राज बना के रखा था। अब मौका मिलते ही उसने भीतर का सारा गुबार बाहर निकाल दिया। दरअसल मामला ये था कि उस दौरान दोनों बहुओं के बीच दाह-संस्कार के खर्चों को लेकर लड़ाई छिड़ गई थी। बड़ी बहु ने छोटी बहु को ताना मानते हुए कहा, ''ये तो कोई बात नहीं हुई हम अकेले ही सारा खर्चा उठाए, और तुम और तुम्हारे पति हाथ बाँधे खड़े रहो।'' इस पर छोटी ने जवाब दिया ''मैं इसमें कैसे कुछ कह सकती हूं? अगर तुम्हें ऐसा कुछ लगता है मेरे पति से कहो। मैं इन बेकार के खर्चे में नहीं पड़ने वाली। मैं एक रुपया भी नहीं दूंगी।'' सब को पता था कि छोटी बहु के पास उसका खुद का ढेर सारा पैसा था, जिससे वो हमेशा वो दूसरों के ऊपर चढ़ी रहती थी। उसने कहना जारी रखा, ''और हाँ अगर तुम्हें ऐसा लगता है कि हम उस बूढ़े के लिए घास से भरे उस कब्रिस्तान में कीमती पत्थर जड़वाने के लिए पैसे देंगें तो बेकार ही अपना सिर खपा रही हो।''

उस वक्त तो लेंटिना ने इस लड़ाई-झगड़े को सुनकर इसे खुद तक सीमित रखा था और यह तय किया था कि वह किसी और से इस बारे में बात नहीं करेगी। पर चूँकि परिवारवाले उसके निजी मामले में हस्तक्षेप कर रहे थे तो उसे बात उठानी पड़ी। उस उसने वह दोनों बहुओं को टोकते हुए कहा था, ''तुम दोनों

इस मसले पर क्यों झगड़ रही हो? आखिर मैंने अब तक किसी का एक पैसा भी खर्च किया है क्या? और दूसरी बात ये कि तुम लोगों को मेरे हेडस्टोन के बारे में ज़्यादा सोचने की जरूरत नहीं है।'' ये सुनकर दोनों औरतें हक्की-बक्की रह गई। उन्हें लगा था कि इस कमरे में उन दोनों के अलावा कोई और नहीं था। पर लेंटिना ने वहाँ से गुजरते हुए उनकी बात सुन ली थी। उसने अपनी चतुराई से दोनों को चुप करा दिया। बेटों को जब बाद में पता चला कि उनकी मां ने उनकी पत्नियों की कैसी खबर ली है तो वे खिखियाकर हँस पड़े और बोले, ''वो असली माँ है, उम्मीद है तुम लोगों को सबक मिल गया होगा।''

कब्रिस्तान से लगी हुइ ज़मीन का लेंटिना द्वारा खरीदे जाने की बात सबको पता चल गई। लेंटिना जानती थी कि नगर समिति वाले इस संबंध में कभी भी उससे मिलने आ सकते हैं जाहिर है तब ज़मीन की मिल्कियत की बात उठेगी क्योंकि नगर समिति की ही अनुमति से वो सारी ज़मीन या तो चर्च या धार्मिक संस्था के नियंत्रण में जा सकती थी। दूसरा कोई भी इस पर अपना हक नहीं जता सकता था। इसे भांपते हुए उसने ज़मीन संबंधी कानूनी दस्तावेज़ भी तैयार करवा लिए। इसके लिए उसने अपने भतीजे को जो अभी जिला अदालत में प्रैक्टिस कर रहा से मदद ली। दस्तावेज़ में उसने यह घोषणा की थी कि वह अपनी ज़मीन, नगर समिति को दान में देगी न कि चर्च को। बशर्ते कि नगर समिति लिखित में ये सत्यापित कर के दे कि वे ज़मीन को निम्नलिखित शर्तों के अनुसार प्रबंधित करेगे। शर्तें इस प्रकार थी-

1. ज़मीन का हिस्सा नये कब्रिस्तान को बनाने में इस्तेमाल किया जाये और इस शर्त पर यह सबके लिए उपलब्ध हो कि कब्र के आसपास वे खिलने वाले फूलों को लगायेगें न कि पत्थर का सिरहाना।
2. दानकर्ता के तौर पर लेंटिना को अपने लिए ज़मीन का टुकड़ा चुनने का पूरा हक हो।
3. ज़मीन के टुकड़ों को संख्या द्वारा दर्शाया जायेगा और प्लाट नं. के आगे लिखे नाम को समिति के रजिस्टर में भी लिखा जायें।
4. नियम व शर्तों को अच्छी तरह प्रचारित किया जाए और नगर समिति इसके कड़ाई से पालन को सुनिश्चित करे।

जैसा कि पहले से उम्मीद थी एक दिन समिति के सभी सदस्य लेंटिना के घर आये। उन्हें एक एक बड़े हॉल में बिठाया गया। लेंटिना ने आदरपूर्वक सबका स्वागत किया और उनके अचानक इस दौरे के लिए आश्चर्य व्यक्त करने का अभिनय किया। सबसे पहले अध्यक्ष ने अपना गला साफ़ करते हुए समिति की ओर से शोक संतप्त परिवार के लिए अपनी संवेदनाएं व्यक्त की। लेंटिना ने यथोचित तरीके से उनका जवाब दिया और उनके इस दौरे के बारे में जानना चाहा। अध्यक्ष ने अपने सहकर्मियों की ओर देखा और पहले से तैयार अपने भाषण के साथ अपनी बात शुरू की। उन्होंने नगर प्रशासन का भी पक्ष रखा। लेंटिना ने सम्मानपूर्वक बीच में ही टोकते हुए कहा, ''धन्यवाद अध्यक्ष महोदय, मैं इस मामले के प्रति आपकी जिम्मेदारी समझती हूं और आपकी सहायता के लिए मैंने कानूनी दस्तावेज भी तैयार करा रखे हैं। कृपया इस बारे में अपने सहकर्मियों से बात करें और मुझे यथाशीघ्र बताएं कि क्या आपको मेरी शर्तें मंजूर है।''

अध्यक्ष ने उस तीखी नजरों से घूरा पर बोला कुछ नहीं। हालांकि ये स्पष्ट था कि लेंटिना ने भाषण के बीच में रोककर उनका अपमान किया था। अध्यक्ष महोदय अपने अन्य सहकर्मियों की तरफ मुड़ते बोले, ''भाइयो! आप लोग क्या कहते हो? क्या हम इस मुद्दे को यहीं बैठकर तय करें या फिर ऑफिस में जाकर इस पर चर्चा करें।'' दूसरे ने दस्तावेज पढ़ते हुए अधिकारिक लहजे में कहा, ''हम यहीं बैठकर इसे कर लेते हैं। शर्त्तें काफी सरल है। मुझे लगता है इसे स्वीकार करने में कोई बुराई नहीं है क्योंकि हमें शहर के लिए पर्याप्त ज़मीन तो मिल ही रही है जिसकी हमें बहुत दिनों से जरूरत थी। ये दयालु महिला हमारी मदद के लिए ही तो आई है। वो नि:संदेह बधाई की पात्र है।'' बैठक में किसी एक सदस्य के द्वारा इस तरह सकारात्मक विचार देने से अब और ज्यादा कुछ कहने की जरूरत नहीं थी। इतने में बैठक समाप्त हो गयी। हालांकि कुछ दिन बाद एक दूसरी डीड तैयार की गई जिसके अनुसार अब नया कब्रिस्तान नगर समिति के अधीन हो गया था। लेंटिना ने अपने बेटे और बहुओं की उपस्थिति में कानूनी औपचारिकताएं पूरी करते हुए कहा, क्या मैं अपनी कब्र के लिए ज़मीन का टुकड़ा चुन सकती हूँ? उसके इस अनुरोध से सभी हक्के-बक्के रह गये। ऐसा लग रहा था जैसे वो बच्चों की तरह अपने लिए चॉकलेट की मांग रही थी न कि मौत की जगह।

लोगों को स्तब्ध देख उसने झट से बात पलटते हुए कहा, ''क्या सबको पता है, मैं वहां पेड़ लगाना चाहती हूं? उसकी इस बात पर किसी ने कुछ नहीं कहा। ज्यादातर लोग जा चुके थे। बस नगर समिति का अध्यक्ष वहाँ रह गया था

जो धीमी आवाज़ में कह रहा था, ''आखिर दानकर्त्ता होने के नाते अपनी मनपसंद ज़मीन चुनने का पहला हक उसी का है।''

उसके बाद लेंटिना और बाबू अक्सर ज़मीन देखने जाया करते। एक दिन बाबू एक माली को ले आया जो अपने साथ अमलतास के पौधे ले आया था जिसे उसने उस नये कब्रिस्तान में लगा दिया। लेंटिना ने अब वहां जाना धीरे-धीरे कम दिया था क्योंकि रोज़-रोज़ की भागदौड़ से वह बहुत थक गई थी। उसने उस जमीन के उस टुकड़े पर कैसे अपना अधिकार जमाया, ये अभी भी उसके लिए पहेली की तरह था। एक सपना जो अब साकार हो गया था। आह! वो टुकड़ा उसके लिए कितना कीमती था जहां वो दफ़नाया जाना चाहती थी और जहां हर साल अमलतास के सुंदर पीले फूल खिलते! आह! अमलतास का पेड़। सोच कर ही वो उत्तेजना और उमंग से भर गयी। पर क्या इस बार पौधे जीवित बचेंगे? क्या सच में वे खिलेंगे? क्या वो इतना लंबा जी पायेगी कि उन्हें खिलते देख पाएं? यही बातें उसके दिमाग में लगातार घूमती रहती। इस तरह अमलतास के फूलों का एक और मौसम (मई) और बीत गया। लेंटिना के लिए राहत की बात थी कि उसके पेड़ सही सलामत थे और ठीक से बढ़ रहे थे। उसका विश्वासपात्र बाबू उसे अमलतास से जुड़ी खबरें लगातार देता रहा।

कभी-कभार वो बाबू से अमलतास दिखाने को कहती तो बाबु कहता, ''बहुत जल्दी आपको वहाँ लेकर चलूँगा मैडम, लेकिन आज नहीं।'' अमलतास का मौसम धीरे-धीरे करीब आ रहा था। इन सर्दियों में लेंटिना को ठंड लग गई और वह बुरी तरह बीमार पड़ गई। घरवालों को लगा शायद अबकी बार वो ये

सर्दी नहीं देख पाएगी। यहां तक कि उसके डॉक्टर जो हर बार उसके कमरे में उसकी सेहत की जांच करने आते, उन्हें भी लगा कि लेंटिना शायद इस बार की ठंड झेल न पाये। केवल बाबु ही था जो इस बुरे वक्त में शांत व स्थिर था। जब रिश्तेदार या जानने वाले लेंटिना से मिलने आते तो बाबू हमेशा दरवाज़े के बाहर खड़ा उनपर नज़र रखता ताकि लोग मरीज के पास ज़्यादा समय तक ना रूके। कभी-कभी तो लेंटिना खुद जानबूझकर सोने का नाटक करती जब उसके नजदीकी रिश्तेदार उससे मिलने आते तब तो बाबू के पास उन्हें बाहर का रास्ता दिखाने का और अच्छा मौका मिल जाता। दिन में तो बाबु अपने घर चला जाता। लेकिन वहां से आते ही लेंटिना के कमरे में हाजिरी लगाता। वह अक्सर दबे पांव कमरे में आता जैसे ही दोनों की नजरें मिलती लेंटिना धीरे से सिर हिलाती फिर एक ओर लुढक जाती। ये इस बात का संकेत था कि वो अभी-अभी बगीचा देखकर आया है और फूल ठीक-ठाक है। लेंटिना के लिए ये खबर संजीवनी का काम करती। धीरे-धीरे खाना और दवाइयों ने तो जैसे अपना प्रभाव दिखाना बंद कर दिया था।

सबको हैरत में डालते हुए लेंटिना ने किसी तरह ये सर्दियां काट ली। फरवरी की एक सुबह उसने अपने कमरे की कॉलबेल बजाई और नौकरानी को चप्पल और गाऊन लाने को कहा। नौकरानी ने पूछा कि क्या वह उसकी चाय उसके कमरे में ही ला दें पर लेंटिना ने उसे ड्राइंग रूम में ले चलने को कहा। वहाँ वो अंगीठी के पास ही बैठ गई और उसकी चाय आ गई। वो चाय की चुस्कियाँ लेने लगी। उस दिन के बाद धीरे-धीरे उसने घर के भीतर टहलना शुरू कर दिया था। जब उसकी बहुएँ उससे मिलने आयी तो वो बड़ी ही गर्मज़ोशी और

प्रसन्नता से उनसे मिली। उसने उन्हें कुछ गहने जैसे- एक अंगूठी, एक कान के टॉप्स और हार दिये। बेटे भी माँ के भीतर नई ऊर्जा और जोश देख खुश थे। वे माँ से पारिवारिक मामलों और व्यापार से जुड़े मसलों पर बात करने लगे। उन्होंने उन मुद्दों पर भी बात की जो उनके पिता के जीवनकाल में शुरू हुए थे पर संयोगवश किसी नतीजे पर नहीं पहुँच पाचे थे। लेंटिना से बात करते हुए वे इस बात पर हैरान थे कि उनकी माँ की याद्दाश्त अभी भी कितनी तेज़ थी? कभी-कभी वो उन्हें बड़ी रहस्यमयी लगती। माँ की सुधरती सेहत देखकर वे खुश थे। अब उनकी चिंता कम हो गई थी।

उस साल जब लेंटिना की सेहत में तेजी से सुधार हो रहा था, कब्रिस्तान में कुछ अनोखा घटित हुआ जिसे सिर्फ बाबू जानता था और उसने इस बारे में किसी से कुछ नहीं कहा। लेंटिना की ज़मीन पर लगे दो अमलतास में से एक दुर्बल व क्षीण होकर सूख गया। जबकि दूसरा हैरतअंगेज तरीके से लहलहा उठा और हैरत की बात ये थी कि उसकी नन्हीं डालियों पर पीले फूलों की कुछ कोपलें आ गई थी। पेड़ अभी बहुत छोटा था इसलिए बाहर से नहीं दिखता था। लेकिन एक दिन बाबू ने उसे ढूंढ ही लिया। वह लेंटिना को इसकी खबर देने के लिए उतावला हो गया फिर सोचा अगर पेड़ अगर उम्मीद के हिसाब से नहीं फूला तो हो सकता है इस खबर से उसकी मालकिन की सेहत पर बुरा असर पड़े और उसकी तबीयत फिर से खराब हो जाये इसलिए वो चुप रहा। वो भीतर से थोड़ा खुश और थोड़ा डरा हुआ भी था। खुश इसलिए कि खिले अमलतास देखने की उसकी मालकिन की अधूरी ख़्वाहिश पूरी होने वाली थी और भयभीत इसलिए कि कहीं ऐसा न हो

कि उसकी मालकिन अगले मई पेड़ पर खिले अमलतास के फूलों को देख निश्चिंत होकर ये सोचने लगे कि अब अंतिम ख्वाहिश पूरी हुई। अब आराम से मौत का इंतजार किया जाए। ऐसा भी नहीं था कि वो अपनी जान ले लेती पर हाँ इस बात की पूरी गुंजाइश थी कि बेफ़िक्री के आलम में खाना-पीना छोड़ अपनी सेहत बिगाड़ लेती। इस आशंका के बावजूद बाबू को पता था कि वो प्रकृति की इस बनाने और बिगाड़ने के खेल को किसी कीमत पर रोक नहीं पायेगा। ये तय था कि अगले मई तक पेड़ और बड़ा हो जाता और इसकी डालियाँ ऊँचे तक फैल जाती फिर यह राहगीरों को दिखने लगता तब उसके लिए इसे मालकिन से छुपा पाना मुश्किल होता। वो इस द्वंद्व में फँसा रहा कि क्या उसे मालकिन को इसकी खबर देनी चाहिए? या फिर वो अगले मई तक यह खबर सुनने के लिए जीवित ही न रहे। अगर लेंटिना उसमें एक दोस्त तलाश रही थी तो बाबू भी उसके साथ अपने रिश्तों को दोबारा तोल रहा था। बाबू ने इस खबर को अगले मई फूलों के मौसम तक राज़ बनाकर रखा।

उसके पति की मृत्यु तक भले ही उसने बाबु के साथ शिष्टतापूर्ण व्यवहार किया था और मालिक व नौकर के बीच की एक नैतिक सीमा को बनाये रखा था। लेकिन धीरे-धीरे ये सीमायें टूटती गई। अब वह उस पर पहले से ज़्यादा निर्भर रहने लगी। पहले एक कर्त्तव्यपरायण सेवक फिर एक निष्कलंक दोस्त और अंत में एक विश्वासपात्र के रूप में उनका रिश्ता कदम-दर-कदम बदलता रहा। बाहर से तो उन्होंने इन सीमाओं का कभी उल्लंघन नहीं किया लेकिन धीरे-धीरे सबको ये पता हो गया कि लेंटिना अपनी हरेक जरूरत के लिए कैसे अपने पुराने ड्राइवर पर

विश्वास करती है। हैरानी की बात थी कि उसके बेटे और बहुओं ने भी उनके इस रिश्ते को सहर्ष स्वीकार कर लिया था। वे अपनी बीमार और कमज़ोर माँ की खुशी लिए कुछ भी करने को तैयार थे। एक दृढ़ इच्छा शक्ति वाली औरत और उसका भरोसेमंद नौकर मानवता के एक अनोखे बंधन से बंधे थे जो आस्था व इमानदारी पर टिकी थी।

धीरे-धीरे नया वर्ष भी आ पहुंचा। लेंटिना के चेहरे पर बुढ़ापे के चिन्ह साफ़ नज़र आने लगे थे। पिछली पूरी सर्दियों में परिवार ने उसका अच्छा ख़्याल रखा था। उसे कभी अकेला नहीं छोड़ा था। जब मार्च आया और मौसम थोड़ा गर्म होने लगा तो लेंटिना ने कार में बाहर घूमने की अपनी इच्छा जाहिर की। पहले तो घरवालों ने उसकी इस बात को नज़रअंदाज कर दिया पर जब वो खाना-पीना छोड़ ज़िद पर अड़ गई तो परिवार वाले तैयार हो गये। अब वह नियमित रूप से हफ़्ते में दो बार अपनी नौकरानी के साथ कार में बाहर जाने लगी। घरवालों ने तय किया था कि एहतियातन उसकी नौकरानी भी उसके साथ जाया करेगी। लेंटिना ने इसका विरोध नहीं किया। अब वह पहले से ज्यादा खुश दिखने लगी थी और ठीक से खाने-पीने भी लगी थी। उसके चेहरे की रंगत बदलने लगी। लेकिन घूमने-फिरने के दौरान वो अक्सर खामोश रहती। अगर नौकरानी या बाबू उससे शहर में होने वाली किसी घटना का ज़िक्र भी करते तो वो चुप रहती। एक शब्द न बोलती। घर आने के बाद सीधे अपने कमरे में चली जाती और सीधे रात के खाने के समय ही बाहर निकलती।

अब अगले मई की शुरूआत हो चुकी थी। इस दौरान लेंटिना में एक खास बदलाव आया, अब वह बार-बार बाहर जाना चाहती थी। लेकिन डॉक्टर ने उसे

सख़्त हिदायत दे रखी थी कि वह हफ़्ते में सिर्फ दो बार ही बाहर निकले। उसके बाहर जाने की हठ को देखते हुए एक दिन बाबू उसके कमरे में गया और उससे कुछ बोलने की अनुमति मांगी? बाबु ने लेंटिना को यह आश्वसन दिया कि वह पौधों पर कड़ी नजर रख रहा है और निश्चित रूप से इस मौसम, उस पर फूल खिलेंगे। पिछले साल कब्रिस्तान में क्या हुआ था, उसने अभी तक इसका जिक्र लेंटिना से नहीं किया था। इधर बीमारी के कारण लेंटिना को ज्यादातर समय घर के भीतर ही रहना पड़ता था इसलिए उसे बाहर की ज्यादा खबर नहीं थी। पर अब, जब वह बाहर निकलने लगी थी इसलिए सबसे पहले वह नये कब्रिस्तान को देखना चाहती थी और ये जानना चाहती थी कि अमलतास के फूल खिले हैं या नहीं। कार से गुज़रते वक्त जब उसने शहर के दूसरे पेड़ों को फूलों से लदे देखा। लेकिन अपने अमलतास को वहाँ न देख उसे बड़ा दुख हुआ। कुछ दिनों बाद उसने बाहर जाने से साफ़ मना कर दिया। बहुत दिनों बाद सैर के दौरान बाबु ने उस दिन कब्रिस्तान में कुछ अनोखा देखा। कुछ ऐसा जिसके लिए वो भगवान से हमेशा प्रार्थना करता था। नन्हें अमलतास के पौधों में पीले फूल निकल आये थे और समूची डाली फूलों से भर गयी थी। बाबू खुशी से उछल पड़ा। तो लेंटिना को ये खुशखबरी देने भागा। रास्ते में उसने इसकी पूरी तैयारी की, कि वह लेंटिना के सामने कैसे जायेगा और किस तरह उसे ये खुशखबरी देगा? इसके लिए उसने पूरे रास्ते बोल-बोल कर इसकी प्रैक्टिस की ताकि उसकी मालकिन इस खुशखबरी को सुनकर संयमित रहे और ज़्यादा उत्तेजित न हो जाए। घर पहुंचकर उसने धीरे से लेंटिना के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया। हैरानी की बात ये कि लेंटिना पहले से ही जगी हुई थी। शायद उसे पहले से कि बाबू के आने का आभास हो गया है।

उसने धीमी आवाज में आदेश दिया, ''बाबु अंदर आ जाओ। मैं तुम्हारा ही इंतजार कर रही थी।'' बाबु ने अंदर जाकर बात शुरू ही की थी कि लेंटिना ने उसे बीच में टोकते हुए कहा, ''मुझे पता है तुम क्या कहने वाले हो?' इसे मेरी अंर्तआत्मा ने पहले ही महसूस कर लिया था। बाबू ने देखा, लेंटिना पहले से ऐसे तैयार बैठी थी जैसे उसे किसी बड़े उत्सव में जाना हो, साथ में नौकरानी भी तैयार खड़ी थी। वृद्ध लेंटिना डगमगाते कदमों से अपने डंडे पर घिसटते हुए आगे बढ़ी और बोली, ''अब चलो भी। किस बात का इंतजार कर रहे हो?''

हक्का-बक्का खड़ा ड्राइवर और स्तब्ध खड़ी नौकरानी उस वृद्ध महिला के पीछे-पीछे चल पड़े। लेंटिना ऐसे चल रही थी मानो उसके पैरों में स्प्रिंग लगे हो। वे बाहर आ चुके थे। लेकिन सिर्फ लेंटिना और बाबू को ही पता था कि इस सब का मतलब क्या था? कब्रिस्तान पहुचकर लेंटिना उदास हो गई। नौकरानी छोटे से पेड़ पर उगे अमलतास के उन फूलों को देखकर हैरान रह गई। लेंटिना ने एक आह भरी और बाबु को पार्क के दूसरी ओर उस तरफ़ कार मोड़ने का आदेश दिया, जो शहर से चार किलोमीटर दूर था और जो शहर की सबसे ऊंची जगह थी और जहां से समूचे शहर को देखा जा सकता था। वो एक लोकप्रिय पिकनिक स्थान था जहाँ अक्सर लोगों की भीड़ होती। जब वे ऊंचाई पर पहुंचे तो वहां ज्यादा लोग नहीं थे। एक शांत कोना ढूंढकर वे तीनों आराम करने बैठ गये। नौकरानी कुछ बिस्किट और चाय का फ्लास्क साथ ले आई थी। तीनों ने मिलकर चाय और बिस्किट खायें। आधे घंटे बाद वे घर वापस आ गये। कमरे में घुसेते ही लेंटिना ने अपनी नौकरानी और बाबु से हाथ मिलाते हुए बुदबुदाकर कहा, ''भगवान तुम्हारा भला करे।''

लेंटिना लगभग एक हफ़्ते तक अपने कमरे में ही रही। हाँलाकि घरवालों ने उसे बाहर निकलने और घूमने की राय दी पर उसने साफ़ मना कर दिया। यहां तक की उसने अपनी नौकरानी से सेवायें लेनी भी बंद कर दी। उसने खुद को जैसे कमरे में बंद कर लिया। पांचवें दिन उसने अपनी नौकरानी को बुलाकर उसे नहाने में मदद करने और उसका मनपसंद कपड़ा पहनाने को कहा। फिर उसने उसे रात का भोजन लगाने को कहा क्योंकि आज वह थोड़ा जल्दी खाना चाहती थी। नौकरानी ने ठीक वैसा ही किया और फिर उसे गुडबाय बोलकर अपने क्वार्टर चली गई।

अगली सुबह जब नौकरानी ने सुबह की चाय के साथ लेंटिना के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया तो भीतर से कोई आवाज़ नहीं आयी। वह बार-बार दरवाज़ा खटखटाती रही पर भीतर कोई हलचल नहीं हो रही थी। दरवाजे को धक्का देकर वो अंदर घुसी। उसने देखा लेंटिना अपने बिस्तर पर ऐसे फैली है मानो गहरी नींद में सो रही हो। बगल की टेबल पर चाय रखते हुए नौकरानी ने धीरे से आवाज लगाई, ''मैडम मैं आपकी चाय ले आयी हूं।'' नौकरानी ने पहले की तरह खिड़की के सारे पर्दे हटा दिये। जब वो बिस्तर के करीब आई उसने देखा लेंटिना का शरीर अकड़ा पड़ा था। उसके चेहरे पर एक गहरी उदासी थी। वह भागकर घरवालों को बुला आई। बेटे-बहुएं और अन्य नौकर-चाकर वहां आ पहुंचे। बाबु को छोड़ सभी भागते हुए भीतर लेंटिना के कमरे में आये। बाबू बाहर खड़ा बच्चों की तरह फूट-फूटकर रो रहा था। बेटे, करीब आकर माँ की नब्ज़ टटोलने लगे। डॉक्टर के आने के बाद इस बात की पुष्टि हो गई कि इस घर की मालकिन, लेंटिना दुनिया छोड़ चुकी है।

इस तरह एक साधारण स्त्री जिसकी सिर्फ़ एक ही ख़्वाहिश थी कि उसकी कब्र पर हर साल अमलतास खिले, के नाटकीय जीवन का अंत हो चुका था। हर मई उस छोटे शहर के नये कब्रिस्तान में उसकी कब्र पर लगे अमलतास के पीले फूल अपनी पूरी भव्यता के साथ खिलते। उस मैदान की सबसे बड़ी खासियत ये थी कि वहाँ पत्थर से बना एक भी स्मारक नहीं था, हर तरफ़ बस फूल ही फूल थे। चारों ओर फूलों की झाड़ियों से अद्‌भूत दृश्य उभरता। वहाँ हर तरफ अड़हूल, क्रॉटन, कमलीया, कनेर और जयपाल के फूल मोतियों के मानिंद बिखरे पड़े थे। हर एक या दो कदम पर जल कपोय के पेड़ एक दूसरे से जुड़े प्रतीत होते। जैसे प्रेमी जोड़े एक दूसरे का आलिंगन कर रहे हो। दूर किनारे पर पीपल और अशोक के पेड़ भी बड़े मनभावन लगते। और अगर ध्यान से देखें तो आपको ये देखकर हैरानी होगी कि पूरे मैदान में सिर्फ एक ही अमलतास है जो अन्य सभी पेड़ों के बीच अपने संपूर्ण अस्तित्व के साथ मानवीय अनश्वरता से परे शान से खड़ा है। तो है न हर मई कुछ अलहदा।!

❐❐❐

2.2 शिकारी का अन्त

शिकार का मौसम करीब था ऐसे में शिकारी, इमाचानोक मस्ती में गुनगुनाते हुए अपनी शिकारी बंदूक को चमकाने में जुटा था। सुर तो ठीक लग नहीं रहे थे, सो बेसुरी राग में ही गुनगुनाता जा रहा था। पास के झोपड़े में धान के गट्ठर साफ़ कर रही उसकी बेटी और भतीजी उसकी इस हरकत पर खिखिया रही थी। वो जितने ऊंचे सुर में गाता लड़कियाँ उतना ही ठठाकर हँस देती। इमचानोक को अच्छी तरह पता था कि लड़कियाँ उसकी बेसुरी आवाज़ पर ही हँस रही हैं फिर भी वो जान बूझकर और जोर से गाने लगता और उनकी ठिठोली में खुद भी शामिल हो जाता।

झोपड़े में बैठी लड़कियों ने लगभग आधे से ज़्यादा गट्ठरों को साफ़ कर चावल इकट्ठा कर लिया था उसमें आधी टोकरी साफ़ चावल वे बाहर दाना चुग रहे चूजों को डाल आई। चावल की भीनी खुशबू पाते ही चूज़ों का झुंड ज़मीन पर बिखरे चावल की ओर लपका और मिनटों में ही उसे चट कर डाला। चूजों को दाना डाल लड़कियों ने भीतर आकर आकर इमचा से पूछा, ''चाचाजी बात क्या है? आज तो आप बड़े खुश लग रहे हैं? कोई बड़ा शिकार हाथ लगा है क्या?''

इमचानोक गहरी साँस लेते हुए बोला, ''शिकार का तो नहीं। पर क्या पता आज वो मोटा दुष्ट सूअर ही हाथ लग जाये जिसने सालों से मेरी नाक में दम कर रखा है? देखा नहीं तूने! कैसे हर साल वो हमारी पकी फ़सल बर्बाद कर देता है। तभी तो मैं अपनी बंदूक धो-पोछकर चमका रहा हूं ताकि उस दुष्ट शैतान को मार सकूं। इस बार तो पक्का मैं उसे नहीं छोड़ने वाला। वो सूअर का बच्चा मेरी हाथों से इस बार जरूर मरेगा!''

पिछले पाँच सालों से इमचानोक, उस सूअर की तलाश में जंगल-जंगल भटक रहा था, पर मज़ाल कि वो पाजी उसके हाथ लग जाए। वो दुष्ट जंगली सूअर उसकी फ़सल के साथ-साथ गाँववालों की फ़सल भी बर्बाद कर रहा था। उस पर भी मुसीबत ये कि वो हर बार इमचानौक की सबसे अच्छी फ़सल पर ही धावा बोलता। हार कर इमचानोक की पत्नी ने उसे सुझाया, ''सुनते जी?'' क्यों न हम इस बार अपनी सबसे अच्छी फ़सल खेत के पूरब वाले हिस्से में उगायें और वहां मेड़ इतनी ऊँची कर दें उस दुष्ट सूअर को इसका पता ही न चले। पूरब वाला हिस्सा थोड़ी चढ़ाई व फ़िसलन भरा भी है, वो सूअर का बच्चा इसे बर्बाद तो क्या छू भी नहीं पायेगा। इमचानोक को तंगचेतला की यह सलाह अच्छी लगी। उसने ऐसा ही किया। पर होनी को कौन टाल सकता था? तंगचेतला और इमचा की सारी योजनायें तब धरी की धरी रह गई जब एक बार उस जंगली सूअर ने उनकी सारी फ़सल तहस-नहस कर डाली। ऐसा मालूम होता था, सूअर को उनकी योजना की भनक पहले से ही थी। हालांकि गांववालों द्वारा उसे कई बार उसे खेतों में देखने की पुष्टि की गई थी। इस आधार पर ये अनुमान लगाया जा सकता था कि उस जंगली सूअर की चाल-ढाल और आकृति अज़ीबो गरीब थी। पीछे की ओर गोल मुड़े उसके दो पीले दाँत बड़े भयानक प्रतीत होते थे। बात सिर्फ़ इतनी भर नहीं थी कि वह फ़सलों को चट करता था बल्कि पैरों से रौंदकर उन्हें तहस नहस भी कर देता था। इससे पकी फ़सल को भारी नुकसान पहुंचता। सबसे ज़्यादा नुकसान तो इमचानोक की फ़सल को होता। पर संयोग ऐसा कि, इमचानोक आज तक उस सूअर को देख नहीं पाया था। ऐसा नहीं कि उसने उसे ढूँढ निकालने की

कोशिश नहीं की थी। सर्द रातों में रात-रात भर जगकर उसकी टोह लेता पर कोई फायदा नहीं। ऐसा लगता था, सूअर को इमचानोक की उपस्थिति की भनक पहले ही लग जाती थी। जिस दिन इमचा अपने खेतों की पहरेदारी करता, उस दिन तो वो सूअर भूलकर भी उधर नहीं फटकता।

अपने इस दुशमन का ख्याल आते ही इमचा की ऊंगलियां बंदूक की ट्रिगर पर और सख़्ती से भिंच गई। रंग-रोगन डालकर उसने बंदूक की नाल को खूब अच्छी तरह चमका लिया था। इमचानोक की मेहनत साफ़ रंग लाई, बंदूक एकदम नई नवेली दुल्हन की तरह चमक उठी। सफ़ाई के बाद वो झोपड़े से कारतूस की पूरी डिबिया उठा लाया। जिसे उसने पिछले महीने ही खरीदा था, पूरी की पूरी भरी हुई डिबिया। बस दो कारतूस कम थे जिसे उसने अपने अतरंग मित्र को ताजा मांस के बदले उधार दिया था। इमचानोक ने बाहर धूप में धो-पोछकर रखी अपनी बंदूक को प्यार से चूमकर सहलाया और उसे झोपड़े में रखी अलमारी के सबसे उपरी दराज़ में कागज़ में लपेटकर रख दिया ताकि उसे शिकार के वक्त आसानी से निकाल सके।

तंगचेतला शाम को जब खेतों से वापस लौटी तो उसने देखा कि इमचानोक अपने दोस्तों के संग मज़े से काली चाय की चुस्की ले रहा था। उन्हें इस तरह मस्ती करते देख तंगचेतला ने अंदाजा लगाया कि, हो-न-हो इन लोगों ने उस खतरनाक सूअर का पता लगा लिया है। फ़सल कटाई के मौसम में गांववाले ये सोचकर और ज्यादा दुखी और परेशान हो जाते कि पता नहीं इस बार किसकी फ़सल मारी जाए? सबको बस यही चिंता रहती कि अबकी बार किस पर गाज़

गिरेगी? ऐसा छठी बार हो रहा था जब उस उत्पाती सूअर ने खेतों में खड़ी फ़सल को बर्बाद कर डाला था। हर गुजरता साल गांववालों की चिंता को और बढ़ा देता। गांववाले मायूस थे। उन्हें सूअर से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं सूझता था। अब उनका भरोसा इमचानोक जैसे माहिर शिकारी से भी उठने लगा था। वे इस बात को लेकर पूरी तरह मायूस हो गये थे कि गांव में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं जो उन्हें इस मुसीबत से छुटकारा दिला सके।

एक कुशल शिकारी के रूप में इमचा को लोगों का भरोसा जीतने में सालों लगे थे। उसके लिए इस प्रसिद्धि को पाना इतना आसान नहीं था। बहुत पहले वो गांव के ही एक प्राइमरी स्कूल में शिक्षक था। पर गाँव के लोग उसे शिक्षक कम शिकारी के रूप में ज़्यादा पसंद करते थे। इसके लिए उसे सरकार से कई प्रशस्ति पत्र और सम्मान भी प्राप्त हो चुके थे। अभी कुछ साले पहले ही उसने एक खूंखार और पागल हाथी को मार गिराया था, जिससे खुश होकर सरकार ने उसे ईनाम दिया था। हाथी के बढ़ते आतंक और उपद्रव को देखते हुए स्थानीय प्रशासन ने ये ऐलान किया था कि ''जो भी उसे मार गिराएगा वो भारी ईनाम का हकदार होगा।'' हाथी के आतंक के चलते आसपास के शिकारियों ने अपने हाथ खड़े कर दिये। अंत में इमचानोक की बारी आई। जाना तो वो भी नहीं चाहता था पर सरकारी आदेश के चलते आधे-अधूरे मन से तैयार हो गया। सरकार की खिलाफ़त तो कर नहीं सकता था सो मन ममोसकर शिकार के लिए हामी भरनी पड़ी। कमिश्नर ने दूभाषिये के जरिये इमाचा को एक शिकारी राइफल और कुछ अन्य हथियार भिजवाए, साथ में ये भी कहलवा भेजा कि उसे शिकार में ग्राम-परिषद्

की कोई मदद तो नहीं चाहिए इमचानोक को सात दिनों का पर्याप्त समय दिया गया।

वह पेशोपेश में था। वो शिकार के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं था। डींगें मारने की बात कुछ और भी, पर शिकार के मोर्चे पर कमर कसना बेहद मुश्किल और खतरनाक। एक ओर सरकार द्वारा दिया जाने वाला सम्मान और मेडल था तो दूसरी ओर शिकारी लाइसेंस को रद्द होने और छीन जाने का डर। खीझकर वो सरकार के नुमाइंदे को मन ही मन कोसने लगा, ''इन साहब लोगों को तो जंगल का कुछ अता-पता होता नहीं बस आदेश फरमा देते हैं? उन्हें क्या लगता है? हाथी का शिकार करना इतना आसान है? क्या वो उपद्रवी पागल हाथी एक जगह बैठा मेरी बाट जोह रहा होगा कि, ''आ शिकारी मुझे मार!'' इन बाबू लोगों को ज़रा भी अंदाजा नहीं कि ये जानवर कितने चालाक होते हैं? ये हम इंसानों की तरह ही सोचते हैं, अगर खतरे की ज़रा सी भी भनक लग जाये तो उस इलाके में कदम भी नहीं रखते।'' इमचानोक बड़बड़ाता रहा, ''बैठे बिठाये कौन सी मुसीबत मोल ले ली मैंने?''

पर दरअसल सारा पेंच फंसा था सरकारी आदेश का। नाफ़रमानी का सीधा सा मतलब था आफ़त मोल लेना। उधर सरकार ने भी ये घोषणा कर रखी थी कि जो कोई भी सरकार के इस काम में सहयोग नहीं करेगा उसका लाइसेंस जब्त कर लिया जायेगा। माहिर शिकारी का तमगा छीन जाने का डर इमचा को परेशान किये जा रहा था। सरकार के डर व सख़्त आदेश ने अंततः इमनाचोक को हां बोलने को मजबूर कर दिया। अब बारी थी तैयारी की। सबसे पहले उन शिकारियों की सूची

बनानी थी जो शिकार के इस मिशन में उसकी मदद कर सकते थे। उसने अपने कुछ पुराने शिकारी साथियों को इसमें शामिल किया। योजना के पहले चरण में शिकारियों को उन इलाकों का पता लगाने को भेजा गया जहां फ़सलें सबसे ज्यादा बर्बाद हुई थी ताकि नुकसान का सही-सही अंदाजा लगाया जा सके। शिकारी दल के वापस लौटने पर सदस्यों की आपात बैठक बुलाई गई। सारी रात मंत्रणा चलती रही। उस समूह के अधिकतर सदस्य मंझे हुए शिकारी थे चूंकि उन्होंने अपनी ज़िंदगी का ज़्यादातर हिस्सा जंगल में बिताया था इसलिए उन्हें जंगल के चप्पे-चप्पे की पक्की खबर थी। वे जानवरों की प्रतिक्रिया से उनके अगले कदम का अंदाज़ा लगा लेते थे। सबने मिलकर तय किया कि हाथी को फ़ांसने के लिए घने जंगल के बीचो-बीच एक फ़ंदा तैयार किया जाए ताकि हाथी को उसमें फंसाया जा सके। उन्हें पकड़ने का बस यही एक तरीका था। खेतों में हो रही पहरेदारी की भनक उन्हें पहले ही लग चुकी है, सो जाहिर है वे जंगल की तरफ ही रुख करेंगे।

साथी शिकारियों ने मिलकर जंगल के बीचो-बीच बिल्कुल एक नये अनजाने जगह को चुना। जिसे पहले कभी नहीं देखा गया था। दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद आखिरकार उन्होंने इतना बड़ा गड्ढा खोद ही लिया जिसमें हाथी को आसानी से फंसाया जा सके। हाथी को गुमराह करने के लिए गड्ढे को घास-फूस से ढंक दिया गया। सारी तैयारियों के बाद वे बेस कैंप लौट आये जहां उन्होंने ठंडे चावल और चाय की चुस्कियों का मज़ा लिया। थोड़े आराम के बाद वे बेसब्री से हाथी का इंतज़ार करने लगे।

पहली रात यूं ही बीत गई। हाथी का कहीं कोई अता-पता न था। दूसरे दिन शाम होते ही झमाझम बारिश शुरू हो गई। इससे शिकारियों को थोड़ी परेशानी हुई।

बंदूक के नली में पानी घुसने का डर था सो उन्होंने झाड़-फूस के नीचे अपनी बंदूकें ढंक दी। चूंकि घने जंगल में खतरनाक जानवरों का खतरा था इसलिए वे अपनी सुरक्षा के लिए सरकारी बंदूक के अलावा दो और बंदूकें भी साथ लाये थे। बारिश थमने के बाद सबने अपनी-अपनी पोजिशन संभाल ली। वे इस बात को लेकर परेशान थे कि कहीं उनके बंदूक के निशाने पर कोई दूसरा जानवर न आ टपके। इससे रंग में भंग पड़ सकता था। इमचनोक को छोड़ समूह के अन्य सभी सदस्य भीतर से काफी डरे हुए थे। पर इमचा बेफ़िक्र था। वह मुस्तैदी से अपने मोर्चे पर डटा था। सोच रहा था मौका अच्छा है आज अपने हाथों से हाथी का शिकार करेगा। उसे खुद पर पूरा भरोसा था। आज वो बिल्कुल चूकने वाला नहीं था। अगर सब ठीक रहा और बीच में कोई गड़बड़ी न हुई तो आज पक्का ही शिकार कर डालेगा। रात गहरी होती जा रही थी। जैसे-जैसे अंधेरा बढ़ता गया, एक अज़ीब-सी खामोशी ज़ंगल को अपने गिरफ़्त में लेती गई। भयानक सन्नाटे के बीच ऐसा लग रहा था जैसे शिकारी कहीं खुद शिकार न बन जाये। दल के अन्य सदस्य भले ही डटे हुए थे पर इमचानोक ने तो जैसे डरना ही नहीं सीखा था। बेफ़िक्री से अपने मोर्चे पर डटा रहा। गुट के सदस्यों पर धीरे-धीरे नींद हावी होने लगी थी, वे ऊंघ रहे थे जबकि इमचालोक पूरी तरह सत्तर्क और मुस्तैद था। उसे मालूम था कि जंगल में एक सैकेंड के लिए भी पलक झपकने का मतलब था खतरा मोल लेना। उसने धीरे से कोहुनी मारते हुए अपने बगल वाले ऊंघते साथी को जगाया। इस तरह सब ने एक दूसरे को एक के बाद एक कोहुनी मारकर नींद से जगाया। घुप्प अंधेरे में आंखें मींचते हुए उन्होंने एक बार फिर अपनी अपनी पोजिशन संभाली।

रात लगभग बीत चुकी थी। पौ फटने ही वाला था पर अंधेरा अभी पूरी तरह छंटा नहीं था। शिकारी चौकन्ने हो मुस्तैदी से अपनी पोजिशन संभाले हुए थे। उन्हें लगा जैसे उनका आज का दिन भी बेकार जायेगा। हाथी का अबतक कहीं नामों-निशान नहीं था। चारो ओर पसरे गहरे सन्नाटे ने ज़िन्दगी की धड़कनें मद्धिम कर दी थी। ऐसा लग रहा था जैसे सदियों से अलसाये जंगल ने अब जाकर गहरी नींद ली थी। खामोशी के इसी पल में अचानक एक परिंदे की फ़ड़फ़ड़ाहट ने जंगल को जैसे नींद से जगा दिया। अलसाये शिकारी फिर से चौकन्ने हो गये। चारो ओर कोलाहल मच गया। बंदरों का झुंड चीख़-पुकार मचाने लगा। इमचानोक ने जब गौर से सुना तो उसे शोर के बीच कुछ और भी सुनाई पड़ा। वह उछलकर खड़ा हो गया। उसने अपने साथियों से फुसफुसाकर कहा, ''सतर्क हो जाओ, वो यहीं है!'' सभी शिकारी अपनी पोजिशन संभाले बुत की भांति झाड़ियों के पीछे चुपचाप खड़े हो गये। सबसे ऊपर पोजिशन संभाली थी इमचानोक ने ताकि खतरे की किसी भी स्थिति में वह हालात संभाल सके।

सबने देखा, हाथी बड़ी बेफिक्री से आगे बढ़ता चला आ रहा था। रास्ते में आनेवाली हर चीज को रौंदता, पेड़-पत्तियों और डालियों को उखाड़ता मदमस्त चाल में, रास्ते पर सीधा बढ़ता चला आ रहा था। बीच में एकाध बार रूककर उसे मिट्टी में लोटने का प्रयास किया पर ज़मीन पर पड़ी ठंडी ओस की बूँदों ने उसका मन बिगाड़ दिया। फिर एकाध बार सूंढ से गीली मिट्टी उठाकर अपने शरीर के ऊपर डालने की कोशिश भी कि पर उसे मज़ा नहीं आया। वो झुंझला गया। झुंझलाहट और खीझ के मारे उसकी चाल थोड़ी धीमी पड़ गई। उधर दल

के सदस्यों में भय व्याप्त था। वे नज़र गड़ाये बैठे थे। धुंधलके की वजह से वे हाथी की चाल को ठीक से नहीं देख पा रहे थे। चलते-चलते अचानक हाथी एक ज़गह जाकर ठहर गया। मानों उसे आनेवाले खतरे की भनक लग गई थी। इमचानोक दूर से ही दम साधे हाथी की एक-एक हरकत पर नजर रखे हुए था। उसे लगा, हो-न-हो हाथी को उनकी योजना का पता चल चुका है और अगर ऐसा है तो वो सीधे भाग खड़ा होगा या फिर बदला लेने के लिए एकदम पलटकर हमला करेगा। तभी उसने देखा, हाथी थोड़ा अजीब तरीके से पीछे की ओर झुका और कुछ मिनट बाद झटके से उठ खड़ा हुआ। शायद लीद गिर रहा था। इमचानोक ने पहले भी जंगल में हाथी के अपशिष्ट देखे थे उसे पता था कि धूप की गर्मी से ये लीद कितनी दुर्गंध फैलाते हैं। झूमता हाथी एक बार फिर उसी रास्ते पर आगे बढ़ने लगा। हरी-हरी पत्तियों को बड़े चाव से चबाता वह निश्छल और शांत लग रहा था। तेज धूप ने मिट्टी की नमी को लगभग सोख लिया था। गीली मिट्टी सुखकर भुरभुरी हो चुकी थी। हाथी ने अपनी सूंढ़ से मिट्टी कुरेद-कुरेद कर पहले तो उसका जायज़ा लिया फिर तसल्ली होने पर सूंढ़ में भर-भर कर उसे अपने शरीर पर उड़ेलने लगा। मृदा-स्नान उसका प्रिय शगल था। विशाल पंखों जैसे उसके बड़े-बड़े कान धूल से सने थे। इमचानोक दूर से ही हाथी की इन हरकतों पर नज़र रख रहा था। हालांकि दूर होने की वजह से वह उसके डील-डौल का सही अंदाज़ा नहीं लगा पा रहा था। हाथी को मारने की योजना पर उसका दिमाग तेजी से काम कर रहा था हमला होने पर हाथी की क्या प्रतिक्रिया होगी इस बारे में उसका मन लगातार गुणा-भाग कर रहा था। उसने

सोचा उसकी पहली गोली से घायल होते ही हाथी तिलमिलाकर गड्ढे की ओर भागेगा और आसानी से उसके बिछाये जाल में फंस जायेगा। दूसरी गोली वो उसके माथे के बीचों-बीच दागेगा जिससे हाथी पूरी तरह चित्त हो जायेगा। ये सब सोचते-सोचते दिन कब निकल आया पता ही नहीं चला। सूरज की तेज़ रोशनी से समूचा जंगल नहा उठा। शिकारी-दल के सदस्य अपने शिकार को अब ठीक से देख पा रहे थे। हाँलाकि अभी भी हाथी उनकी पहुंच और नज़र दोनों से बहुत दूर था। वो अपनी मस्त चाल में झूमता हुआ आगे बढ़ रहा था। तेज़ धूप की वजह से अब वो थोड़ा बेचैन नज़र आने लगा था। तेज गर्मी उसे पस्त करने लगी। परेशान हो वह सूंड उठाकर चिंघारने लगा। धूप से बचने और सुस्ताने के लिए वो छायादार झाड़ियों के बीच आगे बढ़ गया। पर उसे क्या मालूम था कि जिस छाया की तलाश में वो आगे बढ़ रहा था वहाँ चारो ओर मौत का सामान बिखरा पड़ा था। इससे पहले कि वो एक और कदम आगे बढ़ाकर गड्ढे में गिर पड़ता उसने अपने कदम अचानक पीछे खींच लिये और अपनी छोटी-छोटी गोल आंखों को चारों दिशाओं में घूमाकर आसन्न खतरे का मुआयना करने लगा। शायद उसे खतरे का आभास हो चुका था। वो धीरे-धीरे पीछे खिसकने लगा पर उसका भीमकाय शरीर उसका साथ नहीं दे पा रहा था। जैसे ही वह पीछे मुड़ा, इमचनोक ने धांय से फायर किया। पहली गोली उसके शरीर को छूती हुई निकल गई। दूसरी बार निशाना पक्का था। गोली सीधे उसके माथे के बीचो-बीच लगी। शिकारी इमचानोक जीत गया था पर मदमस्त हाथी अपनी ज़िंदगी की ज़ंग हार चुका था।

हाथी को ज़मीन पर गिरता देख शिकारी दल के सदस्य उसकी ओर लपके।

हाथी के शरीर से बहते खून के फ़ब्बारे देखकर उन्हें बड़ी तसल्ली हुई। इमचा भी दम साधे सब देख रहा था। हाथी ज़मीन पर लहूलुहान पड़ा दर्द से कराह रहा था। उसकी गोल-गोल आंखें खुली थी। पलड़ों में आँसू अटके थे। ऐसा लग रहा था मानो कुछ कह रही हो। और शायद ये कह रही थी, ''इमचानोक आखिर तुमने मुझसे मेरी ताकत ही छीन ली! मुझ बेजुबान को मारकर तुमने अपनी जिद्द पूरी कर ली। लो अब तो खुश हो ना। तुम विजेता बन गये। मैं हार गया और तुम जीत गये।'' इमचानोक उस निरीह बेजुबान की आंखों को टकटकी लगाये देखता रहा। उसका मन भर आया। उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि सरकार की मदद के लिए उसे किसी बेजुबान की इस तरह जान लेनी पड़ेगी। अपने शिकारी जीवन में उसने अनगिनत शिकार किये थे और हर शिकार के बाद उसे आत्मसंतुष्टि और आत्मगौरव का एहसास होता था पर आज वो भाव कहीं गायब था। हालांकि दूसरी तरफ वो ये सोचकर खुद को सांत्वना भी दे रहा था कि गाँव वालों को हाथी के आतंक से छुटकारा दिलाने के लिए उसका शिकार करना जरूरी था। पर इसके लिए वही क्यों? दूसरे भी तो इस काम को अंजाम दे सकते थे। उसका मन पीड़ा और पश्चाताप से भर उठा। पर इसे नियति का लिखा मान उसने खुद को समझा ही लिया।

इस घटना के बाद तो जैसे इमाचानोक पूरे इलाके में खासा लोकप्रिय हो गया। सबकी जुबान पर बस उसका ही नाम था। शिकारी के तौर पर एक बार फिर उसके मान-सम्मान और लोकप्रियता में वृद्धि हो गयी। उसके बहादुरी के कारनामें से खुश होकर सरकार ने उसे कुछ नकद रुपये और एक बढ़िया बंदूक सम्मान स्वरूप भिजवाया। इमचानोक ने नकद पैसे स्वीकार कर लिया और उसे

अपने शिकारी दोस्तों में आपस में बाँट लिया लेकिन सरकारी बंदूक यह कहते हुए वापस लौटा दिया कि उसके पास पहले से ही अपनी एक बंदूक है और एक शिकारी के लिए एक ही बंदूक काफ़ी है। हालांकि सरकारी अमले को उसकी इस प्रतिक्रिया से बुरा ज़रूर लगा पर आगे उन्होंने इमचानोक पर कोई दबाव नहीं डाला। दरअसल इमचा सरकार के तोहफ़े को कुबूल कर उनका कृपापात्र नहीं बनना चाहता था क्योंकि बंदूक स्वीकार करने का सीधा-सा मतलब था अगले किसी और सरकारी फ़रमान की तामील करना। और वो दोबारा किसी ऐसे सरकारी कार्यक्रम का हिस्सा कतई नहीं बनना चाहता था।

इमचा अतीत के पन्ने पलट, वर्तमान में वापस लौट चुका था। उसके सामने अभी सबसे बड़ी समस्या थी शैतान सूअर का शिकार। उधर फ़सलों की तबाही रोकना गाँववालों की पहली प्राथमिकता थी। वे सूअर के आतंक से त्रस्त थे। अभी कुछ दिन पहले की ही तो बात है जब बंदरों ने इमचा की फ़सल को बुरी तरह रौंद दिया था। कैसे बंदरों के झूंड ने उसके तैयार खड़ी फ़सल को मिनटों में बर्बाद कर दिया था। दरअसल गाँव वाले कुछ ऐसा करते थे कि फ़सलों की कटाई के बाद अनाज को कुछ समय के लिए खेतों में ही बने भूसाल (अधबने/अधखुले झोपड़े) में रख देते और बाद में औरत-बच्चे मिलकर उसे खलिहान तक पहुंचाते। इन अनाजों को कच्चे झोपड़ों में रखने के अपने कई फायदे थे। एक तो घाटी की सीधी-खड़ी चढ़ाई से उन्हें मुक्ति मिल जाती, दूसरा ढुलाई के बेहिसाब खर्च से वे बच जाते। लेकिन परेशानी तो तब खड़ी हुई जब बंदरों ने इन झोपड़ों को अपना ऐशगाह बना लिया। वे दिन-भर धमा-चौकड़ी मचाते। वहां रखी फ़सल बर्बाद तो

करते हीं कभी-कभार रखवाली कर रही औरतों और बच्चों पर भी हमला बोल देते। उनकी झुंड का सरगना एक काला नर बंदर था जो सबसे ज्यादा उत्पाती था। बच्चों, औरतों पर हमला भी वही करता। दुर्भाग्य से इस तांडव में इमचा की फ़सल को सबसे ज़्यादा नुकसान पहुँचा। जब इमचानोक को इसकी खबर मिली तो वह आग बबूला हो उठा। उसने बंदरों को मार गिराने का ठान लिया। लेकिन इस बार वह पूरी सर्तकता और सुयोनिजत तरीके से इस काम को अंजाम देना चाहता था। योजना के तहत उसने बंदरों को अपने खलिहान में मौज उड़ाने की खुली छूट दे दी। दरअसल वो सही मौका देखकर उन पर हमला करना चाहता था इसलिए किसी संभावित खतरे से बेखबर बंदरों का झूंड दो दिनों तक बेफ़िक्र होकर उधम मचाता रहा। उन्हें खतरे का ज़रा भी अंदेशा नहीं था। तीसरे दिन इमचानोक अपनी बंदूक लेकर खेतों में पहुंचा और धान के गट्ठरों के पीछे छिपकर बंदरों की प्रतीक्षा करने लगा। इमचा ने जैसा सोचा था ठीक वैसा ही हुआ। नियत समय पर बंदरों के झुंड ने खलिहान में रखे अनाज के ढेर पर धावा बोल दिया। खलिहान में रखे अनाजों के गट्ठर एक-दूसरे पर फेंके जाने लगे और धान की बालियों की मौज उड़ाई जाने लगी। उनका ये तांडव बहुत देर तक चलता रहा। शिशु बंदर एक-दूसरे के ऊपर धान की बालियों को फेंक खेल का मज़ा ले रहे थे।

शिशुओं के इस बाल-सुलभ दृश्य को देखकर एक बार तो इमचानोक ठगा-सा रह गया पर जैसे ही उसकी नजर पास खड़े काले नर बंदर पर पड़ी उसका गुस्सा भड़क उठा। उसने अपनी बंदूक संभाली और झट से एक गोली दाग दी। गोली दनदनाते हुए सीधे बंदर को लगी। हालांकि बंदर आवाज सुनते ही हवा

में उछला पर इमचानोक के सटीक निशाने से बच नहीं पाया। गोली उसके बाजू में लगी थी। वह बुरी तरह जख़्मी हो गया था। उसके शरीर से खून की धार वह निकली। हैरत की बात ये थी कि जख़्मी होने के बावजूद उसने अपने साथियों के प्रति अदम्य साहस और समर्पण का परिचय दिया। वह तब तक वहां डटा रहा जब झुंड के उसके अन्य साथी दरवाजे से सुरक्षित बाहर न निकल गये। अपनी जान दाँव पर लगाकर उसने अपने सभी साथियों को एक-एक कर बाहर निकाला। सभी को सुरक्षित बाहर निकाल लेने के बाद वो लहुलुहान हो ज़मीन पर गिर पड़ा। उसकी साँसें अभी भी चल रही थी। उसने उठने की कोशिश की कि तभी इमचानोक ने निशाने की मुद्रा में अपनी बंदूक उसकी तरफ तान दी। ज़मीन पर बंदर असहाय पड़ा था। बंदूक की नली अपनी ओर घूमते देख बंदर ने याचना और समर्पण की मुद्रा में अपने दोनों हाथ आपस में जोड़ उपर उठा लिये लेकिन कठोर बन चुका इमचा उसकी इस याचना-मुद्रा को समझ नहीं पाया। तब तक काफी देर हो चुकी थी। गोली ठीक उसके सीने को छेदती बाहर निकल गई। बंदर वहीं ढेर हो गया। ये तसल्ली कर लेने के बाद की बंदर मर चुका है, इमचानोक अपने गाँव लौट पड़ा। घर पहुँच कर उसने अपने भतीजे को बंदर की लाश लाने जंगल भेज दिया।

मरे हुए बंदर को जैसे ही गांव लाया गया लोग खुशी से नाचने लगे। सभी बहुत खुश थे। सिर्फ इसलिए नहीं कि उन्हें बंदर के आतंक से मुक्ति मिल गई थी बल्कि आने वाले कई दिनों तक उनके घर में पर्याप्त मांस का प्रबंध हो गया था। बंदर को इमचा के घर के आंगन के बीचो-बीच ऐसी मुद्रा में बिठा दिया गया जैसे

वह इंसानी बुत हो। बांस के डंडे के सहारे उसके शरीर को टिकाकर हाथ पीछे की ओर बांध दिये गये। बंदर का निष्प्राण शरीर आसपास के बच्चों के लिए कौतूहल और तमाशे का सबब बन गया। सबने उसे चारो ओर से घेर लिया। इमचा के भतीजे ने कलाकारी दिखाते हुए एक फटी-पुरानी टोपी बंदर के सिर पर डाल दी। किसी दूसरे बच्चे ने शरारत करते हुए उसकी ऊंगलियों में सिगरेट एक टुकड़ा फंसा दिया। फिर तो जैसे बंदर को सजाने-संवारने का सिलसिला ही चल पड़ा। किसी ने उसे चश्मा पहना दिया, तो किसी ने फटे जूते। तमाशा पूरी तरह जम चुका था। बच्चे जोकरनुमा बंदर को देख जोर-जोर से तालियां पीटते और हँस-हँस कर लोटपोट हो रहे। मानों वहां मदारी का कोई खेल चल रहा हो।

शोर सुनकर इमचा कमरे से बाहर आया। बंदर पर नज़र पड़ते ही उसका गुस्सा साँतवे आसमान पर पहुँच गया। उसने आव देखा ना ताव और बंदर के गालों पर तड़ातड़ तमाचे जड़ने लगा। चाटें लगते ही बंदर के हाथों में अटका सिगरेट छिटक कर दूर जा गिरा, चश्मा कहीं और गिरा और वो खुद ज़मीन पर लुढक कर कहीं और गिर पड़ा। गुस्से से फुफकारता हुआ इमचा बोला, ''देख! मैंने तेरा क्या हाल किया? तुने हमारी औरतों और बच्चों को बहुत डराया था न? मेरी सारी फ़सल बर्बाद कर दी थी न। अब देख कहां पड़ा है? मैं तेरी बोटी-बोटी काटकर सबको खिलाऊंगा?'' वहां खड़े लोग स्तब्ध थे। अचानक उग्र हुए इमचा के इस व्यवहार से सभी सकते में थे। थोड़ी देर पहले बच्चों के ठहाकों से गुलजार आंगन में अब चारों ओर सन्नाटा पसरा था। भीतर बैठी टैंगचेतला को आभास हुआ कि बाहर जरूर कुछ गड़बड़ है। वो भागकर बाहर आई। देखा इमचा अभी भी गुस्से में

दांत पीस रहा था। उसे समझते देर न लगी कि इमचा के प्रतिशोध की ज्वाला अभी ठंडी नहीं हुई है। वो इमचा को खींचकर भीतर ले गई। बाहर सब खामोश थे। इधर बंदर के दो टुकड़े किये जा चुके थे। अब बस पकने भर की देर थी। भीतर झोपड़े में पति-पत्नी के बीच गुफ़्तगूं जारी थी। दोनों किसी बात को लेकर बहस कर रहे थे। इसी बीच इमचा का भतीजा टैंगचेतला के पास मांस पकाने की बड़ी हांडी मांगने आया। तंगचेतला ने हांडी देने से साफ़ मना कर दिया और फटकारते हुए कहा, तुम पहले वाली पुरानी कड़ाही का इस्तेमाल क्यों नहीं करते जिसमें हमेशा मांस पकाते हो?'' लड़के को बड़ी हैरानी हुई। वह इस तरह के जबाव के लिए बिल्कुल भी तैयार न था। पर करता भी क्या? मन मसोसकर रह गया। चूंकि वो जल्दी में थी इसलिए पहले वाली छोटी कड़ाही ही उठाकर ले गया। हालांकि तंगचेतला के व्यवहार में आये अचानक इस बदलाव और इमचा के उग्र बर्ताव से बाहर के जश्न पर कोई खास फर्क नहीं पड़ा। खाने-पीने और जश्न का माहौल देर रात तक चलता रहा। टेंगचेतला ने ये साफ़-साफ़ कह दिया था कि मांस का एक भी टुकड़ा उसके रसोई में नहीं आना चाहिए और अगर खाने-खिलाने के बाद मांस बच भी जाए तो उसे रिश्तेदारों और पड़ोसियों में बाँट दिया जाए।

कुछ दिनों बाद हैरान करने वाला एक वाक्या सामने आया। इमचा ने टैंगचेतला को ये स्पष्ट रूप से कह दिया था कि वो खलिहान में उस जगह से धान का एक भी दाना न उठाए जहां बंदर मरा था। इमचा के मन में कुछ खटका-सा था। टैंगचेतला ने इसका विरोध किया। कहने लगी, ''हम अपना अनाज

ऐसे कैसे छोड़ सकते हैं? वहाँ करीब धान की 20-30 टोकड़ियाँ पड़ी है। इससे तो हमारा भारी नुकसान हो जायेगा। ये ठीक नहीं है।'' पर इमचा नहीं माना। वो रक्त से सने अनाज़ के उन टोकड़ियों को घर में लाने को बिल्कुल भी तैयार नहीं था। उसके मन में अज़ीब तरह की आशंकाएँ घर कर गई थी। अंत में तय हुआ कि धान से भरी टोकड़ियों को दूसरे जानवरों/पक्षियों के चारे के लिए वहीं छोड़ दिया जाए। इमचा फिर कभी उस झोपड़े में दोबारा नहीं लौटा। कहते हैं साल-दो साल बाद बारिश में वो झोपड़ी बह गई। पर गाँव वालों के ज़ेहन में आज भी झोपड़ी से जुड़ा वो वाक्या ताजा है।

वक़्त बीतता गया। इमचा का मन अब शिकार से हटने लगा था। उसका मन शिकार में बिल्कुल नहीं रमता था। बंदर वाली घटना को याद कर उसका मन बार-बार उद्वेलित हो जाता। याचना की मुद्रा वाले वो दृश्य लगातार उसके मन में उभरते रहते। एक बार तो उसने मन भी बना लिया कि वो दोबारा कभी इस शिकारी पेशे में नहीं लौटेगा पर सवाल अपनी पेट की क्षुदा शांत करने और परिवार का पेट पालने का था, वो वो चाहकर भी इस काम को छोड़ नहीं पाया। इसके अलावा सूअर के आतंक से भी गांववालों को छुटकारा दिलाना था, इसलिए सब सोच-विचार उसने एक बार फिर अपने भीतर के शिकारी को जगाया। हालांकि उसे शिकार छोड़े एक लंबा अरसा बीत चुका था और अब वो थोड़ा उम्रदराज़ और कमज़ोर भी हो गया था। पहले वाले शिकारी का दम-खम अब उसमें न रहा। इस बार उसका आत्मविश्वास डोल गया। इसलिए उसने अपने भतीजे और बेटे को शिकार के लिए साथ ले लिया। चूंकि सूअर ने बहुत बड़े इलाके में

तबाही मचायी थी इसलिए उन्होंने सबसे पहले तबाह हुए इलाकों के मुआयने की योजना बनाई। अपने भतीजे को ले मुंह अंधेरे ही वह घाटी के लिए निकल पड़ा। ऊपर घाटी पर जहां उसके खेत थे, वहां जाने के दो रास्ते थे। एक तो सीधे-सीधे जंगल की ओर से होकर जाता दूसरा घुमावदार घाटियों और दुर्गम पहाड़ों से होकर गुजरता। उन्होंने योजनानुसार जंगल के दुर्गम रास्ते को चुना। पगडंडी पर आगे बढ़ते हुए वे घने जंगल की ओर बढ़े चले जा रहे थे, कि तभी पास की झाड़ियों में कुछ हुई हलचल हुई। वे चौंक गये। पर वे रूके नहीं आगे बढ़ते रहे। लगातार चलते रहने से वे काफ़ी थक गये थे। भूख और थकान से उनका बुरा हाल था। घनी छायादार झाड़ी देख वे वही दो पल सुस्ताने बैठ गये। साथ लाया चना-चबेना खाकर अपनी भूख मिटाई और वहीं लेट आराम करने लगे। इस बीच इमचा का लड़का पास के झरने से पीने का पानी लाने गया। इधर इमचा झपकियां लेता रहा। पानी पीने और थोड़ी देर सुस्ता लेने के बाद उन्होंने एक बार फिर चढ़ाई शुरू की। चलते-चलते वे घने जंगल के बीचो-बीच पहुंच गये। लड़के को डर लग रहा था। ये उसकी पहली शिकार-यात्रा थी पर इमचा निर्भिक हो अपने रास्ते मस्ती से गुनगुनाते हुए आगे बढ़ रहा था। डर से सफेद पड़े उसके चेहरे को देख उसे हँसी आ रही थी। कुछ आगे चलने के बाद लड़के को कुछ ऐसा दिखा जिससे वो सिर पर पाँव रखकर गाँव की ओर भागा। उस रहस्यमयी जीव को देख इमचा भी एक मिनट के लिए भौच्चक रहा गया। उसे कुछ समझ नहीं आया। इतना विशाल और भयंकर जीव उसने अपने पूरे शिकारी जीवन में कभी नहीं देखा था। वो जानवर एकदम से इमचा के सामने आ खड़ा हुआ। इमचा की तो जैसे सांसे ही अटक गई

थी। ना वो आगे बढ़ सकता था ना पीछे खिसक सकता था। उसे अच्छी तरह पता था कि जान बचानी है तो उस जानवर को खत्म करना होगा। उसने फ़टाफ़ट अपनी बंदूक निकाली और निशाना साधते हुए गोली दाग दी। गोली की आवाज़ सुनते ही जानवर उछलकर झाड़ियों में जा छुपा। इमचा को पूरा यकीन था कि उसका निशाना चूका नहीं है। गोली तो उसे लग ही गई थी। घायल जानवर और ज्यादा खूंखार और वहशी बन जाता है कभी भी पलट कर हमला कर सकता है ऐसा सोच इमचा सावधानीपूर्वक एक-एक कदम पीछे खिसकने लगा। जिस रास्ते से जंगल आया था ठीक उसी रास्ते गाँव लौट गया।

दूर क्षितिज पर सूरज डूबने लगा था। सफ़र अभी बाकी था। इमचा धीरे-धीरे अपने रास्ते आगे बढ़ता घर की ओर लौट रहा था। ठंड बढ़ गई थी। उसे थोडी-बहुत ठंड भी महसूस होने लगी थी। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर उसने अपने भतीजे को झाड़ियों के पीछे छुपा देखा। इससे पहले की इमचा उसकी कायराना हरकत के बारे में कुछ बोलता वो दाँत दिखाने लगा। इमचा ने झाड़ियों में लगभग सोये अपने भतीजे को ऊपर उठाया और बिना कुछ बोले उसे अपने साथ लेकर गाँव की ओर चल पड़ा। सुबह जंगल आते वक्त हँसी-खुशी का जो माहौल था वो वापस लौटने वक्त गायब था। चाचा-भतीजा पूरे रास्ते चुप रहे। घर पहुँचकर अपने घर के आगे लोगों की भीड़ देखी। गाँववाले बड़ी बेसब्री से दोनों की बाट जोह रहे थे। वे जानने को उत्सुक थे कि सुअर उनके हाथ लगा या नहीं। थोड़ी देर बाद इमचा ने खुद ही चुप्पी तोड़ते कहा, ''मुझे लगता है मैंने उसे मार गिराया है।'' यह सुनते ही भीड़ में खुशी व उल्लास की लहर दौड़ गई। जिज्ञासावश लोग सवाल पे

सवाल करने लगे। कैसे मारा? कब मारा और कहाँ मारा? वो ज्यादा खूंखार तो नहीं था? उसने तुम पर हमला तो नहीं किया? आदि आदि। इमचा ने सारे सवालों का बस एक ही जवाब दिया, ''मैंने अपनी पूरी ज़िन्दगी में इतना वीभत्स और खूंखार जानवर नहीं देखा? ईश्वर न करे मुझे दोबारा उसे देखना पड़े?''

गाँव वालों की उत्सुकता बढ़ गई थी। वे जानना चाहते थे कि इमचा ने उसका शिकार कैसे किया? वे उस जगह जाकर खुद अपनी आँखों से सब कुछ देखना चाहते थे। उन्होंने इमचा पर दबाव बनाया कि वो उन्हें जंगल में उस जगह ले जाये। जहाँ सूअर का शिकार किया गया है और जहाँ उसका मृत शरीर पड़ा है। लेकिन इमचा ने 'कल देखेंगे' कहकर बात टाल दी। अगली सुबह गाँव वाले इस बात से खुश थे कि बीती रात उनके खेतों को कोई नुकसान नहीं पहुँचा था। फ़सलें सुरक्षित थी। इसका सीधा सा मतलब था सूअर मारा गया था। इससे गाँववालों का यकीन और पक्का हो गया। वे अब बेसब्र हो रहे थे। वे जल्द-से-जल्द जंगल की उस जगह पहुंचना चाहते थे जहाँ सूअर का शिकार हुआ था। इमचा ने जब गाँव वालों को जब जंगल के उस दुर्गम रास्ते के बारे में बताया जिससे होकर वो गया था तो गाँववालों को बड़ी हैरानी हुई। एक बुजुर्ग ने पूछा, ''इमचा दूसरा सुगम रास्ता भी तो था। तुमने दुर्गम रास्ता ही क्यों चुना? तुम्हें तो पता ही है वो रास्ता कितना ख़तरनाक व सुनसान है।'' इमचा ने कहा, ''चाचा मैं वहाँ खुद नहीं गया, अपनी अंर्तआत्मा की आवाज पर मैंने उस रास्ते को चुना। और दैवीय संयोग तो देखिये, वो सूअर भी उसी रास्ते पर मिल गया।''

गाँव वाले अब तैयार थे। तलाशी-अभियान के लिए 20 सदस्यों का दल गठित किया गया। तय हुआ कि गाँव के 20 हट्टे-कट्ठे तगड़े लड़कों को इस दल में शामिल किया जाए जिससे भारी-भरकम सूअर को पहाड़ी से नीचे उठाकर लाने में आसानी हो। तलाशी दल ने इमचा को साथ चलने का अनुरोध किया ताकि शिकार वाली जगह को ढूंढने में आसानी हो। पर इमचा ने यह कहते हुए उन्हें मना कर दिया कि, उसका काम अब खत्म हो चुका है। और वह लंबे समय के लिए आराम करना चाहता है।

इस तरह इमचा को साथ लिये बगैर खोजी दल के सदस्य भाले-बरछे और तीर-धनुष के साथ जंगल की ओर कूच कर गये। खोजी-दल इस बात को लेकर उत्साहित थे कि जंगल से लौटने के बाद सूअर के मांस के बड़े भोज का आयोजन किया जाएगा। अतिउत्साह व गर्मजोशी से आपस में बात करते वे जंगल के रास्ते आगे बढ़ रहे थे। जगह ढूँढने के जोश ने उनके सफ़र को आसान बना दिया था। ऊपर पहुंचकर वे पांच अलग-अलग समूहों में बँट गये ताकि तलाशी में आसानी हो। पहले खोजी दल को झाड़ियों के बीच खून की कुछ सूखी बूंदें मिली। वे अनुमान लगा रहे थे कि अगर सूअर मरा होगा तो यहीं कहीं आस-पास उसकी लाश भी पड़ी होगी। वे लगातार उसे ढूंढते रहे। पर काफी देर ढूंढने के बाद भी उन्हें कुछ नहीं मिला। शाम बीत गई पर उस रहस्यमयी सूअर का कहीं कोई अता-पता न चला।

अगले दो दिनों तक तलाशी अभियान चलता रहा। सूअर की टोह में लोगों ने जंगल का चप्पा-चप्पा छान मारा पर कुछ भी हाथ न लगा। अंत में खोजी दल निराश हो गाँव वापस लौट गया। दिन बीतते गये, गाँव वालों ने सूअर की लाश न

मिलने की घटना को लगभग विस्तृत कर दिया।

इस बीच एक विचित्र घटना घटी। इमचा जो कभी बीमार नहीं पड़ता था। अचानक बुरी तरह बीमार पड़ गया। उसे भयानक सिरदर्द की शिकायत थी। ईलाज का कोई असर न था दिन-ब-दिन उसकी सेहत गिरती ही जा रही थी। विस्तर से उठ हफ़्तों हो गये। उसका मर्ज़ डॉक्टरों की समझ में भी न आता था। वह दिनभर अपने कमरे में ही पड़ा रहता। किसी को भी उसके कमरे में जाने की सख़्त मनाही थी। यहां तक कि बच्चों को भी। सिर्फ तैंगचेतला उसकी देख भाल के लिए वहां आ-जा सकती थी। इसलिए सिर्फ तैंगचेतला को पता था कि इमचा को क्या हुआ था? दरअसल माज़रा उपरी शक्तियों के प्रकोप का था। इमचा को भयानक सपने आने लगे थे। रात में सोते-सोते अचानक चिंहूँक कर उठ जाता और बच्चे की मानिंद रूठता टेंगचेतला की गोद में सिर छुपाता और कहता, ''तैंगचेतला मुझे बचाओ, देखो वो मेरी ओर दौड़ा चला आ रहा है। वो मुझे मार डालेगा। वो मेरे पीछे पड़ा है। फिर अचानक ठठाकर हँस पड़ता।''

तंगचेतला उसे प्यार से सहलाती, उसके बालों में ऊंगलियां फेरती और धीरे-धीरे उसे सुलाने की कोशिश करती। इमचा अज़ीबोगरीब रहस्यमयी हालत से गुजर रहा था। उसकी हालत दिन-ब-दिन नाजुक होती गई। धीरे-धीरे उसने खाना-पीना भी छोड़ दिया। उसकी बिगड़ती हालत देख तेंगचेतला से रहा नहीं गया। उसने एक दिन इमचा से बोल ही दिया, ''देखो इमचा हो न हो ये सब उस सूअर की हत्या से जुड़ा उपरी मामला है। तुम्हें उस जीव की आत्मा से अपने गुनाहों की माफी मांगनी चाहिए। हो सकता है उसी के कारण ये सब हो रहा हो। तुमने उसे मारा है इसलिए उसकी आत्मा अब तुमसे बदला ले रही है। तुम जंगल

जाकर उससे माफी मांगो।'' पहले तो इमचा ने इसे स्त्रीसुलभ बात समझ उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। पर जब तेंगचेतला ने ये धमकी दी वो उसके सपने वाली बात सबको बता देगी, यहाँ तक कि उसके पिता को भी तब जाकर इमचा तैयार हुआ।

अगली सुबह दोनों जंगल के लिए निकल पड़े। गाँववालों को ये देखकर बड़ी हैरानी हुई कि इमचा दिखने में बिल्कुल ठीक-ठाक व तंदुरूस्त था। कहीं से भी कमज़ोर व बीमार नहीं लग रहा था। तो क्या वह बीमारी का नाटक किये इतने दिनों तक बिस्तर पर पड़ा रहा। उन्हें एक और बात हैरान किये जा रही थी कि आज इमचा पहली बार बगैर बंदूक बाहर निकला था। दोनों जंगल का लगभग आधा रास्ता पार कर चुके थे। रास्ते में इमचा थोड़ा परेशान और बेचैन दिख रहा था। टैंगचेतला ने उसे एक छायादार पेड़ के नीचे थोड़ा सुस्ता लेने को कहा। खाना-पीकर वे दोनों वहीं पेड़ के नीचे सुस्ताने लगे। इमचा को प्यास लग रही थी सो वो पास ही बह रहे एक झरने के पास अपनी प्यास बुझाने चला गया। तेंगचेतला उसकी हालत से अवगत थी इसलिए वो भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ी। वह इमचा को अकेला बिल्कुल अकेला नहीं छोड़ना चाहती थी। उसने देखा कि इमचा झरने के पास छाती तक पानी में खड़ा कुछ कर रहा है? उसके दोनों हाथ पानी के भीतर थे। उसने जोर से आवाज लगाई, ''इमचा वहां क्या कर रहे हो? पर इमचा ने तो जैसे सुना ही न हो। तंगचेतला दोबारा चिल्लाकर बोली, ''इमचा! वापस आओ, पानी बहुत गहरा है।'' इस बार इमचा हौले से पीछे मुड़ा, उसने अपने हाथ बाहर निकाले और हवा में ऊपर लहराया। उसके हाथों में सूअर के दो बड़े दाँत थे। दाँत बहती धार में धुलकर गजदन्त की मानिंद एकदम चमकदार हो

गये थे। उसने पास की झाड़ियों की ओर इशारा किया। तेंगचेतला मंत्रमुग्ध हो उसके इशारों का अनुसरण करने लगी। वहां झाड़ियों के पास सूअर के रोयें और बालों के कुछ गुच्छे पड़े हुए थे। तेंगचेतला उन्हें लेकर लौट आई। इधर इमचा भी पानी से बाहर निकल आया था। लौटते वक्त दोनों उसी स्थान पर पहुँचे जहां इमचा ने अंतिम बार उस सूअर को देखा था। इमचा ने अचानक अपने सिर से बालों के कुछ गुच्छे तोड़े और उन्हें जंगल की ओर उड़ा दिया और पीछे मुड़े बगैर तेंगचेतला का हाथ थाम घर वापस लौट पड़ा। टेंगचेतला अभी भी मंत्रमुग्ध हो उसके पीछे चल रही थी। वहाँ जो भी हो रहा था उसकी समझ से परे था। सूअर के शिकार से लेकर, पति के बीमार होने तक की एक-एक कड़ियों को वो रहस्य और रोमांच सिरे से जोड़कर देख रही थी।

जंगल से लौटने के बाद इमचा को बुरे सपने आने बंद हो गये थे। पर हाँ सूअर के मौत से जुड़ी विचित्र रहस्यमयी घटनाओं के बारे में वो अब भी वो अक्सर सोचता रहता। इमचा और तेंगचेतला दोनों ने मिलकर यह तय किया कि वो अपने साथ हो रही घटनाओं का जिक्र किसी से भी नहीं करेंगे। यहां तक कि हड्डियाँ और सूअर के रोयें मिलने का रहस्य भी किसी के आगे बयां नहीं करेंगे। इमचा इस रहस्यमयी गुत्थी को सुलझाना चाहता था। वो अक्सर सोचता, ''आखिर कौन-सी ऐसी अदृश्य शक्तियाँ थी जिसने उसे ये सब करने पर मजबूर किया? क्या कोई रहस्यमयी शक्ति उससे ये सब करवाना चाहती थी? क्या उसने ऐसा करके वाकई सूअर की आत्मा को शांति पहुंचाई है? क्या उसने उस जीव की आत्मा को मोक्ष प्रदान किया है? ये तमाम सवाल उसके दिमाग में खलबली मचाए रहते।

दिन बीतते गये। जंगलवाली उस रहस्यमयी घटना के बाद इमचा की सेहत में काफ़ी सुधार हुआ। अब वह खुद को पहले जैसा तंदुरुस्त और सेहतमंद महसूस करता। अब उसे पहले जैसे बुरे सपने भी नहीं आते थे। वह अपने भीतर एक नयी ऊर्जा और अभूतपूर्व त़ाजगी का एहसास करता। लेकिन अक्सर इस गुत्थी को सुलझा नहीं पाता कि जंगल में गये तलाशी-अभियान के सदस्यों को आखिर सूअर की लाश क्यों नहीं मिली? जो उसे दिखा, वो दूसरे क्यों नहीं देख पाये? क्या सूअर के वे अवशेष उसी की राह देख रहे थे। ये रूहानी घटनायें सिर्फ उसी के साथ क्यों घटी?

इन तमाम सवालों के जवाब वो अब तक नहीं ढूंढ पाया था। एक अजीब-सी बेचैनी उसे खाये जाती। उसके अंतर्मन से हमेशा एक ही आवाज आती, ''इमचा तूने जीवनभर बहुत से जीवों का खून बहाया है। अब ये सब छोड़ दें। ये पाप है। क्यों इनकी हत्या का पाप अपने सिर लेता है?'' अब फिर उसका मन पश्चाताप और ग्लानि से भर उठता।

एक दिन सुबह तेंगचेतला जब खेतों में काम पर गई थी, इमचा ने आलमारी के ऊपरी दराज में रखे गट्ठर से बंधी अपनी बंदूक और कारतूस निकाले और उन्हें तुरंत निष्क्रिय कर दिया।

तेंगचेतला जब खेतों से वापस लौटी, उसने देखा इमचा घर के पिछवाड़े किसी काम में मगन था। पास जाकर देखा तो वो अपनी धुन में मस्त, फावड़े से लगातार एक गड्ढा खोद रहा था। उस गड्ढे में, सूअर दाँत, खाली बंदूक और शिकारी इमचानोक हमेशा-हमेशा के लिए दफन हो गये थे। अब एक नया इमचा सामने खड़ा था जो शिकारी नहीं एक आम इमचा था।

❐❐❐

2.3 हवाई पट्टी का सौदागर

पता नहीं कब वो लड़का अमेरिकी ट्रांजिट कैम्प का हिस्सा बन गया जो प्रथम विश्वश्युद्ध के खत्म होने के बाद वीरान पड़े हवाई पट्टी के अहाते में एक भवन में स्थित था। इसमें वो सैनिक रह रहे थे जो विभिन्न महादेशों से थे और जिन्होंने भारत-वर्मा क्षेत्र में लड़ाई लड़ी थी और अब युद्ध की समाप्ति के बाद बिखरे, बेकार पड़े सामानों को जहाज से भेजने के काम में लगे थे। साथ ही स्थानीय ठेकेदारों और आपूर्तिकर्ताओं को लेन-देन को चुकता करने में भी सहयोग दे रहे थे। कैम्प को असम के जोरहाट में लगाया गया था और ऐसा मालूम होता था ये लड़का भी आस-पास के किसी पहाड़ी इलाके से था क्योंकि शक्ल-सूरत से वो वहाँ का वाशिंदा विल्कुल नहीं लग रहा था।

दरअसल वो एक आदिवासी छोकड़ा था जो घर से भागकर शहर आ गया था और असम में, कई सालों से दूसरों के घरों में छोटे-मोटे काम कर अपना पेट पाल रहा था।

ये उसकी नियति थी या मन की अस्थिरता की कभी भी वो एक जगह टिक के नहीं रहा। तीसरा घर था ये जहां उसने अभी-अभी काम पकड़ा था और ऐसा लग रहा था जैसे इस बार उसके पांव यहां टिक जायेगें। उसके घर से भागने के लगभग आठ महीनों बाद उसके पिता ने किसी तरह उसका पता-ठिकाना ढूंढ निकाला था और आने वाली सर्दियों में असम आकर उसे ढूंढने की कवायत शुरू की। अंतत: बेटे का ठिकाना पता चलते हीघर वापस चलने को कहा। पर लड़के ने साफ मना कर दिया। पिता ने लाख समझाने की कोशिश की, माँ का वास्ता

दिया यहां तक कहा ''ये कहके उसे फुसलाने की कोशिश की कि उसके चले आने से उसकी मां का दिल उसके बगैर बैठा जा रहा है और वह बीमार भी है इसलिए चलकर उसे एक बार देख ले। बेटा उसे अपने किये पर बहुत पछतावा है। चल तू मेरे साथ चल वो अब कभी तेरे ऊपर हाथ नहीं उठायेगी। मैं तुझे भरोसा दिलाता हूँ, पर लड़का टस से मस तक नहीं हुआ। उल्टे गुर्राते हुए पिता से बोला ''आप ने तब उसे क्यों नहीं पीटा, जब उसने मेरे ऊपर हाथ उठाया था?'' पिता उसकी बात से निरूत्तर हो गये और बगैर एक शब्द कहे चुपचाप वहां से निकल गये। यह पहली बार था जब छोकरे के मालिक को ये पता लगा कि लड़का गांव छोड़कर शहर क्यों भाग आया था?

उस छोकरे का नाम पेकिमोंग था जब उसने अपना घर छोड़ा था, तब वह लगभग 12 साल का था। शहर आकर उसने घर-घर घुमकर काम तलाशा था ताकि अपने लिए रोटी-पानी का जुगाड़ कर सके। बड़ी मुश्किल से इस घर में टिकने की जगह मिल पाई थी। अभी जिनके घर काम पर लगा था उनका नाम जितेन दास थे और वे रेल विभाग में एक लाइनमैन थे। जब से उन्हें पोंकिमोंग के घर छोड़ कर भाग आने का कारण पता चला था व उसके प्रति और भी स्नेही हो गये थे। कभी-कभार वो पोकीमांग को अपने साथ रेलवे क्रांसिंग तक ले जाते और सिग्नल मिलने पर हरी झंडी दिखाने के काम में उसकी मदद भी लेते। पोकी को इस काम में बड़ा मजा आता। कई बार तो वो ज़िद कर बैठता कि वे उसे ऐसा करने दें। धीरे-धीरे ये रिश्ता स्नेहिह बंधन में बदल गया और एकदम से अचानक पोंकी उन्हें 'बाबा' कहकर पुकारने लगा। जब पहली बार उसने जीतेन को 'बाबा'

बुलाया तो उन्होंने इस पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया। उनका ध्यान तो तब गया जब उनकी पत्नी ने इस पर कड़ी प्रतिक्रिया की। जीतेन के दोनों बच्चे भी पहले तो इस बात पर खासे नाराज हुए कि उनके अलावा कोई और उसके पिता को 'बाबा' कहकर बुलाए। पर जब जीतेन ने बच्चों को प्यार से समझाया तो बच्चे मान गए।

पोकीमोंग अब थोड़ा संजीदा हो गया था। घर के काम को गंभीरता से लेने लगा था। पिछले कई दिनों की कड़ी मेहनत से उसने लकड़ी चीरकर इकट्ठा किया, सभी बर्तनों में पानी भरा और किचन गार्डन के खर-पतवार को बड़ी तन्मयता से साफ किया। पड़ोस के किसी घर फूलों के कुछ बीज उठा लाया जिसे पड़ोसियों ने फेंक दिये थे उन्हें घर के सामने के लॉन में उन्हें लगा दिया। पोंकी की मेहनत रंग लाई, जीतेन का कॉटेज जल्दी ही सुंदर फुलवाड़ी में बदल गया। अब यह कॉटेज पहले की तरह उजाड़, खर-पतवार से भरा नहीं दिखता था। पोकीमोंग के सधे हाथों ने कमाल कर दिया था। घर की पूरी रंगत ही बदल गई थी। बगीचे में भले ही साधारण किस्म के फूल जैसे- गेंदा, अरहूल और सूरजमुखी लगे थे पर इससे घर की रौनक दोगुनी हो गयी थी। बरसात में तो इन मौसमी फूलों की रौनक पूरे शबाब पर होती और इससे उत्सव जैसा महौल दिखता। पोकीमोंग ने फुलवाड़ी के चारों ओर बने बाँस बाड़े की मरम्मत कर दी और मिट्टी की दीवारों की लिपाई कर उसे चमका दिया था इस सफेदी के लिए तो उसने जीतेन को परेशान ही कर दिया। पहले तो जीतेन पुताई के लिए चूना लाना नहीं चाहता था पर जब बच्चों ने भी पोकीमोंग के आइडिया का साथ दिया तो जीतेन झुक गया और एक दिन चूने की एक पूरी कनस्तर रिक्शे पे लाद घर ले

आया। रविवार की सुबह चारो– दोनों बच्चे, जीतेन और पोकीमोंग ने मिलकर समूचे घर की पुताई कर डाली इससे उत्साहित होकर जीतेन की बीबी स्नेही ने उनके लिए दोपहर के खाने में पुलाऊ और चिकेन शोरबा बनाने का निर्णय लिया। सभी बेहद उत्साहित थे। दोपहर होते-होते पुताई का काम लगभग समाप्त हो गया। थोड़ा सुस्ताने के बाद जीतेन ने कपड़े बदल कर अपना ऑफिस यूनिफार्म पहन लिया। उसे ऐसा करते देख पोकीमोंग ने भी झट से एक साफ कमीज पहन ली।

''वैसे तुम कहाँ जाने की सोच रहे हो? जीतेन ने पोकीमोंग से पूछा'' पोकीमोंग बिना कुछ जबाव दिए मुस्कुराते हुए कंघी करता रहा।

थोड़ी देर बाद उसका सीधा जवाब आया, वहीं जहाँ आप जा रहे हो। जीतेन ने पोंकी के लहजे मेंएक खास तरह की प्रतिक्रिया देखी उसने इस बारे में उससे बाद में बात करने का सोचा।

उस दिन वे क्रासिंग पर मालगाड़ी के पहुंचने और निकलने की प्रतीक्षा कर रहे थे तभी रेलवे क्रासिंग के पास गाड़ियों का लंबा काफिला निकला। लगभग 50 ट्रक उस काफिले से जुड़े थे जिसमें कुछ में तो सामान और कुछ में ठसाठस भरे लोग थे। वे सभी गोरे सिपाही थे उनमें से कुछ तो मस्ती में गीत गा रहे थे तो कुछ अजीब-सी भाषा में जोर-जोर से बातें किये जा रहे थे। पोकीमोंग अपनी उत्सुकता पर काबू न रख पाया और अवरोधक के ठीक नीचे से सरककर निकलते हुए पहले ट्रक के पास जा पहुंचा। चूंकि जीतेन उधर सिग्नल पोस्ट पर व्यस्त था। इसलिए लड़के की इस हरकत पर उसका ध्यान बिल्कुल नहीं गया। एक लंबी ट्रेन को हरी झंडी दिखा और उसके पार कराने के बाद बैरियर गेट खोलने के लिए

उसने पोकीमोंग को आवाज दी। पर छोकरा तो दूर दूर तक कहीं नहीं दिख रहा था। अंततः जीतेन को खुदही गेट खोलना पड़ा। गेट खुलते ही फिरंगी सिपाहियों से भरे ट्रकों का काफिला धड़ाधड़ पार करने लगा। उन्हीं में से किसी एक ट्रक पर उसने पोकीमोंग को देखा। अपनी चमकती बत्तीशी के साथ शायद वो कुछ कहना चाहता था लेकिन गाड़ियों के शोर में जीतेन कुछ सुन न सका। उसे तो बस अपने घरेलू सेवक का तो मुस्कुराता चेहरायाद है जो अब किसी और दुनियाँ के लिए सफर पर निकल चुका था। उसने अंतिम बार उसे यहीं देखा और सुना था। जिसने कभी उसे 'बाबा' कहकर पुकारा था, ये उसकी अंतिम झलक थी। जीतेन उन मीठी स्मृतियों में तब तक सोया रहा जब तक उसका बेटा बाबुल सुबह-सुबह अखबार थामे चिल्लाता हुआ उसके पास न आकर ये बोला होता, 'बाबा बाबा'! देखो यहां क्या लिखा है? जीतेन ने उस पर लिखा नाम तो पढ़ लिया था पर उस मुस्कुराते चेहरे से जो उस दिन उसने क्रांसिंग के पास अंतिम बार देखा था और महसूस किया था कि शायद उसने अपना एक बेटा खो दिया है, से उस नाम को जोड़ नहीं पाया।

वो फिरंगी सैनिक दरअसल अमेरिकी थे जिन्होंने उस वीरान पड़े हवाईपट्टी क्षेत्र में अपना ठिकाना बनाया था। और भारत-वर्मा कैम्पेन के अंतिम संयुक्त कमांड पोस्ट से जान-माल को अंतिम रूप से निकालने के लिए डटे थे। अपने हाव-भाव और अंग्रेजी के कुछ टूटे-फूटे शब्दों के बूते पोकीमोंग किसी तरह जुगाड़ बिठा उनके साथ सफर करने में सफल रहा। बिना ये सोचे-समझे की वो क्या करने जा रहा है और वहां पहुंचने के बाद वो क्या करेगा? वो सफर करता रह। उसे तो सिर्फ इतना पता करना था कि ये गोरे लोग थे कैसे? क्या वो आम

लोगों की तरह ही थे या फिर जितना वो उनके बारे में जानता था उससे अलग। ट्रकों का काफिला अपने गंतव्य पर पहुँच चुका था। थोड़ी देर इधर-उधर फिरने और कैम्प के चक्कर काटने के बाद पोंकी का उत्साह ठंडा पड़ चुका था। वो घर जाने को आतुर था। शाम घिर आई थी और उसे जीतेन के घर का पता भी मालूम न था। वो वहीं कुछ देर इधर-उधर भटकता रहा और थककर वहीं पड़े एक बैरल में रात बिताने के लिए छुप गया। कैम्प में पेट्रोलिंग कर रहे एक गार्ड ने आवाज सुनकर उस पर टॉर्च की रोशनी फेंकी तो देखा वहां एक लड़का पाइप के भीतर गोल-मोल गेंद बना बैठा है। उसने लड़के को खींचकर बाहर निकाला और कैम्प के भीतर ले गया। सिपाही को लगा उसे भूख लगी होगी, उसने उसे एक सैंडविच खाने को देद दिया और साथ में ओढ़ने को एक कम्बल भी। पहले तो पोकीमोंग को वो सैंडविच दिखने में अजीब लगा पर भूखा होने की वजह से उसने उसे फटाफट चट कर दिया और कम्बल ओढ़के सो गया।

अगली सुबह उठते ही उसने उस सिपाही से ये कहा कि वह कैम्प में रहकर साहिबों के लिए कुछ काम करना चाहता है। इस पर उसे कैम्प के कमांडर के पास ले जाया गया। कमांडर ने उसे देखते ही पूछा, ''तुम्हारा नाम क्या है?'' उसने जवाब दिया, ''मैं पोकीमोंग हूं'' और मैं एक नागा हूँ।''

तुम चाहते क्या हो? इसका उसने कोई भी जवाब नहीं दिया। कमांडर ने दोबारा पूछा, ''क्या चाहते हो?'' अब कमांडर का धैर्य जबाब दे रहा था। पहले तो उसका मन हुआ कि इसे कैम्प से उठवाकर बाहर फिकवा दे, लेकिन जब उसने देखा कि लड़का कुछ कहना चाह रहा तो उसने फिर पूछा, ''क्या चाहते हो?''

पोकीमोंग ने गोरे कमांडर की तरफ देखा और दायें मुड़, बायें मुड़ कहते हुए मार्च करने लगा। उसकी इस हरकत पर कमांडर खिलखिला कर हँस पड़ा। खुश होकर उसने अपने आदमियों से कहा, ''इस छोकड़े को कैम्प के छोटे-मोटे काम दे दो।'' पोकीमोंग को मुँहमांगी मुराद मिल गई। उसने वो सब किया जो उससे कहा गया मसलन खाली कार्टूनों को इकट्ठा करना, रास्ता बुहारना, आलू छिलना, बर्तन धोना, टेबल साफ करना आदि। उसे एक से जयादा बार कहने की जरूरत ही नहीं पड़ती थी। वो तो अपनी मेहनत से ऐसा साबित करने पे तुला था जैसे कैम्प वालों को उसकी जरूरत हो। घरों में नौकरी के दौरान वा यही युक्ति उसके काम आती थी। हर घर में उसने अपनी मर्जी से नौकरी छोड़ी थी उसे कहीं से भी निकाला नहीं गया था। उसकी लगन को देखकर गोरे कमांडर ने उसे वहीं कैम्प में रहकर काम सीखने को कहा। शाम तक तो सबके इरादे बदलने में कामयाब हो गया था। अब कोई भी उसे कैम्प से निकलने देना नहीं चाहता था। उल्टे रसोइये ने उसे रसोई के पीछे ले जाकर बीफ और ब्रेड से भरी प्लेट खाने को दिया। खाने के बाद पोकीमोंग ने वहाँ पड़े सारे बर्तन धो दिए जबकि रसोइया मजे से कुर्सी पर पसरा सिगरेट के मजे लेता रहा।

चंद दिनों बाद तो कमांडर बिल्कुल ही ये भूल गया कि उसे लड़के को कैम्प से बाहर निकालना था। अब ये उसके लिए असंभव था। क्योंकि पोंकी पूरे कैम्प का चहेता बन चुका था। कैम्प में हर किसी की जूबान पर बस पोकीमोंग का हीं नाम रहता। अगर किसी को किसी चीज की जरूरत होती वो सब से पहले पोकीमोंग का नाम लेता। उनके लिए उसके पुरे नाम का उच्चारण मुश्किल था सो

उन्होंने उसे पोरकी बुलाना शुरू कर दिया। किसी के जूतों में पॉलिश करनी है तो पोरकी, बनिया साफ करनी हो तो पोरकी, मतलब पूरा कैम्प दिनभर पोरकी के नाम से गूंजता रहता। पोर्की यहां जा, वहां जा, ये ला, वो ला। पोर्की, पोर्की, बस पोर्की। महीने भर के भीतर पोर्की ने अग्रेज़ी बोलचाल के कुछ कामचलाऊ शब्द सिख लिये, भले ही उसे उनके अर्थ नहीं पता थे पर कैम्प में लोगों को खुश रखने के लिए वो इन शब्दों का इस्तेमाल करने लगा। पोर्की अब कैम्प का शुंभकर बन चुका था पर पोरकी के भीतर कुछ ऐसा था जो उसे लगातार सालने लगा। उसने सोचा कैम्प में सारा काम आखिर वो अकेले क्यों करे? और अगर करता भी है तो उसे मेहनताना मांगना चाहिए? पर अपनी माँग रखने से पहले उसे एक ऐसा स्थायी काम चाहिए जिससे वो एक जगह बैठ के इतमीनान से कर सके।

इसलिए वो कमांडर के टेंट के आस-पास एक स्थायी काम पाने के लिए चक्कर काटने लगा। उसने बिना नागे के टेंट के आसपास झाड़ू लगाना शुरू किया और कैम्प में इधर-उधर फैले ईंटों को इकट्ठा जोड़कर कमांडर के टेंट के सामने एक फुटपाथ तैयार करने लगा जिससे होकर कमांडर अपने फील्ड ऑफिस के लिए निकलने लग। फिर लगे हाथों साथ वाली खाली ज़मीन की निराई-गुड़ाई कर उसमें फूल के पौधे रोपे। कमांडर ने लड़के की मेहनत से खुश होकर उसे अपना सहायक नियुक्त करने का निर्णय लिया। पोकीमोंग की योजना बेहतरीन तरीके से काम कर रही थी। वो अब कमांडर का 'खास' आदमी था। अब वो आसानी से कैम्प में दूसरों के लिए उपलब्ध नहीं था। स्थिति ये हो गई कि जिसे भी उसकी जरूरत होती उसे पहले कमांडर से अनुमति लेनी होती। दूसरों की देखा-देखी उसने

कई आदतें जल्दी ही सीख ली, जैसे टेंट को साफ-सुथरा रखना, कमांडर की रुचि के अनुसार उसके जूते पॉलिश करना और हमेशा गेट पे चुस्त-दुरुस्त तरीके से खड़े रहकर कमांडर के आदेशों का पालन करना। जल्दी ही वो कमांडर का खासमखास बन गया। पहला दाँव कामयाब होने के बाद अब उसने इस काम के लिए नियमित तनख्वाह मांगने के बारे में सोचा।

पोकीमोंग को कैम्प आये लगभग एक साल गुजर गया था। अब काफी हद तक वो उनके बोलचाल और हावभाव को सीख गया था। उसने गुड मार्निंग, गुडनाईट आदि कहना सीख लिया था पर गुडआफ्टरनून अभी भी ढंग से नहीं बोल पाता था। दूसरी चीज जो उसे कैम्प में हमेशा से आकर्षित करती थी वो थी मशीनें। कमांडर के ऑफिस जाने के बाद हर दिन वो उन मशीनों का मुआयना करता और ये जानने की कोशिश करता कि उन मशीनों के भीतर क्या छुपा था?

अमूमन रविवार को कमांडर पूरे दिन के लिए बाहर होता तब पोकीमोंग कैम्प से बाहर आसपास घूमकर वहाँ की चीजों के बारे में पता लगाता। एक दिन ऐसे ही वह घूमते-घामते वह एक छोटे से गांव में पहुंचा जहां लगभग 20 घर थे जिसमें किसान अपने परिवारों के साथ रहते थे। गाँववालों को पोर्की को देखकर पहले तो थोड़ा संदेह हुआ पर जब उन्हें पता चला कि लड़का 'साहबों' के लिए एयरफिल्ड में काम करता है तो वे बड़े उत्साहित हुये। उन्होंने जिज्ञासावश उससे ढेरो सवाल पूछने शुरू किये। जैसे- वो अजीब से दिखने वाले गोरे खाते क्या थे? वे उसके साथ कैसा व्यवहार करते थे? क्या वे सच में इंसान ही है? पोकीमोंग उनके सवालों पर हँस पड़ा और उसने बताया कि ये 'साहिब' लोग भी हम आम इंसानों की तरह ही है और उसके साथ बहुत अच्छा व्यवहार करते थे? उसने

बताया कि वह 'बड़े साहिब' का निजि सहायक है और उनके टेंट में किसी भी समय बेरोकटोक जा सकता है। गाँव वालों को उस लड़के के सौभग्य से ईर्ष्या हुई जो गोरों के साथ खा और रह रहा था। गांववाले उसे 'गांवबुड़ाह' के घर ले गये जहां बड़े-बूढ़ों ने उससे सवालों की झड़ी लगा दी। 'गांववाले इन गोरे लोगों के कैम्प के आसपास ही रह रहे थे पर वे इससे बेखबर थे कि युद्ध समाप्त हो चुका है। युद्ध का डर इतना हावी था कि जब भी वे किसी हवाई जहाज की आवाज सुनते, डर से भागकर जंगल में पहुंच जाते। पोकि ने उन्हें आशक्त किया कि उन्हें अब ऐसा करने की कोई जरूरत नहीं, ये हवाई जहाज तो बस जान-माल को दूसरे क्षेत्र तक पहुंचा रहे हैं और जल्दी ही ये कैम्प भी खाली हो जायेगा। गांववालों ने उसकी बात बड़े गौर से सुनी और अगले रविवार कुछ और नयी खबरों के साथ उसे दोबारा आने को कहा। इस बीच गांवबुड़ाह की ओर से उसे एक भोज दिया गया। उसकी पत्नी ने बड़ा ही लजीत खाना पकाया और अरसे बाद पोकिमोंग ने छककर दाल-भात और मांस का सूप खाया। इस सुस्वादु भोजन ने उसे जीतेन के घर की याद दिला दी। लेकिन जल्दी ही वो ये सब भूलकर कुछ औरे सोचने लगा। ये कि अगर ये गोरे देश छोड़कर चले गये तो उसका क्या होगा? उसे अपनी जीविका के बारे में एकबार फिर से एक बार सोचना होगा?

पूरे हफ्ते पोकिमोंग अपने आनेवाले भविष्य को लेकर चिंतित रहा और कैम्प में भी दूसरों से बड़े अनमने ढंग से व्यवहार करता रहा। कमांडर ने इसे गहराई से महसूस किया। उसे एक शाम अपने टेंट में बुलाया और इस बारे में बात की। हांलाकि कमांडर अंग्रेजी में ठीक-ठाक बोल लेता था पर किसी गंभीर मुद्दे पर अपनी बात ठीक से व्यक्त नहीं कर पाता था।

कमांडर ने पूछा, ''क्या बात है? पोरकी? क्या तुम बीमार हो?

नहीं साहिब, नो सिक हियर, (अपनी शरीर की ओर इशारा करते हुए) बट सिक हियर (सिर की ओर इशारा करते हुए)।

क्यों पोरकी? क्यों?

यू गो, ऑल गो, एंड पोरकी नो गो। पोरकी गो वेयर? पोरकी नो हाऊस, नो विलेज, नो मौमी, नो डैडी? यू माई डैडी आफ्टर जीतेन बाबा। बट जीतेन बाबा एग्री, पोर्की रन अवे। पोर्की मैड मैड और बोलते बोलते वो सुबकने लगा। कैप्टन ये सब देखकर हैरान था। वो पेशोपेश में था। उसने शायद ही पोरकी के भविष्य के बारे में कभी सोचा था? ये सही था कि उसे लड़के से लगाव था और वो उसे अपने टेंट के आसपास हमेशा देखना चाहता था पर उसने कभी भी एक पल के लिए पोरकी के भविष्य के बारे में नहीं सोचा था जो उसके कैंप में स्थायी रूप से टिका था। वो पोर्की को सांत्वना देना चाहता था पर उसके पास कोई शब्द नहीं थे। उसकी पीठ थपथपाते हुए सिर्फ बोल पाया, ''ठीक है कल बात करेंगे पोर्की।'' गुडनाइट। पोर्की को गुडनाइट का मतलब पता था। उसे लगा अब चलने का वक्त हो गया है इसलिए वो टेंट से बाहर निकल अपने क्वार्टर की ओर चल पड़ा जहाँ वो अन्य स्टाफ के साथ मिलकर रहता था।

अगले दिन वह बेसब्री से कमांडर के बुलावे का इंतजार करता रहा पर सब बेकार। वहाँ से कोई बुलावा नहीं आया। दिन बीतते रहे और पोर्की के सब्र का बाँध टूट गया। एक शनिवार रात, वह खुद ही कमांडर के टेंट पर उससे मिलने चला गया। दरवाजा खटखटाकर बोला– ''क्या मैं अंदर आ सकता हूं?'' कमांडर पोरकी को देखकर हैरान रह गया। लेकिन उसने अपने चेहरे के भाव बदले बगैर

पोर्की को एक स्टूल पर बैठने का इशारा किया और कुछ लिखने लगा। पोर्की वहीं बैठा इंतजार करता रहा। लगभग घंटे बाद कमांडर उसकी ओर मुड़ा और बोला, ''देखो पोर्की दो-तीन दिनों में हम सभी वापस अमेरिका चले जायेंगे लेकिन हम तुम्हें वहां नहीं ले जा सकते। बस। यही सच है। पोर्की ने अपनी टूटी फूटी अंग्रेजी में कहा, ''पोर्की नो कैन गो विथ साहिब, डू यू अंडर स्टैंड।'' पोर्की ने सिर हिलाते हुए ऐसा कहा, वो लगातार गोरे कमांडर को एकटक देखे जा रहा था जैसे कि वो कोई बुत हो। कमांडर ने जारी रखी, ''देखो, मैंने यहां कागज पर लिखा है कि जाने के बाद हम तुम्हारे लिए क्या छोड़कर जायेंगे? कपड़े, जूते, बतर्मन, फर्नीचर, खाना, टेंट, टायर और एक जीप भी जो बिल्कुल चलती फिरती हालत में है। समझे तुम? पोर्की सिर हिलाते हुए बोला, ''बट पोर्की नो गो विद अमेरिकन्स। इस बार उसकी आंखों में चमक थी। कमांडर ने पोर्की को अपने पास बुलाकर नोटों का एक बंडल थमाया जो कि भारतीय मुद्रा थी जिसका उनके लिए अब कोई उपयोग नहीं रह गया था। इस बार तो पोर्की काफी उत्साहित दिखा और उसने कमांडर को सैल्यूट किया जैसा वो अक्सर सिपाहियों को करते देखता था। गोरे आदमी को थोड़ी राहत हुई कि चलो वो पोर्की को राहत पहुंचाने में कामयाब रहा। अब उसकी आत्मा को शांति मिलेगी। कागज के उस चंद टुकड़ों ने पोर्की की जिंदगी बदल दी थी। उसके बंद तकदीर के दरवाजे खुलने वाले थे। अब वो बिल्कुल मुक्त था। कागज के टुकड़े ने उसे उस उजाड़ से पड़े एयरफील्ड के अलग-थलग कैंप का लगभग मालिक ही बना दिया था।

अगले हफ्ते तक फिरंगी लड़ाकू सेना ने अपने बचे-खुचे सामान के साथ गौरव व सम्मान के साथ फाइटरएयर क्राफ्ट में सवार हो कैम्प को वीरान कर वहां

से रवाना हो चुकी थी। वो पलटन एक किंकर्तव्यविमूढ़ लड़के को मालिकाना हक वाले एक कागज के टुकड़े के साथ यहीं छोड़ गयी थी। पोर्की अब खाली जगह और वहां फैले सामान का मालिक है। पोकीमोंग पूरे दो दिन तक कैम्प में ही रहा और उस कागज पर लिखे शब्दों का मतलब निकालता रहा। इस सब के दौरान वो गांव वालों से भी नहीं मिल पाया। इसी उधेड़ बुन में उसने कैम्प में छोड़े गये खाने पर ध्यान नहीं दिया जिससे वे सड़ गये और जल्दी ही कैम्प पर चीटियों, चूहों, कौवों ने धावा बोल दिया। जिन सियारों को पहले सनिकों ने गन की आवाज से दूर भगा दिया, एक बार फिर वे कैम्प में शांति का फायदा उठा फिर घुस आये थे और बेफिक्री से इधर-उधर घूम रहे थे।

तीसरे दिन पोकी एक नये संकल्प के साथ उठा। उसने निर्णय किया कि वो गांवबुराह से मिलने जायेगा और गांव वालों से एक सौदा करेगा। उनसे अमीरीकी सैनिकों द्वारा छोड़ी गयी सभी चीजें बेचेगा। लेकिन मनाने से पहले उन्हेंये समझाना जरूरी होगा कि वे एक नये सौदागर से चीज क्यों खरीदें? अत: उसने कैम्प को खंगालना शुरू किया। पहले तो उसने कीमती चीजों को छांटा। वहां पड़े तमाम फर्नीचर जैसे- कुर्सियां, बिस्तर, मेंज, रसोई के बर्तन आदि को इकट्ठा किया। अगली ढेर जूते, चप्पलों, उपयोग करने योग्य कम्बल, कमीज, स्वेटर्स कुछ अजीब-सी चीजें जैसे- फोटोफ्रेम, शीशे, मैगजीन, अलग-अलग आकार के सूटकेश आदि थी। उसे पता था गांव वाले इन चीजों में रूचि दिखायेंगे। अब बारी जीप की थी : वो जानता था कि गांव में एक ऐसा आदमी भी था जो शहर में किसी ट्रक का खलासी (हेल्पर) था वो गाड़ी में पक्का रूचि दिखा सकता था।

चीजों को छांटते हुए उसके दिमाग में एक बात चल रही थी कि क्या गांव

वाले इस्तेमाल की हुई चीजों को किसी अंजान आदमी से खरीदने में रुचि दिखायेंगे? हो सकता है वे लेने से इंकार भी कर दे? वो जितना ज्यादा इसके बारे में सोचता जाता उतना ज्यादा उलझ जाता। पर वह इसे जाने देना नहीं चाहता था। वो किसी भी तरह उस अमेरिकियों द्वारा छोड़े गये चीजों से पैसे बनाना चाहता था। उसने खुद से पूछा, एक आम किसान के लिए सबसे ज्यादा कीमती चीज क्या है? और उसके भीतर से आवाज आयी- ज़मीन! उसे याद आया कैसे उसके पिता ज़मीन खरीदकर खेती करने के सपने देखा करते थे और उस बारे में दिन-रात सोचा करते थे। इसी ज़मीन के टुकड़े के खातिर वे चिड़चिड़े (गुस्सैल) भी हो गये थे। पोर्की को पूरा यकीन था कि कोई भी किसान ज़मीन के इस आसान सौदे को हाथ से जाने ही नहीं देगा। अतः उसने ये दाँव खेलने का निर्णय लिया कि वह उनसे समूचे एयर फील्ड का सौदा करेगा और बोनस के तौर पर मुफ्त में उन्हें ये सारा सामान देगा। जिसमें जीप भी शामिल होगी। इस सौदे से वो गांववालों को यकीनन पटा लेगा। वो चहक उठा। उसे लगा कि उसने गांववालों को समझाने बुझाने का सबसे अच्छा उपाय ढूंढ निकाला है। बिना समय गंवाये उसने फटाफट स्नान किया, टीन में रखा कुछ खाया और अंधेरे की परवाह किये बगैर गांव की ओर निकल पड़ा। जब तक वो गांव पहुंचा था, गांववाले खेतों से वापस लौट आये थे। अपने उत्साह को दबाते हुए वो 'गांवबुड़ाह' के घर की ओर चल पड़ा। वहां पहुंचकर उसने वहाँ इकट्ठा हुए किसानों को पेपर दिखाया और अपनी योजना बताई, पहले तो गांव वाले किसी भी तरह तैयार नहीं हुये। कुछ गांव वाले तो पोकीमांग के दावों की सच्चाई पर संदेह करने लगे। लेकिन गांवबुराह का बेटा जो पास के किसी शहर में 7वीं कक्षा में पढ़ता था, रहता था संयोग से गांव आया

हुआ था। उसे गाँव वालों द्वारा उस पेपर को पढ़कर उसका अर्थ समझाने को कहा गया हालांकि वो अंग्रेज़ी में इतना दक्ष नहीं था कि अंग्रेज़ी में लिखे उस पेपर को ठीक से पढ़ सके। वो लोगों की हँसी का पात्र बनना नहीं चाहता था इसलिए अपनी शेखी बघारते हुए बोला, ''हाँ, हाँ लाओ मैं पढ़ता हूँ।'' चूँकि वहाँ 'एयर फील्ड' शब्द पर बार-बार चर्चा हो रही थी इसलिए उसने 'एयर फिल्ड' शब्द को ध्यान से ढूँढकर निकाला जिससे उसे अनुवाद करने में थोड़ी बहुत मदद मिली। पोकीमोंग की खुशी के लिए उसने दस्तावेज में तीन जगह 'एयरफील्ड' शब्द ढूंढ निकाले और इस तरह उसने गांव वालों को आश्वस्त किया कि पोकीमोंग वाकई सच बोल रहा था।

गंभीर विचार-विमर्श के बाद गाँववालों ने ये तय किया कि वे एयरफील्ड मिलकर खरीदेंगे और बाद में इसे आपस में बांटेंगे। पर उन्होंने कैम्प का सामान लेने में उत्साह नहीं दिखाया। इस पर पोकीमोंग ने कहा, ''वे उसे ऐसे ही बिना पैसों के ले जा सकते हैं। देर रात तक उनके बीच ज़मीन की क़ीमत को लेकर बहस चलती रही। गांवबुड़ाह ने गाँव वालों को समझाया कि पोकीमोंग ज़मीन की ज्यादा कीमत मांग रहा था, इस पर अपना पक्ष रखते हुए पोकी ने जवाब दिया, वो उन्हें अच्छी किफायत दे रहा है, इसके दो फायदे हैं, एक तो ज़मीन उनके गांव के बहुत करीब है और मुख्य सड़क से पास भी है। काली चाय के अनगिनत प्यालों के दौड़ के साथ मोल-तोल का सिलसिला चलता रहा। अहले सुबह जब मुर्गे ने पहली बांग दी, गांवबुराह ने एक राशि तय की जिसे थोड़ी बहुत ना नुकुर के बाद पोकीमोंग मान गया। पोर्की की खुशी का ठिकाना न था क्योंकि उसे उस ज़मीन के टुकड़े के लिए 500 रुपये मिल रहे थे, जो असल में उसका था ही नहीं। कुछ

लोग तो अपने घर चले गये जबकि गांवबुराह ने ग्रामीण निधि से पैसे निकाल कर पोर्की के हवाले किया। उसके बाद पोर्की को एक स्वादिष्ट नाश्ता परोसा गया जिसमें मीठे चावल के साथ दूध व चीनी वाली चाय थी। नाश्ते के बाद पोर्की ने पैसे अपनी जेब में रखे और निकल पड़ा किसी अन्जान सफर पर।

इधर मुसीबत ने तब दस्तक दिया जब गांव वालों ने ज़मीन बांटने के लिए उसे खोदना शुरू किया। हफ्ते तक उनकी इस हरकत पर किसी ने ध्यान नहीं दिया पर एक दिन अफ्सर सा दिखने वाला एक आदमी, गांवबुराह के घर आया और उससे ज़मीन के बारे में सवाल-जबाब करने लगा। गाँवबुराह ने उसे कैम्प के कमांडर द्वारा लिखित कागज का टुकड़ा दिखाया गया और ये बताया कि उन्होंने पोकीमोंग नामक लड़के से ये ज़मीन खरीदी है। अफसर ने पूछा, ''वो लड़का है कहाँ? किसी के पास इसका जवाब नहीं था। उस वक्त जब ज़मीन का सौदा तय हुआ था तब किसी ने पूछने की जरूरत नहीं समझी कि पोर्की कहाँ रहता था? और कहाँ जा रहा था? अधिकारी दस्तावेज पढ़ते ही तो हँस पड़ा और गांववालों से बोला कि तुम लोग सच में भोले और बुद्धु हो क्योंकि जिसने तुमसे ये एयरफील्ड बेचा था वो कभी इसका मालिक था ही नहीं। इतना सुनते ही गाँवबुराह के पैरों के तले जैसे ज़मीन ही खिसक गई। वो धम्म से सिर पकड़ वहीं बैठ गया। गाँव वाले अब उस पल को कोस रहे थे जब उन्होंने एक अन्जान लड़के की बातों में आकर अपना सब कुछ खो दिया था।

❐❐❐

2.4 खत

गाँव में चारो ओर सन्नाटा पसरा था। गलियाँ सूनी और खिड़की दरवाजे बंद। ऐसा मालूम होता था मानों अभी-अभी कुछ भयानक घटा हो। ऐसी शांति पहले कभी वहां नहीं देखी गई। न बच्चों का शोरगुल, न बुजुर्गों की चौपाल और तो और बड़ों की गहमागहमी भी एकदम से गायब। पूरा-का-पूरा गाँव भयानक सन्नाटे की ज़द् में था।

दूर पहाड़ी पर बसा एक छोटा-सा गाँव और गाँववालों की रोजी-रोटी का एकमात्र ज़रिया खेती-बाड़ी और मजदूरी। अगर इससे ज्यादा और कुछ था तो वो था मुर्गी और सूअर पालन। जिससे गाँववालों की थोड़ी बहुत आमदनी हो जाती और जैसे-तैसे उनके दिन कट जाते।

अमनपसंद इस गाँव में आज कुछ अजीबोगरीब घटा था। नागा आज़ादी के नाम पर लड़ने वाले संगठन के कुछ मवालियों ने गाँव पर धावा बोल दिया था और खून-पसीने से कमाई गई उनकी एक-एक पाई उड़ा ले गये थे। चंदे के नाम पर उगाही का ये धंधा गाँव वालों के लिए कोई नया नहीं था। पर बात आज उन रुपयों की थी जिसे बड़ी मेहनत-मशक्क़त से एक-एक पाई करके जोड़ा गया था। आसपास के गांवों में ऐसे कई संगठन कुकुरमुत्ते की तरह उग आये थे जो छद्म आजादी के नाम पर भोले-भाले ग्रामीणों से उगाही करते थे। अगर भूल से भी कोई उन्हें मना करता तो उन पर कहर टूट पड़ती। वैसे तो हर बार हीं ऐसा होता था पर इस बार मामला कुछ अलग था। जाने कितनी मिन्नतों और हील-हुज्ज़तों के बाद सीमा सड़क संगठन से मजदूरी का ये काम उनके हाथ लगा था। ऐसा नहीं

था कि ये काम उन्हें झटके में ही मिल गया था। गाँव वालों को इसके लिए बड़े पापड़ बेलने पड़े थे। हाथ-पैर जोड़ने पड़े और हुज्ज़त करनी पड़ी, तब कहीं जाके ये काम उनके हाथ लगा। दरअसल बीआरओं का कहना था कि उनके पास मजदूरों की कोई कमी नहीं। पहले से ही काफी संख्या में लोग उनके यहाँ मज़दूरी के काम में लगे हैं, फिर वे और मजदूर क्यों लें? इधर गाँव वालों की दलील थी कि चूँकि सड़कें उनकी ज़मीनों से होकर निकलेगीं इसलिए नपाई में कोई गड़बड़ी न हो, इस लिहाज से उनका इस काम में होना बहुत जरूरी है। नपाई के दौरान इंच भर भी ज़मीन इधर उधर खिसक गई तो खामख़्वाह का बबेला खड़ा हो जायेगा। चूँकि पड़ोसी गांव की ज़मीनें भी इसकी सीध में आयेगीं तो मामला और बिगड़ सकता था। और सबसे बड़ी बात तो ये की वे ज़मीनें के असली मालिक हैं ऐसे में किसी भी हाल में उनका इस काम में रहना बहुत ज़रूरी है।

अंतत: बीआरओं को गाँव वालों की दलील के आगे झुकना पड़ा। ठेका गाँव वालों को ही मिला। जोर-शोर से काम शुरू हुआ और नियत समय से पहले ही पूरा कर लिया गया। ठेके से मिलने वाले पैसों को लेकर लोगों ने न जाने क्या-क्या सपने संजाये थे। किसी को अपने टूटे घर की मरम्मत करवानी थी, तो किसी को खेतों की जुताई के लिए बैलों के जोड़े लेने थे। एक ने तो उन्हीं पैसों के भरोसे घर की मरम्मत के लिए दुकान से तख़्ते। ये कहकर उधार ले लिये थे कि बाद में पैसे मिलने पर उधार चुका देगा। पर उसके सारे सपने तब चूर-चूर हो गये जब देखते ही देखते भूमिगत कार्यकर्त्ताओं ने उनके पैसे झटक लिये। उनके सपनों का ज़मीनें नहीं मिलनी थी, सो नहीं मिली। पैसों की भनक लगते ही

संगठन के गुर्गे आये और चंद मिनटों में ही उनके सपनों की इबारत को ध्वस्त कर दिया। इसके पहले की गाँववाले अपनी मजदूरी के पैसे लेकर गाँव लौटते, संगठन के सरगना को इसकी भनक लग गई। वो अपने दल-बल सहित गाँव आ धमका। गाँव पहुँचकर सबसे पहले उन्होंने गाँव के मुखिया से उस आदमी का पता पूछा जिसका नाम टैक्स देनेवालों की सूची से गायब था। गांव के अन्य सभी लोगों के नाम उसकी सूची में पहले से ही शामिल थे सिर्फ वही एक था जिसका नाम हफ़्ता वसूली की सूची से गायब था। उसने जानबूझकर अपना नाम उसमें नहीं डाला था क्योंकि उन पैसों से वो अपने घर की मरम्मत करवाना चाहता था। गैंग के सरगना के आदेश पर उसके गुर्गे उस आदमी को घर से घसीट लाये और उस पर ताबड़तोड़ हमला करने लगे। गाँव वाले उसे पीटता देखते रहे पर किसी की हिम्मत नहीं हुई कि वो आगे बढ़कर उसे बचाये। हालांकि एक दो लोगों ने बीच-बचाव करने की कोशिश की पर उन्हें भी गुंडों का कोपभाजन बनना पड़ा। दरअसल गाँव वाले उनसे लड़ाई मोल लेना नहीं चाहते थे क्योंकि उनके पास गोला-बारूद था और गाँव वाले निहत्थे थे। उनसे खाली हाथ भिड़ने का मतलब था खून-ख़राबे को बुलावा देना।

इन तथाकथित क्रांतिकारियों और उनके गुर्गों द्वारा भोले-भाले गाँव वालों से चंदे के नाम पर उगाही की ये कोई नई घटना नहीं थी। आए दिन चंदे के नाम पर गाँववालों को गुंडागर्दी का शिकार होना पड़ता था। पर हैरानी तो ये थी कि उन्हें बीआरओ से मिलने वाली मज़दूरी की पक्की और सटीक खबर मिली कैसे? गैंग के लीडर ने अपने गुर्गे को आदेश दिया कि वो सूची में उन लोगों के नाम पढ़कर

सुनाएँ जिन्हें चंदे की रकम देनी है। अजीब से हुलिये का एक आदमी फरमान सुनते ही फटाफट सूचि से देखकर नाम पुकारने लगा। जितनी ख़ूंखार उसकी शक्ल, उससे कहीं ज़्यादा भयानक उसकी आवाज। उसके चुप होते ही ज़मीनें पर बेसुध पड़ा वो आदमी जिसे अभी-अभी उन्होंने पीटा था, लड़खड़ाते उठा बैठा और हाथ जोड़ कर संगठन के सरगना के सामने गिड़गिड़ाते हुए बोला, ''माई बाप इस बार छोड़ दो। मैं वादा करता हूं, थोड़े दिनों बाद आपको आपके हिस्से की पाई-पाई चुका दूंगा। अभी मेरे बेटे का इम्तिहान सिर पर है, उसकी स्कूल फीस भरनी है। अगर अभी आपको पैसे दे दिये तो फिर उसकी फीस कैसे भरूंगा? और फीस नहीं भरी तो उसे इम्तिहान में बैठने नहीं दिया जायेगा। उसकी जिंदगी बर्बाद हो जायेगी। माइबाप मैं आपके हाथ जोड़ता हूं, पैर पड़ता हूं, मुझे एक और मौका दे दीजिए। उसने हर संभव तरीके से गिरोह के सरगना को मनाने की कोशिश की।

इससे पहले कि वह अपनी बात पूरी कर पाता, गिरोह के एक सदस्य ने उस आदमी के सिर पर बंदूक की बट दे मारी। जिससे वो उछलकर दूर जा गिरा। गुर्गे ने दहाड़ते हुए कहा, ''कौन सी परीक्षा? कैसी फीस? तुम्हें पता भी है कि हमने आज़ादी के लिए सरकार के खिलाफ़ जंग में कितनी जानें दी है? हम जंगलों की खाक छान रहे हैं और तुझे बेटे की फीस चुकानी है ताकि एक दिन पढ़-लिखकर भारत सरकार में बाबू बन जाए और हमारे ऊपर ही हुकूमत चलाए। हम ये कतई बर्दास्त नहीं करेंगे।

भारतीय शब्द बोलते हुए गुर्गे का चेहरा क्रोध और घृणा से ऐसे तमतमा रहा था जैसे दहकती हुई कोई ज्वाला जो अभी-अभी फूट कर बाहर निकली हो। ऐसा

लग रहा था मानो वो किसी का खून न कर बैठे। उसके सिर पर तो मानो खून सवार था। गाँव के मुखिया को हालात भाँपते देर न लगी। उसने सोचा अगर इस आदमी को इन दरिंदों की नजर से दूर न ले जाया गया तो निश्चित ही वे उसका खून कर बैठेगें। मुखिया ने झट से उस घायल आदमी को खींचकर पीछे धकेल दिया और उसकी ज़ेब से पैसे निकालकर सरगना को पकड़ा दिया। गिरोह का सरदार गुस्से से उफ़न रहा था। उस वक्त वो किसी की भी सुनने के पक्ष में नहीं था। पर चूंकि मुखिया ने कई बार पुलिस पेट्रोलिंग के दौरान मुखबिरी करके उसकी जान बचाई थी इसलिए गिरोह का सरगना उसका एहसानमंद था। उसने चुपचाप मुखिया के दिये पैसों को जेब में डाला और दल बल सहित वहां से चलता बना।

उसके जाते ही गाँव वाले, जो अब तक मूकदर्शक बने हुए थे, आनन-फानन में उस घायल व्यक्ति को लेकर नज़दीक के अस्पताल में पहुंचे। उसकी हालत बहुत खराब थी। चेहरा पूरी तरह सूज गया था और नाक-मुँह दोनों से लगातार खून बह रहा था। प्राथमिक उपचार के बाद उसे घर भेज दिया गया। इसी बीच मुखिया ने रहम खाते हुए उसे अपने बेटे की फीस भरने के लिए कुछ पैसे उधार के दिये।

अभी वो गुंडे भले ही चले गये थे पर खतरा पूरी तरह टला नहीं था। किसी भी वक्त उनके दोबारा आ धमकने का डर गांव वालों को भीतर ही भीतर खाये जा रहा था। थोड़े दिनों बाद गाँव में एक बार फिर सब कुछ सामान्य हो गया। कुछ दिनों बाद गाँव वालों को मालूम हुआ कि वो भाड़े के गुंडे थे जो तथाकथित छद्म आंदोलन के नाम पर पैसों की उगाही किया करते थे। लोगों को

डरा-धमकाकर पैसे वसूलना उनका मुख्य पेशा था। पैसों की खातिर वे किसी का भी क्षणभर में धड़ से सिर अलग कर देते थे। गाँव वालों को ये भी मालूम था कि इन गुंडों के गुटों में अंदरखाने कुछ ठीक नहीं चल रहा था। उगाही नहीं करने पर कैसे उनके आका बंदूक से उसकी खोपड़ी उड़ा देते थे? गांववालों को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता था कि इन गुंडों के साथ उनके आका कैसा व्यावहार करते थे? उनसे उनकी कोई सहानुभूति नहीं थी। गाँववालों को तो एक साथ दो मोर्चों पर लड़ना पड़ता था। एक तरफ सरकारी एजेंट तो दूसरी तरफ भूमिगत लुटेरे। वे चक्की के इन दो पाटों के बीच बुरी तरह फंसे थे। वे इन सबके बीच संतुलन साधने की हर संभव कोशिश करते पर कोई फायदा नहीं था। हालात जस के तस थे। दरअसल वे लड़ाई मोल लेना नहीं चाहते थे। एकतरफ़ इन भूमिगत लुटेरों की मदद करनी पड़ती तो दूसरी ओर सेना के जवानों से बेहतर संबंध रखना उनकी मजबूरी थी। सेना के जवान चावल, सब्जी या ज़रूरत की दूसरी छोटी-मोटी चीज़ों के लिए उनके गांव का ही रूख करते। इस तरह वे भारतीय सेना के काफ़ी करीब थे।

अभी-अभी हुई इस घटना से गांववाले आक्रोश में थे। उनका गुस्सा ज़्वालामुखी की तरह धधक रहा था। वे पल-पल बदले और प्रतिशोध की आग में जल रहे थे। आने वाले कई हफ़्तों तक चौपाल से लेकर खलिहान तक यही मुद्दा गरमाया रहा। सबकी जुबान पर बस यही बात थी कि इस दलदल से बाहर कैसे निकला जाए? नागालैंड की इस कलूषित राजनीति से वे तंग आ गये थे। उन्हें पता था, सालों से चली आ रही ये लड़ाई नागा-समाज को हासिये पर धकेल रही थी।

उन्हें अराजक और विद्रोही बनाया जा रहा था। वे इन सब से बाहर निकलना चाहते थे। इस लड़ाई में गाँव की युवा पीढ़ी को बेवजह धकेला जा रहा था। उन्हें हिंसा के रास्ते पर चलने को मजबूर किया जा रहा था। आखिर ये सब रोका कैसे जाए? इस सवाल का जवाब ढूंढने सभी गाँव वाले एक दिन मुखिया के घर इकट्ठा हुए। बैठक हुई और देर रात तक बैठक में यही मुद्दा गरमाया रहा। उपस्थित भीड़ दो खेमों में बँट गयी। गाँव के बुजुर्गों की राय थी कि इन गिरोहों और उनकी गतिविधियों पर अंकुश लगाया जाए जबकि जवानों का पक्ष उनकी इस राय से बिल्कुल भिन्न था। उनका इस बात पर जोर था कि ईंट का ज़वाब पत्थर से दिया जाए। इन गुर्गों को उन्हीं की भाषा में करारा जवाब देना सही होगा। वे ये भी कर रहे थे कि जो कोई भी उनके साथ अभद्रता से पेश आयेगा या उन्हें धोखा देने की कोशिश करेगा उन्हें किसी कीमत पर बख़्शा नहीं जायेगा।

घंटों बहस चलती रही। युवाओं के प्रचंड क्रोध की भीषण ज्वाला में बड़े-बुजुर्गों की राय दब कर रह गई। अंततः ग्राम परिषद में एक सुर से इस फैसले पर मुहर लगी कि कोई भी व्यक्ति न तो इन माफ़ियाओं को टैक्स देगा और न ही कोई सरकार के लिए बेगारी करेगा। और तो और सेना को भी कोई अपना सामान नहीं बेचेगा। परिषद् के इस फैसले से गांव के युवा खुश थे। उनकी जीत हुई थी। अंतिम वक्त तक बड़े-बुजुर्ग उनको समझाने में लगे रहे कि वे शुरूआती स्तर पर अपनी ओर से कारवाई की कोई पहल न करें इससे हालात और ज़्यादा उग्र हो सकते थे। इस तरह टीका-टिप्पणी और क्रिया-प्रतिक्रिया के बाद बैठक समाप्त हुई और लोग अपने-अपने घरों को लौट गये। उम्मीद थी कि

ग्रामपरिषद् की इस बैठक के बाद सबकुछ सामान्य हो जायेगा पर हुआ ठीक इसके विपरीत। उस ग्रामीण पर हुए उस अत्याचार की घटना के बाद गांव की औरतों का गुस्सा सांतवें आसमान पर पहुंच गया। इस घटना ने चिंगारी का काम किया था। वर्षों से उनके भीतर दबी नफरत, घृणा और गुस्से की ये आग अचानक सुलग उठी। जाने कितने वर्षों से वो ये सब देख सुनकर चुप थी। इन सरगनाओं के खिलाफ आवाज न उठा सकने के कारण वे कई दफ़ा गाँव के मर्दों को दुत्कार चुकी थी। उन्हें हिजरा कहती और उनका मज़ाक उड़ाती। वे कहती, ''तुम सब के सब नामर्द हो, चुड़ियां पहनकर घर बैठ जाओ। अगर ईंट का जवाब पत्थर से नहीं दे सकते तो काहे की मर्दानगी। चुल्लु भर पानी में डूब मरो।'' महिलाओं की इस छींटाकशी का मर्दों के पास कोई जवाब न होता। वे अपनी कायरता पर मन-मसोसकर रह जाते। और सच तो यही था कि वाकई उनके पास इसका कोई माकूल जवाब नहीं था क्योंकि वे सालों से इन गुटों की गुंडागर्दी बर्दाश्त करते आये थे। उन्होंने कभी भी डटकर इनका मुकाबला नहीं किया। कायरों की तरह मुंह छिपाकर बैठे रहे। तो आज अगर ये महिलायें उनके लिए ऐसा बोल रही है तो इसमें गलत ही क्या है?

इस घटना के बाद महीनों बाद गांव में सब कुछ सामान्य हो गया। लोग अपनी अपनी दिनचर्या में मशगूल हो गये। पर अमन और शांति के इस महौल में हर बार कुछ ऐसा हो जाता जिससे गाँव की शांति भंग हो जाती। और लोगों को अमन चैन छिन जाता। इस बार भी एक ऐसी ही घटना घटी जिसने एक बार फिर सबकुछ अस्थिर कर दिया। हुआ यूँ कि एक दिन एक आदमी खुद को सेना का जवान बताकर मुखिया के घर का पता पूछते-पूछते गाँव में घुस आया।

किसी ने उसे मुखिया के घर का रास्ता दिखा दिया। वहाँ घर के बाहर उसे एक बुढ़िया मिली जिसे उस अजनबी ने अभिवादन किया। बुढ़िया अभी-अभी अपने बेटे (मुखिया) के घर से अपने बीमार पोते को उसका मनपसंद खाना खिलाकर लौटी थी। गाँव में हुई किसी भी घटना से वो अंजान थी। बुढ़ापे के कारण वो ज्यादा चल फिर भी नहीं पाती थी और ना ही उसे इन मसलों से कोई लेना देना था। बुढ़िया का अतीत बड़ा त्रासदपूर्ण था। वर्षों पहले आंदोलन के दौरान वो सेना के हत्थे चढ़ गई थी। हालांकि बाद में किसी तरह वह उनके पकड़ से छूट गई थी। इसलिए उसे उन लोगों के दर्द का बखूबी एहसास था जो बलवा करने के आरोप में सेना के हाथों पकड़े जाते और सेना की क्रूरता का शिकार होते। उसने स्वयं इस दर्द को देखा, सुना और भोगा था। बलवाईयों की भीड़ में शामिल होने के जुर्म में वो भी एक बार पकड़ी गयी थी। और तो और उसके पति की इन दंगाइयों के हाथों निर्मम हत्या ने आज तक उसे चैन की नींद सोने नहीं दिया। भारतीय सेना की मुखबिरी के आरोप में पहले तो उसका अपहरण फिर उसकी निर्मम हत्या ने जैसे उसे भीतर से तोड़ दिया था।

और ये कैसा संयोग कि आज वही आदमी जिसने उसके पति की हत्या की थी छद्म वेष धारण कर उसके सामने खड़ा था। बुढ़िया ने उस हत्यारे को पलभर में ही पहचान लिया था। पर अपनी भावनाओं पर काबू रखते हुए उसने संयम से जवाब दिया, ''बेटा वो दूसरी ओर उन पेड़ों के पीछे नाले के पास जो घर दिख रहा है न? वही उस मुखिया का घर है।'' दरअसल बुढ़िया ने उसे गलत पता बताया था। उसके जाते हीं वो दौड़ी-दौड़ी अपने बेटे (मुखिया) के घर पहुँची और

एक ही साँस में सारा किस्सा कह सुनाया। सुनते ही मुखिया सकते में आ गया। उसने फटापट अपना शॉल और दाँव संभाली और लोगों को इकट्ठा करने के वास्ते तेज़ी से अपने दोस्त के घर की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँचते ही वो देखता क्या है कि छः सात लोगों का झूंड पहले से ही उसके दोस्त के घर के आगे जमा है। जिसमें से एक अपनी बंदूक घुमा-घुमा कर उसके दोस्त को धमकी भरे लहजे में कह रहा था, ''देखो! अगर तुमने हमारे सरदार द्वारा माँगा गया रुपया नहीं दिया तो हम तुम्हारी जान ले लेंगे और हाँ अगर भूल से भी तुम्हारे घर के किसी सदस्य ने इसके खिलाफ आवाज उठाई तो हम उसे जिंदा नहीं छोड़ेंगे। इसे चेतावनी नहीं धमकी समझो। और इस भूल में तो बिल्कुल भी मत रहना कि हमें उन गाँव वालों के बारे में नहीं पता जो तुम्हारा साथ दे रहे हैं? हमें सब खबर है कि कौन तुम्हारे साथ खड़ा है, और कौन नहीं? हम उन्हें भी नहीं छोड़ने वाले।''

हाँलाकि उस आदमी के पास एक भरी बंदूक थी फिर भी वो थोड़ा घबड़ाया हुआ लग रहा था। उसने गाँव के लोगों को ललकारते हुए कहा, ''है किसी माई के लाल में दम, जो हमसे भिड़े? आ जाओ एक-एक करके सब। कौन है वो चूहा जो गाँव वालों को हमारे खिलाफ भड़का रहा है? हिम्मत है तो बिल से बाहर आओ।'' उसी समय गैंग का एक लंबा सा आदमी आगे आया जिसे गैंग के लोग लंबू कहते थे। उसने बोला, ''यही सवाल तो हम तुमसे कर रहे हैं? कौन हो तुम? कहाँ से आये हो? और कैसे खुद को हमारी गैंग का सदस्य बता रहा हो? किसने तुम्हें यहाँ भेजा है? उगाही करने तो हम आये हैं फिर तुम कहाँ से टपक पड़े, भाई?

एक साथ इतने सारे सवाल सुनकर बंदूकधारी व्यक्ति हड़बड़ा गया। घबराहट और डर के मारे उसने अचानक फायर कर दिया। संयोग से कोई हताहत नहीं हुआ। गोली वहीं खड़े एक ग्रामीण के शरीर को छूती निकल गई।

गोली की आवाज़ सुनते ही गाँव वाले अपने-अपने घरों से बाहर निकल आये। हुजूम के हुजूम लोग उस घर के आस-पास की इकट्ठा होने लगे जहाँ अभी-अभी गोली चलने की आवाज़ आयी थी। भीड़ को अपनी तरफ बढ़ता देख बंदूकधारी व्यक्ति घबड़ाकर भागने लगा। लोगों ने उसे वहीं दबोच लिया। और उसे तब तक मारते रहे जब तक की वो अधमरा होकर ज़मीनें पर न गिर पड़ा। मामले की गंभीरता को देखते हुए गांव वाले एक-एक कर वहां से खिसकने लगे। चंद नौजवानों और खून से लथपथ उस बंदूकधारी को छोड़कर बाकी सभी वहां से चलते बने।

इधर घर का मालिक बुरी तरह डरा हुआ था। डर के मारे उसकी घिग्घी बँधी हुई थी। काँपती आवाज में उसने गुट के सदस्यों से, उस घायल व्यक्ति को घर से दूर ले जाने का अनुरोध किया। गुट के सरगना, लंबू ने अपने गुर्गों को नीचे पड़े उस व्यक्ति को उठाने का आदेश दिया। आदेश पाते ही गुट के लोग उसे पीठ पर उठा जंगल के पीछे वाले रास्ते पर चल पड़े जिसे लोग भूतिया गुफ़ा कहते थे। हालांकि दूसरे सदस्यों ने इस पर सख़्त एतराज जताया। उनका कहना था कि अंधेरा होनेवाला है ऐसे में अभी इस वक्त उस मनहूस और भूतिया रास्ते पर जाना कतई ठीक नहीं। लेकिन लंबू ने उनकी एक न सुनी। वो झाड़ियों को अपने दाँव से साफ़ करता बेझिझक उस रास्ते पर आगे बढ़ता गया। मजबूरन गुट के सदस्यों को

भी उसके पीछे-पीछे चलना पड़ा। उस घायल आदमी को टांगे उस रास्ते पर धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे। अंततः वे पहाड़ी की उस भूतिया गुफ़ा तक पहुंच ही गये।

लंबू के आदेशानुसार उन्होंने बेसुध पड़े व्यक्ति को भूतिया गुफा में पटक राहत की साँस ली। इसके बाद सभी वहीं आराम से पसर गये। उनकी हिम्मत ज़वाब दे गयी थी। वे अभी तुरंत पहाड़ी से नीचे नहीं उतरना चाहते थे। आस-पास बिखरी लड़कियों को इकट्ठा कर उन्होंने अलाव जलाया। अलाव के चारों ओर बैठकर वे इस बात पर एकराय बनाने लगे कि वेसुध पड़े इस आदमी के शरीर को आखिर ठिकाने कैसे लगाया जाए? लंबू उन सबसे अलग थोड़ी दूरी पर बैठा गंभीर मुद्रा में कुछ सोच रहा था। शायद वो बेजान पड़े उस आदमी को ज़ल्दी से ज़ल्दी ठिकाने लगाने के बारे में गहराई से विचार कर रहा था। उसका दिमाग किसी चक्करघिरनी की तरह लगातार घूम रहा था। उसे मालूम था अगर ज़्यादा देर की गई तो मामला हाथ से निकल सकता था। उसने फटाफट गैंग के दूसरे सदस्यों को बुलाया और उनके सामने अपनी बात रखी। क्यों भाइयों? तुम लोगों की क्या राय है? क्या इसे मरने को यहीं छोड़ दिया जाए या फिर पहाड़ी से नीचे फेंक दिया जाए? सदस्यों ने छूटते ही कहा, ''लंबूजी, फिर इसकी बंदूक का क्या करेंगे?'' हूँ!! बात तो सही है ''इसकी बंदूक को ठिकाना लगाना भी जरूरी है'', लंबू बोला। थोड़े विचार-विमर्श के बाद सर्वसम्मति से ये तय हुआ कि घायल पड़े उस आदमी को पहाड़ी से नीचे फेंक दिया जाए और उसकी बंदूक को यहीं आसपास झाड़ियों में कहीं छुपा दिया जाए।

फैसले के अनुसार घायल बंदूकधारी को पहाड़ी से नीचे फेंके जाने की तैयारी की जाने लगी। इससे पहले कि उसे नीचे धक्का दिया जाता, लंबू जोर से चीखा, ''अरे मूर्खों ज़रा रूक जाओ। इसे फेंकने से पहले जरा इसकी जेब तलाशी तो करो। क्या पता कुछ ऐसा मिल जाए जिससे इसके बारे में पता चलें ये कोन है? कहाँ से आया है। तलाशी लेने पर उसकी जेब से कागज का एक गीला टुकड़ा मुड़ी-तुड़ी पहचान पत्र की एक प्रति और एक खत मिला, जिस पर पास के शहर का पता लिखा था। उसकी जेब खाली कर गैंग के सदस्य उसे धकेलते हुए पास के ऊंचे टीले पर ले गये जहां से उसे धक्का दिया जाना था। उसकी बंदूक वहीं पास की झाड़ियों में फेंक दिया गया। टीले पर पहुंचकर वे रूक गये। उन्होंने देखा लंबू उन फटे-पुराने कागज के टुकड़ों को जोड़ने की कोशिश कर रहा है। कागज के उन टुकड़ों को जब आपस में जोड़ा गया तो वे कुल 49 रुपये की शक्ल में ामने आये। बहुत कोशिश के बाद भी वे उसके पहचान पत्र को ठीक से पढ़ नहीं पा रहे थे। हाँ खत पर लिखे पोस्ट बॉक्स संख्या को लंबू ने जरूर कोशिश करके पढ़ लिया था। खत का अगला हिस्सा पढ़ते-पढ़ते एकाएक लंबू के चेहरे का रंग उड़ गया। शरीर झक्क सफेद पड़ गयी। अचानक वो धम्म से ज़मीनें पर बैठ गया मानो पूरी पृथ्वी का भार अपने अकेले कंधों पर उठा लिया हो। पास बैठे सदस्य अंधेरे और विवेकशून्यता के कारण अपने संगठन के सरगना का चेहरा नही पढ़ पाये। उसके चेहरे पर आ-जा रहे भाव भंगिमाओं का वे ठीक से आंकलन लगा पाने में असमर्थ थे। हाँलाकि वो समझ रहे थे लंबू किसी न किसी विकट परिस्थिति में था, पर समस्या क्या थी? ये किसी को नहीं पता था और न

किसी में पूछने की हिम्मत थी? सभी किंकत्वर्यविमूढ़ खड़े थे। उधर लंबू भी चतनाशून्य ऐसे खड़ा था मानो बर्फ का पुतला। थोड़ी देर बार सामान्य होने के बाद लंबू ने मरे हुए व्यक्ति की जेब से कागज के बचे टुकड़ों को फटाफट निकाला और उसे जल्दी अलाव में झोंक दिया। और राहत की लंबी सांस ली। जैसे सिर से एक बड़ी मुसीबत टल गई थी। इस प्रतिज्ञा के बाद कि उस अंजान व्यक्ति के साथ हुई इस घअना की चर्चा भविष्य में किसी से नहीं करेंगे। वे सभी वहां से चल पड़े।

वक्त बीतता गया। दिन, महीने और साल। उस रता जंगल में टीले पर हुइ उस घटना को आज तक किसी को पता नहीं चला। उस पर वक्त की बर्फ की ऐसी मोटी चादर चढ़ी जिसे कोई भेद नहीं पाया। पर आज भी खत के एक-एक शब्द लंबू के सीने में कील की तरह धँसे थे। जब तब उसकी सांसे चलती रही, वे शब्द कील बनकर दिन-रात चुभते रहे। लंबू भले ही अनपढ़ था, मुश्किल से एकाध शब्द जोड़कर पढ़ लेता था लेकिन आज भी वो शब्द उसके मानसपटल पर ऐसे अंकित थे जैसे अभी-अभी किसी ने उसकी स्मृतियों के धागे में, उन शब्दों को पिरोया था।

वो ख़त नहीं सीने पर रखा एक था जिसके बोझ तले लंबू जीवन के अंतिम क्षण तक दबा रहा। खत, मारे गये उस व्यक्ति के बेटे का था जिसके पहली पंक्ति में ही लिखा था-''बाबूजी कृपया कर किसी तरह मेरी स्कूल की फीस भेजिए।''

❐❐❐

2.5 तीन औरतें

(झोपड़े का एक दृश्य)

झोपड़े के बाहर एक नौजवान बेचैनी से चहलकदमी कर रहा है। भीतर औरतों का कोलाहल जारी है। 'थोड़ा और जोर लगाओ, थोड़ा और' की आवाज से स्पष्ट है अंदर प्रसव कराया जा रहा है। अचानक कोलाहल शांत होता है और नवजात बच्चे की चीख से वातावरण गूँज उठता है। भीतर जमी महिलायें खिलखिलाते हुए बाहर आती है और अपने-अपने रस्ते आगे बढ़ जाती है। भीतर अब सिर्फ तीन औरतें ही रह गई है। उधर नौजवान बेसब्र हो रहा है वो अभी-अभी जन्में बच्चे की एक झलक पाने को आतुर हो उठता है। बच्चे को अभी भी तीनों औरतों ने घेर रखा है। बाहर से कुछ स्पष्ट दिखाई नहीं दे रहा। नौजवान उन्हें हटने को कह सकता है पर विवश है, चाहकर भी कुछ कह नहीं सकता। वह उनके और बच्चे के बीच प्रेमालाप में बाधा बनना नहीं चाहता। इसलिए बाहर प्रतीक्षा करने के सिवा उसके पास कोई और चारा नहीं। तीन महिलायें, तीनों भिन्न प्रकृति की। वेश-भूषा, चाल-ढाल, नयन-नक्श सब अलग-अलग, पर एक ऐसी समानता है जिसने तीनों को आपस में जोड़ रखा है वो है रक्त संबंध।

तीन स्त्री शक्तियों की कहानी उन्हीं की जुबानी-

मारथा की कहानी

मैं हूँ मारथा। और ये है मेरी कहानी जिसे मैं खुद की जुबानी आप सबको सुना रही हूँ। ये सिर्फ कहानी नहीं बल्कि मेरी पहचान और अस्तित्व के संघर्ष की

ज़द्दोज़हद है। मेरी कहानी वहां से शुरू होती है जब मैं अपनी नानी और माँ के साथ एक छोटे से पहाड़ी गाँव में रहती थी। गाँव के बच्चे अक्सर मुझे 'काली' कहकर चिढ़ाते क्योंकि मेरा रंग गहरा और नयन-नक्श उनसे थोड़े अलग थे। स्कूल हो या खेल का मैदान। हर जगह उनके मन में मेरे लिए तिरस्कार का भाव रहता। मेरे सहपाठी मुझे नीचा दिखाने की कोशिश करते। घर आकर मैं प्रायः नानी से सवाल करती, नानी-नानी बच्चे मुझे 'काली' कहकर क्यों चिढ़ाते हैं। इस पर नानी अपने कंधे उचकाते हुए कहती, अरे बिटिया, ''तू क्यों उनकी बातों पर ध्यान देती है? वे सब तुझसे ईर्ष्या करते हैं। तु खेल-कूद और पढ़ाई-लिखाई में होशियार है न! बस इसलिए। तू उनकी बातें बिल्कुल भी न सुना कर।'' मेरा बाल-सुलभ मन, नानी के इस जबाब से संतुष्ट हो जाता। और मैं बच्चों संग फिर से मस्ती में डूब जाती। एक चीज़ जो मुझे सब बच्चों से अलग करती थी वो थे मेरे काले-घुंघराले अफ्रीकीयों जैसे बाल। जो मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं थे। बाल क्या थे जूँओं का घोंसला था। हज़ारों-लाखों जूँओं ने मेरे बालों में अपना अड्डा बना रखा था। नानी और माँ के लाख कोशिशों के बाद भी जूँए बालों में ऐसे बेधड़क घूमती जैसे जंगल में निडर जानवर। उन्हें इधर-उधर खुजली मचाने और खून चूसने की पूरी आजादी थी। मेरे साथ साथ नानी और मां भी जूंओं से परेशान थी। एक बार गर्मी की छुट्टियों में नानी माँ कहीं से कैंची मांग लाई और मेरे सारे बाल कतर डालें। कटे बालों से जुंए बाहर निकलकर ज़मीन पर रेंगने लगी। कितना घिनौना दृश्य था वो? मुझे तो ऊबकाई आ गई। माँ ने रेंगते जूंओं पर गर्म पानी डाल दिया और उन्हें बुहार कर आग के हवाले कर दिया। आग की उस तपिश को मैं आज तक नहीं भूल पाई हूँ।

जब पहली बार स्कूल में मेरा दाखिला हुआ वहां भी मुसीबतों ने मेरा पीछा नहीं छोड़ा। क्लास के बच्चे मेरी हँसी उड़ाते। मेरे नयन-नकश को लेकर छींटाकशी करते। कक्षा में घुसते-निकलते हर मौके पर मज़ाक उड़ाने से बाज नहीं आते। यहाँ तक की कक्षा के शिक्षक भी उनकी हँसी में शामिल हो जाते। मुझे बहुत बुरा लगता। कभी-कभी तो लगता स्कूल ही छोड़ दूं या फिर उसके सिर फोड़ दूं। पर मैं चुप रहती। कोई प्रतिक्रिया न देती। लेकिन खुद को कभी कमज़ोर नहीं पड़ने दिया। उनके सामने हमेशा मजबूती से डटी रहती। मैं हारना नहीं चाहती थी। उन सब की नज़रों में खुद को साबिर कर उन्हें मुँहतोड़ जवाब देना चाहती थी। इसलिए मैंने जी लगाकर पढ़ना शुरू किया। खूब मेहनत करती और कक्षा में हमेशा प्रथम आने की कोशिश करती। धीरे-धीरे मेरी मेहनत रंग लाने लगी। शिक्षकों के हर सवाल के ज़वाब हमेशा मेरे पास तैयार रहते। मेरी मेहनत रंग लाई शिक्षकों का ध्यान धीरे-धीरे मेरी ओर खींचने लगा। वे मेरी हर गतिविधि पर ध्यान देने लगे। मुझे उनकी शाबसी मिलने लगी।

मुझे आज भी अच्छी तरह याद है। जब मैं तीसरी कक्षा में थी मेरी शिक्षिका ने मेरी माँ से चहकते हुए कहा, ''मेडेलमा तुम्हारी यह बच्ची बहुत होशियार है और देखना क दिन बड़ी होकर कुछ न कुछ अच्छा करेगी।'' ये सुनकर माँ बस मुस्कुराकर रह गई। पर मैं सोच में पड़ गई कि आखिर 'कुछ' से उनका मतलब क्या था? वक्त बीतता गया। अब मैं चौथी कक्षा में आ गई थी। धीरे-धीरे स्कूल में मेरी कुछ सहेलियां भी बन गई थी। मैं खुश थी। पर ये 'काली' संबोधन अब भी मुझे सालता रहता। और आखिर एक दिन मैंने उनसे पूछा

ही लिया कि वे मुझे 'काली' कहकर क्यों चिढ़ाते हैं? मेरा सवाल सुनकर वे एक-दूसरे का मुँह देखने लगी। उनकी आपस में खुसर-फुसर होने लगी। तभी एक लड़की जिसका नाम चुबला था, ने मेरी ओर हैरानी से देखते हुए कहा, ''अरे! तुम्हें नहीं पता, तुम हमारे गाँव की नहीं हो और मेडेलमा तुम्हारी असली माँ नहीं है। क्या तुमने कभी सोचा नहीं कि तुम्हारा रंग ओर नयन-नक्श हम सबसे इतना अलग क्यों है। मेरी माँ को तो ये सब बहुत पहले से पता था। उन्होंने ही मुझे ये सब बताया है।''

चुबला के मुँह ये सब सुनकर ऐसा लगा मानों मैं किसी गहरी खाई में गिर गई। एक पल में सिर से आसमान और पैरों तले ज़मीनें खिसक गई। मैं वहां अब एक और पल रुकना नहीं चाहती थी। वहाँ से जो निकली सीधे घर पहुंचकर ही दम लिया और सीधे अपने बिस्तर पर गिर पड़ी। नानी ने मुझे देख लिया था। वो भागते हुए मेरे कमरे में आई। उन्हें देखते ही मैं फट पड़ी, ''नानी नानी बताओ, मेरी असली माँ कौन है? नानी बुत की तरह खड़ी रही और मैं उन्हें पागलों की तरह झकझोरते रही। कुछ बोले बिना वे सीधे कमरे से बाहर निकल गई। मैं भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ी।

मैंने देखा, वे चूल्हे के पास चुपचाप सिर झुकाये बैठी कुछ सोच रही थी। मुझसे उनकी ये चुप्पी सहन न हुई। हमेशा बोलने वाली नानी आज नितांत मौन व बेबस दिख रही थीं। पता नहीं क्यों? मुझे उन पर दया आ गई। मैं उनके पास ही चूल्हे के करीब खिसक आई। मुझे खुद पर बहुत गुस्सा आ रहा था। मैंने उनसे इतने कड़वे शब्द बोले हीं क्यों? अगर, आज ये औरत न होती तो मेरा अस्तित्व

नहीं होता। इसी औरत की बेटी ने मुझ नन्हीं सी जान को सड़क से उठाकर अपनी गोद में बिठाया, मुझे माँ का प्यार दिया। आज वे न होती, तो मैं भी न होती। मैं अचानक भावुक हो उठी। मैं नानी के और करीब खिसककर बैठ गई। उसकी देह से सटकर बैठना मुझे हमेशा से अच्छा लगता था। न जाने कौन सी ऐसी खुशबू थी उसके बदन की जो अक्सर मुझे उनके पास खींचती। ऐसी जैसे बारिश के बाद तपती धरती की सौंधी खुशबू नथुनों में भरकर सम्मोहन पैदा करती हो या कभी-कभी जलती लकड़ी से निकलनेवाले धुंए जैसी गंध। मैं बयाँ नहीं कर सकती उनके देह की गंध मुझे कितनी प्रिय थी अक्सर जब माँ घर पर नहीं होती और नानी को खेतों में काम करने जाना होता तो वो मुझे अपने पीठ पर बाँध लेती। तभी से मैं उनकी देह की इस गंध की आदी हूँ। जब मैं उनकी पीठ पर सिर रखकर सोती तो उनकी देह की गर्मी से मुझे एक अजब तरह का सुकून मिलता। यहां तक की रोते वक्त भी देह ही वो गंध माँ की दूध की तरह काम करती। तब कितना सुरक्षित महसूस किया करती थी मैं। जब भी इस गंध को महसूस करती, लगता नानी जरूर कहीं आस-पास ही है और वो मुझे हर मुसीबत से निकाल लेंगी। उस गंध ने मेरे मन में सुरक्षा का एक मज़बूत घेरा तैयार कर दिया था मेरे मन में।

नानी की देह से सट कर बैठी, मैं उनकी ममतामयी स्नेह की डोर को मजबूती से थाम लेना चाहती थी। उनसे अलग होने के डर ने मेरे अतीत को जानने की जिज्ञासा को काफूर कर दिया था। अब मैं कुछ भी नहीं जानना चाहती थी। और ना ही उनसे अलग होना चाहती थी। बस अपने इस काले रंग को

खुरच-खुरच कर नोंच देना चाहती थी और ठीक वैसी दिखना चाहती थी जैसी नानी और माँ दिखती थी। मैं उनकी प्रतिकृति को अपने भीतर उतार लेना चाहती थी। मुझे अपनी चमड़ी से घृणा हो गयी थी।

नानी अभी भी खामोश बैठी थी। मुझे अंदर ही अंदर ये डर खाये जा रहा था कि सच्चाई सामने आते ही मुझे मेरे लोगों के पास भेज दिया जायेगा और फिर मैं अपनी नानी, माँ और गाँव के दोस्तों से दोबारा कभी नहीं मिल पाऊंगी। इस डर से मैं घुली जा रही थी। मैंने तय कर लिया था कि अब मुझे इन्हीं जाने पहचाने चेहरों के बीच रहना है। इन्हीं की भाषा बोलनी और इन्हीं के संग रहना-खेलना है। अंधेरा हो चला था। माँ अब तक डिस्पेंशरी से वापस नहीं लौटी थी। मुझे तेज भूख लग रही थी। मैंने नानी की तरफ़ इस उम्मीद से देखा कि वो खाने को कुछ देगी? पर वो तो आंखें मूंदे कुछ बड़बड़ा रही थी। शायद किसी मंत्र का जाप। पहली बार ऐसा लगा जैसे उन्हें मेरे होने का एहसास ही न हुआ हो। मैंने उन्हें टोका नहीं। काफी देर बाद वो धीरे से उठी और फुसफुसाते हुए कहा, ''सुअरों और मुर्गीयों को चारा देने का वक्त हो गया है।'' मैं रूआँसी हो गई। मुझे लगा वो मुझे नज़रअंदाज कर रही है। मैंने मन ही मन एक कड़ा फैसला लिया। चाहे जो हो जाये मैं इन लोगों को छोड़कर कहीं नहीं जाऊंगी। अगर वो मुझे चाहें भी तो खुद से जुदा नहीं कर सकती। मैं माँ के घर लौटने का इंतजार करती रही। मुझे उनपर गुस्सा आ रहा था क्योंकि उन्होंने मुझसे इतनी बड़ी सच्चाई छुपाई थी। अगर वो सच में मुझ से प्रेम करती तो मेरी ज़िंदगी का इतना बड़ा सच कभी न छुपाती? क्या उनका प्यार, उनकी ममता सब झूठी थी? मेरा मन घृणा और क्रोध से उबल रहा था।

मेडलमा का अतीत

मैं हूँ मेडलमा। मारथा की माँ। मेरी कहानी मारथा के जन्म से काफ़ी पहले आधार ले चुकी थी तब जब मेरे मंगेतर इमसुतेनजीम ने मुझसे किया हुआ शादी का वादा ये कहकर तोड़ दिया था कि अचानक तोड़ दिया था। इंकार और धोखे का वो एहसास इतना गहरा और कड़वा था जिसे मैं आज तक नहीं भूल पाई हूं। उस वक्त ऐसा लगा मुझ पर मानों मुझपर बिजली गिरी हो। कुछ ऐसा जिसने मेरे अस्तित्व को हिलाकर रख दिया था। मैं हैरान थी ये सोचकर कि आखिर मुझ में ऐसी क्या कमी थी जिसके कारण उसके पिता ने शादी से इंकार कर दिया। अवसाद और निराशा ने मुझे चारो ओर से घेर लिया था। मैं पूरी तरह टूट गई थी। लेकिन भला हो मेरी नौकरी का जिसकी वजह से मैं इस अवसाद से उबर पाई। अस्पताल के रेजिडेंट नर्स की नौकरी और काम के बोझ ने मुझे इस गम से उबरने में मदद की। मैं दिन भर खुद को काम में व्यस्त रखती। ताकि उसकी जुदाई का गम मुझ पर हावी न हो। फिर भी पूरे एक साल लग गये मुझे इस गम से उबरने में। माँ बाबूजी मेरी शादी टूटने की घटना से बहुत आहत थे। बाबूजी मुझसे मिलने आये थे और माँ ने उनके हाथों ये संदेशा भिजवाया था कि, ''जो हुआ अच्छे के लिए हुआ वो लड़का तुम्हारे काबिल ही नहीं था।''

समय बीतता रहा। इस बीच कई अच्छे रिश्ते आये मेरे पास। पर मैंने शादी करने से साफ़ मना कर दिया। बीच में एकाध रिश्तों के लिए बाबूजी ने अपनी तरफ से हाँ भी कर दी थी पर मेरे विरोध करने पर उन्हें चुप रह जाना पड़ा। धीरे-धीरे उन्होंने भी हालात से समझौता कर लिया। उन्होंने इस बारे में बात करना ही छोड़ दिया। अब एक बार जिंदगी पुराने ढर्रे पर चल पड़ी।

इसी बीच मारथा मेरे जीवन में आशा की एक नई किरण बनकर आई। ऐसे लगा जैसे ईश्वर तक मेरी आवाज पहुँच गई हो और उसने मेरे दुख को हल्का करने के लिए एक परी के रूप में उसे मेरी गोद में डाल दिया हो।

बात तब की है जब मैं सरकारी अस्पताल के प्रसूतिका विभाग में स्टाफ नर्स हुआ करती थी और मेटरनिटी वार्ड में जँचगी का काम मेरे ज़िम्मे ही था। मुश्किल से मुश्किल केस को मैंने अपने अनुभवी हाथों से सुलझाया था। हमारा ये अस्पताल पास के कस्बे में ही था। आमतौर पर महिलाएँ जँचगी के लिए अस्पताल अंतिम समय में पहुँचती जब हालात नियंत्रण से बाहर हो जाता। उनकी पहली कोशिश तो यही होती कि गाँव की ही किसी डॉक्टर या दाई की मदद से जँचगी करा ली जाये पर जब हालात नाजुक हो जाते तो वे अस्पताल पहुंचती। एकाध मामले को छोड़कर हमारे यहाँ जँचगी के ज़्यादातर मामले सफल रहे थे। मारथा की माँ का मामला उनमें से एक था। जब उसे अस्पताल लाया गया था उस वक्त तक उसका काफ़ी खून बह चुका था। हालत नाजुक थी मौत के एकदम करीब। अगर ज़ल्दी से उसका प्रसव न कराया जाता तो उसकी जान भी जा सकती थी। सामान्य प्रसव की नाकामायाब कोशिश हमारे स्टाफ ने उसके पति से उसके ऑपरेशन की अनुमति मांगी। लेकिन वह किसी भी तरह नहीं माना। ऐसे में हमने सामान्य प्रसव के लिए ही प्रयास शुरू किया। ख़ुदा का शुक्र था कि प्रसव सामान्य रहा। लेकिन बच्चे के जन्म के थोड़ी देर बाद ही माँ की हालत खराब हो गई। उसकी सांस उखड़ने लगी और उसने तत्काल दम तोड़ दिया।

तब मैंने खुद को कभी इतना हारा हुआ कभी न महसूस नहीं किया था। मेरे किसी मरीज़ के साथ कभी ऐसा नहीं हुआ था। पर पता नहीं ये दुर्घटना कैसे

हो गई? मुझे लगा मैं ही इस सबकी जिम्मेदार हूं। बच्चे की सलामती के लिए मैंने जच्चे पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। लेकिन फिर ये सोचकर मन को समझाया कि इस औरत का मामला तो पहले से ही बिगड़ा हुआ था। वह नाजुक हालत में अस्पताल पहुंची थी।

बाहर खड़े उसके पति को जब महिला की मौत के बारे में बताया गया तो वह टूट गया और दहाड़े मारकर रोने लगा। लेकिन जैसे ही उसे ये खबर लगी कि उसका नवजात बच्चा लड़का नहीं लड़की है तो उसके हाव-भाव ही बदल गये। रोना बंद कर वह झटके से उठ खड़ा हुआ और अस्पताल के लोगों को लड़की की पैदाइश के लिए कोसने लगा। उससे पूछा गया कि अब वह लड़की का क्या करेगा तो उसने भड़कते हुए कहा, ''जो चाहे करो, मैं इस मनहूस को नहीं रखनेवाला। इसने मेरी बीबी को मार डाला।'' वह बच्ची को छोड़ चलता बना।

इस तरह मारथा हमारे अस्पताल के परिवार का हिस्सा बन गई। अस्पताल के बगीचे का वो फूल जिसे या तो गोद दे दिया जाता या फिर मिशनरी संस्था उसे ले जाते। जिस वक्त अस्पताल के एक वार्ड में बच्ची के पिता द्वारा उसे स्वीकारने और दुत्कारने का खेल चल रहा था ठीक उसी वक्त अस्पताल के ही एक नर्स के भीतर बच्ची के नामकरण की योजना साकार रूप ले रही थी। इस तरह नर्स की कल्पनाशीलता से जो नाम उभरा वो था, 'मारथा'। कुछ इस तरह मारथा अस्तित्व में आई।

ऐसी अभागिन बच्ची जिसके पैदा होते ही उसके बाप ही नहीं बल्कि अस्पताल के अन्य लोगों को भी उससे वितृष्णा और घृणा हो गई थी पर पता नहीं

क्यों मेरा मन बार-बार उसके प्रति मोह से भर उठता। मैं बरबस ही उसकी ओर खींचती चली गई। एक अनकहा मोह का बंधन जुड़ने लगा। उस दूधमूंही बच्ची से। अब मैं रोज अपना काम खत्म कर उस वार्ड में पहुंच जाती जहां मारथा को रखा गया था। वो इस कदर मुझसे घुल-मिल गई कि जब मैं अपनी ऊंगली छुड़ा घर वापस जाने लगती तो वो चीखें मारकर रोनें लगती। धीरे-धीरे वो मेरी गंध पहचानने लगी थी।

ऐसा लगने लगा जैसे मेरे भीतर विशाल होते उस दुख के पहाड़ को तोड़ने के लिए ही किसी अदृश्य शक्ति ने बिन माँ की उसे बच्ची को मेरी ममता की डोर से बांध दिया था। उसकी निश्छल मुस्कान और किलकारी ने मुझे इस कदर उसके वात्सल्य के बंधन में बांध दिया कि मेरा उससे एक क्षण भी दूर रहना मुश्किल हो गया। कभी-कभी सोचकर सिहर उठती की अगर कोई इसे गोद ले जायेगा तो मेरा क्या होगा? सोचकर ही मैं कांप जाती। कल्पनामात्र से ही मेरा अंग-प्रत्यंग सिहर उठता। इसी बीच मेरे मन में एक विचार ने जन्म लिया कि क्यों न मैं ही इसे गोद ले लूं? यह विचार आते ही मैं उछल पड़ी। इस कल्पना मात्र से ही कि वो मेरी पुत्री बनेगी, मैं भावविभोर हो उठी। बड़ा ही गुदगुदाने वाला पल था वो। मुझ जैसी बिन ब्याही लड़की के लिए किसी बच्चे को गोद लेना किसी कल्पना तो कल्पना से कम नहीं था। इसकी अनुमति ना मुझे अपने परिवार से मिलती और न अस्पताल से। चूंकि अस्पताल में मेरा इंटरर्नशिप चल रहा था और इसे पूरा करते ही मुझे देश में कहीं भी भेजा जा सकता था ऐसे में एक बच्ची की जिम्मेदारी लेना और उसे निभाना एक बड़ी समस्या थी। मैं विकट परिस्थिति में

फंस गई। पर हार नहीं मानी। मैंने ठान लिया था चाहे जो हो मैं उस बच्ची को गोद लेकर ही रहूंगी चाहे इसके लिए मुझे अपना इंटर्नशिप छोड़ना ही क्यों न पड़े?

मारथा को गाद लेने में सबसे बड़ी समस्या थी उसकी सांस्कृतिक और भौगोलिक भिन्नता। कहाँ मैं सिर्फ 26 साल की 'आओ' नागा जनजातीय समुदाय से ताल्लुक रखनेवाली, गोरी रंगत और दरमियाने कद की लड़की कहाँ मारथा जो शक्ल-सूरत और अपने काले घुंघराले बालों से बिल्कुल अफ्रीकी मूल की लगती थी। श्याम वर्ण और अजीबो-गरीब सूरत। मुझे पता था हमारी ये शारीरिक भिन्नता उसके बड़े होने पर बड़ी मुसीबत को न्यौता देने वाली थी। पर चाहे जो हो मैंने उसे गोद लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। अस्पताल प्रशासन के समक्ष मैंने अपनी इच्छा जाहिर की। मेरी इच्छा और कड़े निर्णय को देखते हुए उन्होंने प्राथमिक स्तर पर इसकी मंजूरी दे दी। अब कागज़ी प्रक्रिया शेष थी।

इंटर्न करते हुए बच्ची संभालना एक बड़ी समस्या थी। अपनी उलझन बताते हुए मैंने माँ को खत लिखा। खत में पूछा कि क्या वो तब तक मारथा का ख्याल रख सकती है जब तक अस्पताल के साथ मेरा करार खत्म न हो जाए। मारथा के बारे में मैंने उन्हें खत में ज्यादा कुछ नहीं लिखा था बस इतना कि प्रसव के दौरान कैसे उसकी माँ की अकाल मृत्यु हुई और फिर बाद में उसके पिता ने उसे ले जाने से किस तरह इंकार किया? साथ में ये भी लिख भेजा कि उसका परिवार चाय बीनने वाले एक जनजातीय समुदाय से आता है। उसकी शक्ल-सूरत और रंगत के बारे में मैंने खत में कोई चर्चा नहीं की।

लगभग महीने भर बाद माँ का जवाब आया। उन्होंने लिखा था, अगर मुझे ये सब करके खुशी मिल रही है तो वो भी खुश है। उन्हें कोई समस्या नहीं है।

पर हाँ वो बच्ची का ख्याल तब ही रखेगी, जबतक की मुझे नियमित तौर पर कोई नौकरी न मिल जाये। उनके इस सकारात्मक जबाव से मुझे सुकून मिला। माँ इतनी जल्दी मान जायेगी, इसकी कतई उम्मीद न थी मुझे। आनन फानन में मैं नर्सिंग सुपरिटेन्डेन्ट के पास अपना बात लेकर पहुंची। पहले तो उन्होंने बड़े इत्मीनान और धैर्य से मेरी पूरी बात सुनी फिर अंत में अपनी राय देते हुए कहा, ''मेडेलमा एक बार फिर सोच लो। इतना आसान नहीं ये सब। मैं तुम्हें पूरा वक्त दे रहा हूं। सोचकर दोबारा अगले हफ्ते बताना। तब तक मैं तुम्हारा इंतजार करूंगा।'' मैं हैरान थी और निराश भी। मन ही मन सोच रही थी कैसी दोहरी मानसिकता वाले लोग हैं ये? भूखे, नंगे और असहायों की मदद करने तथा उन्हें प्रेम व सम्मान देने की पाठ पढ़ाने वाले इन लोगों को आज क्या हो गया है? क्यों ये नफरत की भाषा बोल रहे हैं? क्या है ऐसा जो इन्हें कठोर बना रहा है? ताउम्र दूसरों को शिक्षित करने वाले आज खुद ही अशिक्षित नजर आ रहे थे।

लेकिन जो हो, बच्ची को गोद लेने की मेरी ख्वाहिश को कोई दबा नहीं सकता था। मैं हारूंगी नहीं। मन-ही-मन ठान लिया था मैंने। हर बीतते वक्त के साथ मेरा इरादा और मजबूत होता गया। अगले हफ़्ते मैं फिर उनसे मिलने गई। मैंने मजबूती से अपना पक्ष उनके सामने रखा। मेरी नौकरी कभी बच्ची के लालन-पालन के आड़े नहीं आयेगी ये उन्हें पूरी तरह स्पष्ट कर दिया। मैं अपने प्रयास में सफल रही। अधीक्षक ने कुछ विशेष शर्तों के साथ मुझे बच्ची को गोद लेने की अनुमति दे दी।

शर्त ये थी कि अगर मुझे बच्ची की गोद लेना है तो तत्काल ही अस्पताल में अपनी इंटर्नशीप छोड़कर जाना होगा और अस्पताल प्रशासन की ओर से मेरे

प्रशिक्षण संबंधी कोई प्रमाण पत्र या संदर्भ पत्र नहीं दिया जायेगा। मैं आवाक् रह गई। ये कैसी सजा थी? जीवन भर जिस सत्यनिष्ठा, ईमानदारी और मानवता का पाठ पढ़ाया गया था ये उसी की परिणति थे। नेक कार्य की इतनी बड़ी सज़ा। पर उन्हें कहाँ पता था कि उनके इस कदम से मैं अपने इरादों से डिगने वाली नहीं थी। उनका ये फैसला मेरे चट्टानी इरादों को हिला नहीं सकता था। मैंने साफ-साफ कह दिया कि अगर मुझे निकालना चाहते हैं तो बेशक निकाले पर जितने भी मैंने काम किया है उसका हिसाब कर दें।

इधर अस्पताल के स्टाफ से पता चला कि मेरे गाँव के कुछ लोग अपने रिश्तेदारों का इलाज कराने इसी अस्पताल में आये हुये हैं। और वे अब लौटनेवाले हैं। मेरे लिए ये अच्छा अवसर था। मारथा को गाँव ले जाना आसान हो जाता क्योंकि मेरा गाँव एक पहाड़ी पर बसा था जहां पहुंचने के लिए काफी ऊंची चढ़ाई करनी पड़ती थी। ऐसे में अकेले एक छोटी बच्ची को ले जाना दुष्कर कार्य था। गाँव वालों की मदद से मैं मारथा को आसानी से गाँव पहुँचा सकती थी। वे बारी-बारी से उसे अपनी पीठ पर उठा लेते और इस तरह सफ़र आसान हो जाता।

जब पहली बार घर पहुँची तो माँ की प्रतिक्रिया देखने लायक थी उन्होंने अजीब सा मुँह बना लिया। मारथा वैसे तो गहरे रंग रूप की थी पर उसकी मुस्कान एकदम निश्छल थी। उस पर नजर पड़ते ही माँ ने नाक-भौ सिकोरा लिया। मारथा की मुस्कान ने अगली सुबह जाने क्या जादू किया कि माँ की नफ़रत पर में बदल गयी। उन्होंने मारथा को चूम कर गोद में उठा लिया। पर नन्हीं सी जान कहाँ पहचानती थी नानी की गोद। वो गोद से बाहर उतरने के लिए कसमसाने लगी।

पहले थोड़ा रोई पर माँ के पुचकारने पर बिल्कुल चुप हो गई। फिर तो माँ और मारथा की ऐसी बनी कि माँ का एक मिनट के लिए भी मारथा से दूर हो पाना कठिन हो गया। वो सारा-सारा दिन उसे पीठ पर लिये घूमती। अब उनका ज़्यादा वक्त मारथा के साथ बितने लगा। धीरे-धीरे उन्होंने खेतों में काम करना भी बंद कर दिया और सारा ध्यान मारथा के लालन-पालन पर लगाने लगी। पिताजी कभी झिड़कते तो माँ साफ़ लब्जों में कहती, ''अगर खेतों में जाऊंगी तो मारथा का ख़्याल कौन रखेगा?'' पिताजी के पास इसका कोई जबाब नहीं होता। जब तक मारथा पांच साल की नहीं हो गई, माँ उसका ऐसे ही ख्याल रखती रही। अब वो स्कूल जाने लगी थी। पढ़ने में काफी होशियार थी, इम्तिहान में अच्छे नंबर लाती और शिक्षकों की शाबासी पाती। मेरा मन मारथा के भविष्य को लेकर तरह-तरह के सपने बुनने लगा। मैंने तय कर लिया था कि उसे डॉक्टर ही बनाना है।

समय बीतता गया। एक दिन अस्पताल से एक प्रसव मामला निपटाकर थकी-मांदी घर लौटी तो देखा मारथा और माँ एक दूसरे से मुँह फुलाये चुपचाप बैठी है। जैसे एक दूसरे से अन्जान हो। न तो शाम की दीया-बाती की थी उन्होंने और न ही रात का खाना तैयार किया था। मैं भी चुपचाप उनके पास बैठ गई। थोड़ी देर बाद माँ ने चुप्पी तोड़ते हुए कहा, ''मेडेलमा, अब तुम्हीं अपनी लाडली को समझाओ की तुम उसकी असली माँ हो या नहीं। इसने रो-रो कर अपना बुरा हाल कर रखा है।'' मैं ये सोचकर सन्न रह गई कि मारथा को इस सबका पता कैसे चला? गहरी सांस लेते हुए उसे मैंने उसे नजर भर देखा और जन्म से लेकर अब तक की सारी कहानी एक ही साँस में सुना डाला। अंत में उससे पूछा, ''क्या

तुम्हें अभी भी लगता है कि मैं तुम्हारी असली माँ नहीं हूं तो फिर ठीक है जैसा तुम ठीक समझो।'' मारथा अचानक पूछे गये इस गंभीर सवाल का जवाब नहीं दे पाई। उसकी आँखें भर आई। वो मौन थी। माँ ने मुझे झिड़कते हुए कहा, ''क्या तुम पागल हो गई हो? नन्हीं सी जान तुम्हारे इस बड़े सवाल का जवाब कहां दे पायेगी?'' सुनकर मारथा अचानक से खड़ी हुई और मेरे करीब आकर बोली, ''माँ! भले ही मैं तुमसे और गांव की सखी-सहेलियों से बिल्कुल अलग दिखती हूं पर मेरा दिल तो बिल्कुल तुम्हारे जैसा है। मेरी चमड़ी का रंग कभी मुझे तुमसे अलग नहीं कर पायेगा। तुम कल भी मेरी माँ थी और आज भी मेरी ही माँ हो।'' इससे आगे उससे एक शब्द भी नहीं बोला गया। वह सुबकने लगी। मैंने उसे गले से लगा लिया। दृश्य भाव-विह्वल करने वाला था। सबकी आँखों में आँसू थे। मैंने मारथा को चूमते हुए कहा, ''आज से मैं तुम्हारी असली माँ और तुम मेरी बेटी!'' माँ ने प्यार से सहलाते हुए हम सबको बाँहों में भर लिया। (हम तीनों कुछ देर के लिए मौन खड़ी रही)

लिपोकतुला का राज

मैं लिपोकतुला, और मारथा की नानी हूँ आप निश्चित रूप से सोच रहे होंगे कि मैंने मेडलेमा की माँ के रूप में खुद का परिचय क्यों नहीं दिया? तो सुनिये मारथा की नानी के रूप में परिचय देने में मुझे किसी तरह का अपराधबोध या भय नहीं जबकि मेडेलमा की माँ के रूप में खुद को प्रस्तुत करना परिचय देना मेरे लिए इतना आसान नहीं। मेरी अतीत का एक ऐसा स्याह पन्ना जिसने मेडेलमा के अस्तित्व को हिलाकर रख दिया था।

ज़िन्दगी का कौन-सा हिस्सा कहाँ से खोलूँ समझ नहीं आ रहा। हमारा छोटा सा परिवार था। मैं, मेरे पति और तीन बच्चे। दो भाइयों के बाद मेडेलमा सबसे छोटी थी। रोजी-रोटी का एकमात्र साधन खेतीबाड़ी और पशुपालन था। खेतों में इतना नहीं उपजता कि हम पांचों का पेट भर सके। कताई बुनाई और मेरे पति की दिहाड़ी से थोड़ी बहुत अतिरिक्त आय हो जाती जिससे हम किसी तरह दो जून का खाना जुटा पाते। कभी-कभी तो हाला इतने खराब हो जाते कि दोनों बेटों की स्कूल की फीस समय पर जमा नहीं हो पाती जिससे उन्हें शर्मिन्दगी झेलनी पड़ती। इससे उबकर दोनों ने स्कूल ही जाना छोड़ दिया और घर छोड़कर भाग गये। बाद में उनके लिखे पत्र से पता चला कि वे लोग असम राइफल में भर्ती हो गये थे। मेडलमा का मामला थोड़ा अलग था वो सबसे छोटी थी पर पढ़ने में खूब होशियार। उसकी स्कूल फीस भरने में भी कभी कोई दिक्क़त नहीं आई क्योंकि उसके भाई हर महीने कुछ न कुछ पैसे भेज देते थे जिससे मैट्रिक तक के बिना किसी बाधा के पढ़ती रही। आगे उसने नर्सिंग स्कूल में दाखिला लेने का मन बनाया। मेडेलमा बचपन से ही खुद्दार, शालीन और मृदुभाषी थी। अपने हमउम्र बच्चों से बिल्कुल अलग। शांत और गंभीर। मुझे पूरा यकीन था बड़ी होकर वो एक अच्छी माँ और एक बेहतर पत्नी साबित होगी। उसका भविष्य सुनहरा था। पर होनी को तो कुछ और ही मंजूर था। मुझे क्या पता था कि मेरा काला अतीत उसके सुनहरे भविष्य को धुँधला कर देगा।

ये सब तब शुरु हुआ जब मुझे मेडेलमा का वह पत्र मिला जिसमें उसने अपने प्रेम संबंधों का खुलासा किया था। लड़का हमारे ही गाँव का था जो उसी

शहर में इंजीनियरिंग की पढ़ाई कर रहा था जहां मेडलमा पढ़ रही थी। उसने लिखा था, ''उसे इमसुतजिन से प्यार था और दोनों शादी करना चाहते थे। इमसुतजिन, हमारे गांव के ग्राम परिषद् के सदस्य मिरिनशासी का बेटा है। और जल्द ही वे आपके घर आकर आपकी बेटी का हाँथ माँगने वाले हैं।''

ये सब पढ़कर मुझ पर तो जैसे बिजली गिरी। मेरा जहरीला अतीत एक बार फिर फन फैलाये सामने खड़ा था। संयोग से उस वक्त मैं घर पर अकेली थी इसलिए पत्र फाड़कर तुरंत आग के हवाले कर दिया। अगर ऐसा नहीं करती तो शायद वो खत दो परिवारों की खुशियों को डस लेता। खासकर मेडेलमा की खुशियों को। इस शादी को तुरंत रोकना बहुत ज़रूरी थी वरना सब कुछ तबाह हो जाता। लेकिन कैसे? क्या जुगत बिठाऊं जिससे शादी टूट जाये? और मेडेलमा को क्या कहूँगी? कैसे समझाऊंगी? फिर अपने पति को इस बारे में क्या बताऊंगी? बिना किसी ठोस वजह से शादी तोड़ना मुनासिब न था। ये सब सोच-सोच कर मेरा दिमाग फट रहा था। चारों तरफ़ नजर घूमाने के बाद सिर्फ एक ही इंसान दिखा जो इस रिश्ते को तोड़ सकता था और वो था लड़के का पिता मिरिनशासी।

सारी रात आंखों में कट गई। सोचती रही कैसे जाऊं मिनिरशासी के पास? कहाँ से शुरूआत करूँ? अंत में इस नतीजे पर पहुँची कि चाहे जो हो मैं उस आदमी का सामना करूंगी और उसके पास जाऊंगी। जिस राज को वर्षों तक सीने में दबाये रखा, अब वक्त आ गया था कि उससे पर्दा हटाऊं। बता दूं सारी दुनियाँ को कि वो मिरिनशासी हीं था जिसने वर्षों पहले मेरी अस्मत को लूटा था। मेरी इज्जत को तार-तार करने वाला वो मिरिनशासी ही था जिसके कुकृत्यों का परिणाम मेडेलमा थी। मेरी आँखों में खून उतर आया। मैं यादों के गलियारे में उतर गई।

बात तब की है जब मेरे पति सड़क निर्माण कार्य के सिलसिले में गांव से बाहर गये हुये थे और मैं खेत में काम पर थी। खेतों में कटाई का काम निपटाकर हाथ-मुंह धो दोपहर का खाना खाने बैठी ही थी कि तभी मिरिनशासी लड़खड़ाता मेरी झोपड़ी में आया।

उसके पैर बुरी तरह जख़्मी थे। चूंकि मेरे पति से उसकी अच्छी बनती थी और हम दोनों के खेत आस-पास ही थे इसलिए उसकी मदद करना मेरा फर्ज़ भी था और कर्त्तव्य भी। मैं झटपट उसके लिए पानी गर्म कर लायी और उसके घाव साफ़ करने लगी। पर उसके दिमाग में तो कुछ और ही चल रहा था। वो कामुकता भरी निगाहों नजरों से लगातार मेरी ओर देख रहा था। मुझे उसकी मंशा समझते देर न लगी। मैं फटाफट घाव साफ़ कर बाहर जाने लगी कि तभी उसने मेरा हाथ पकड़ मुझे ज़मीनें पर पटक दिया। मैंने खुद को उसकी मजबूत पकड़ से छुड़ाने की बहुत कोशिश की पर सब बेकार। मैं तो जैसे किसी शेर के जबड़े में कैद थी। मेरी एक न चली और वो अपने बुरे इरादों में कामयाब हो गया था। पकड़ ढीली पड़ते ही मैं अपने कपड़े समेट बाहर की तरफ़ भागी लेकिन वासना से संतप्त उसकी बाजुओं के मज़बूत घेरे ने एक बार फिर मुझे दबोच लिया। उसने दोबारा मेरा बलात्कार किया और मैं बिना बुत की मानिंद बिना किसी प्रतिरोध और प्रतिक्रिया के सब देखती रही। एकदम बेबस और लाचार।

अपना काम पूरा कर वो झोपड़े से बाहर जा चुका था। मैंने पूरे साहस से कपड़े समेटे और तेजी से बाहर निकल भागी और बेतहाशा तब तक भागती रही जब तक पास की नदी में न पहुँच गई? मन बहुत व्यथित था ऐसा लग रहा था

जैसे जिन-जिन अंगों को उसने छुआ है उसे काट कर फेंक दूं, अपनी चमड़ी का एक-एक अंश नोच डालूं। नदी के बीचो-बीच घंटों, पानी में कुंडली मारे बैठी रही। उस गंदगी की एक-एक बूँद को आज धोकर यहीं साफ़ कर देना चाहती थी मैं।

पानी में बैठे-बैठे मन खुद को इस बात के लिए भी कोस रही थी कि क्यों नहीं उसका विरोध कर पाई? क्यों नहीं पूरी ताकत से उसका प्रतिकार कर पाई। क्यों नहीं उसका चेहरा नोच डाला? क्यों चुपचाप सब सहती रही? घंटों इसी उहापोह और शर्मिंदगी के एहसास ने मुझे पानी में बिठाये रखा। मैं तब तक पानी के भीतर बैठी रही जब तक शरीर सुन्न होकर अकड़ने न लगा। ठंड के एहसास ने मुझे बाहर निकलने को मज़बूर कर दिया। मेरे पांव घर की तरफ मुड़ गये। एक-एक कदम इतना भारी था कि उठ जाना मुश्किल था। सबकुछ लुट लिये जाने की पीड़ा ने मुझे जड़ कर दिया था। मैंने खुद को घर के एक कोने में कैद कर लिया था। महीनों घर से बाहर निकली। इस बीच मेरा गर्भ ठहर गया। मेरी आत्मा पर पड़ा बोझ और बढ़ गया। इतना की मेरा सांस लेना भी दूभर हो गया। ये गर्भ ठहरने के दूसरे महीने बाद मैं माँ के घर गई। माँ से जब आपबीती सुनाई तो वो सुनकर दंग रह गई।

उन्होंने मुझे फटकराते हुए कहा कि मैं तब वहाँ से क्यों नहीं भागी, जब ये सब मेरे साथ हो रहा था? वो मेरे गले लगकर रो पड़ी। उन्हें मेरी पीड़ा का एहसास था। बहुत देर तक रो लेने के बाद माँ ने समझाया, ''देखो बेटी जो हो गया जो हो गया। अब इस राज को राज ही रखने में ही भलाई है। हम औरतों के

लिए यही ठीक है कि वो अपनी बात खुद तक रखे आदमियों को न बताएँ। कभी-कभी जिंदगी में सच या झूठ दोनों में से किसी एक को ही चुनना होता है। एक सच जो पूरी जिन्दगी तबाह कर सकता है और एक झूठ जो तमाम ज़िन्दगी आबाद कर सकता है। तुम्हें इस राज को अपने सीने में दफ़न करना होगा। अब तुम्हें फ़ैसला करना है कि तुम्हें क्या चुनना है सच या झूठ। माँ की बात मान मैंने इस राज को हमेशा-हमेशा के लिए अपने सीने में दफ़लन कर लिया। और इस तरह मेडेलमा का जन्म हुआ। मेडेलमा के जन्म की इस सच्चाई के बारे में किसी को कानों-कान खबर न लगी और एक राज, राज बनकर हमारे सीने में पलता रहा। मेडेलमा अब बड़ी होने लगी। बचपन में तो कुछ खास नहीं दिखती थी पर दस साल की होने पर उसका रूप-रंग निखर आया। एक दिन माँ ने यूँ ही बातों-बातों में कहा, ''भगवान का लाख-लाख शुक्र है कि यह अपने दोनों भाइयों जैसी ही दिखती है। शक्ल-सूरत और कद-काठी हर लिहाज़ से ये इस परिवार की सदस्य लगती है। अगर ऐसा न होता तो वाकई मुसीबत हो जाती। मैं कैसे लोगों को मुँह चुप करती?'' ये तो रही मेडेलमा के जन्म और उसके यौवन की कहानी।

अब वर्तमान में लौटती हूँ। अभी सबसे बड़ा सवाल ये था कि रक्त-संबंध से जुड़े इस रिश्ते को तोड़ा कैसे जाए? मुझे किसी भी कीमत पर इस शादी को रोकना था। चाहे इसके लिए मुझे अपनी बेटी को खुशियों की बलि भी देनी पड़ती तो मैं देती। मैं मज़बूर थी। मेरे पास उसका दिल तोड़ने के सिवा कोई और चारा न था। मुझे पता था, मैं अपनी बच्ची के साथ क्रूरता से पेश आ रही थी लेकिन ये क्रूरता जरूरी थी। शायद यही एक रास्ता था जिससे इस पाप को रोका जा सकता

था। अपने खून के रिश्ते के साथ बेटी का ब्याह करने से बेहतर था उसका दिल तोड़ना। एक बार ऐसा लगा कि तो दुनियाँ की परवाह न करूँ और अपनी बेटी की शादी उसी लड़के से कर दूँ और किसी को भी इसकी भनक न लगने दूं। लेकिन फिर ये विचार त्याग दिया कि ये पाप है, अपराध है। ऐसा करके न मैं न केवल अपनी बेटी के साथ बल्कि समाज के साथ भी दगा करूंगी। पुराने समय में ऐसी शादियों के लिए तो बकायदा मौत की सज़ा दी जाती थी। मैं ऐसा महापाप नहीं कर सकती थी। मैं अपनी बेटी को एक ऐसे रिश्ते में नहीं डालना चाहती थी जो झूठ की डोर से बंधा था। मुझे खुद को और उसे भी इस पाप से बचाना था। मेरे भीतर मन-ही-मन एक योजना आकार लेने लगी। सोचा क्यों न लड़के के पिता के उपर ही शादी तोड़ने का दबाव बनाऊँ। ये सबसे अच्छा तरीका था जिससे बेटी की शादी तो टूट ही जाती और मेरे उपर कोई आँच भी नहीं आती। मैंने मिरिनशासी से अकेले में मिलने की योजना बनाई। एक दिन मौका देखकर मैं चर्च जा पहुँची जहाँ हर इतवार मिरिन प्रार्थना करने अकेले जाता था। योजनानुसार मैं चुपचाप उसके पीछे-पीछे चलने लगी। मानों दो अज़नबी अपने-अपने वास्ते प्रार्थना के लिए जा रहे हों। एक ऐसी जगह जहाँ आस-पास कोई भी नहीं था, मौका देखते ही मैंने मिरिन को रोका और एक ही साँस में उसे सब कुछ बता दिया। ये भी की उसका बेटा मेरी बेटी मेडेलमा से शादी करना चाहता था जिसे तुरंत रोकना होगा। अगर उसने ऐसा नहीं किया तो वो सारे गाँववालों को बता देगी कि उस दोपहर उसने उसके साथ क्या किया था? और ये भी कि मेडेलमा उसके पाप की निशानी है। मेरी बात सुनकर वो सन्न रह गया। पहले तो वो बिल्कुल मानने को

तैयार नहीं हुआ कि मेडेलमा उसकी बेटी है पर जब मैंने उसे बताया कि उसकी गर्दन के नीचे जन्म से ही ठीक वैसा ही निशान है जैसा उसकी गर्दन के नीचे और उस बलात्कार की घटना के बाद ही उसने गर्भ धारण किया था। अंत में उसे मानना पड़ा कि मेडेलमा उसी की नाजायज़ औलाद है। इतना सब कुछ कहने के बाद मैं वहां से तेजी से निकल गई। ठीक से कुछ याद नहीं पर मेरे मिलने के तुरंत बाद इमसुतजिन ने शादी तोड़ने की बात कहते हुए मेडेलमा को एक खत लिखा था। बस अतीत के यही कुछ चंद पन्ने है जिन्हें मैंने अब तक छुपा रखा था।

मारथा

मेरा नाम मारथा है। मैं एक छोटे से गाँव में अपनी नानी और माँ के साथ रहती थी। माँ का सपना था कि मैं बड़ी होकर डॉक्टर बनूं। लेकिन मुझे बिल्कुल भी डॉक्टर नहीं बनना था। इसका सीधा ताल्लुक मेरी ज़िंदगी से था। ज़ाहिर है ऊंची शिक्षा के लिए मुझे अपने गाँव से सालों दूर रहना पड़ता और मैं अपने गाँव से ज्यादा दिन दूर नहीं रह सकती थी। मुझे अपने दोस्तों से बहुत प्यार था। उनका व्यवहार भी मेरे प्रति बदल गया था। अब कोई भी मुझे 'काली' कहकर नहीं चिढ़ाता। अब सब कुछ अच्छा हो गया था।

मैं किसी के प्रेम में हूँ। वो मेरी ही कक्षा का साथी है। उसका नाम अपोक है, हमने आठवीं के बाद शादी करने का फैसला लिया है। पहले हम चुपके-चुपके नानी के फल वाले बाड़े में मिला करते। घंटों दुनियां-जहान की बातें करते। दूसरों की नज़रों से छुप-छुप के मिलने का भी अपना एक अलग मज़ा था। धीरे-धीरे

हमारा मिलना प्यार में बदल गया। अपोक बड़ा ही प्यारा था। उसकी मीठी छुअन का एहसास मुझे रोमांचित कर देता। जब वो मुझे प्यार से सहलाता उसके बदन की खुशबू मेरे अंग-अंग में गहरे उतर जाती और मैं मदहोश हो जाती। पहली बार उसका प्रयास असफल रहा। मैं थोड़ा चीखी, दर्द भी हुआ पर बाद में सब अच्छा लगने लगा। अब हम रोज़ एक दूसरे की बाँहों में होते। इससे पहले की मैं, माँ को इस रिश्ते के बारे में बताती। कुछ ऐसा घटा जो अक्सर नासमझी में घट जाता है। मैं माँ बनने वाली थी। माँ को जब इसका पता चला वो बहुत गुस्सा हुई। उन्होंने जलती आँखों से घूरते हुए मुझे कहा, ''मारथा तूने ये क्या किया? तुम रूक नहीं सकती थी। क्या-क्या ख़्वाब नहीं देखे थे मैंने तुम्हारे लिए? सोचा था तुम्हारी शादी धूम-धाम से करूँगी। तुमने मेरे सारे सपनों पर ही पानी फेर दिया। तुमने परिवार की सारी इज्ज़त मिट्टी में मिला दी। अब बस कुछ रिश्तेदारों को बुलाकर जैसे-तैसे तुम्हारी शादी निपटानी होगी ताकि लोगों को कानों-कान खबर न हो?'' माँ मुझे लगातार डाँट रही थी और मैं चुपचाप सिर झुकाये बस उनकी बातें सुनती रही थी।

मैं माँ की तरफ़ हैरानी से देख रही थी। मुझे उनपर दया आ रही थी। एक ऐसी औरत जिसने कभी पुरुष छुअन को महसूस नहीं किया वो स्त्री शरीर की भाषा क्या समझ पायेगी? पुरुष की उस छुअन से स्त्री देह की कैसी प्रतिक्रिया होती है इसका एहसास कभी हुआ ही नहीं उन्हें। प्रेम एक शक्ति है और वही शक्ति प्रेमी जोड़ों को प्रेमालाप के लिए बाध्य करती है। प्रेम में भावनाओं का लेन-देन समान रूप से चलता है और इस लेन-देन की ताकत का एहसास किये

बगैर प्रेम की गहराई को समझना मुश्किल है। जिसने उस प्रेम रस को एक बार चख लिया। उसने संसार को जी लिया।

मेडेलमा

मेडेलमा के तौर पर मेरी कहानी का हिस्सा आप सबके सामने है। मारथा ने जो किया उससे न केवल हैरान हूँ बल्कि गहरे सदमें में भी हूँ। पर इस बात का सुकून है कि ये सब देखने-सुनने के लिए मेरे पिता मौजूद नहीं थे वरना न जाने उन पर क्या बीतती? वो तो शर्म और लज्जा से शायद खुद को खत्म हीं कर डालते। मारथा जब चौथी कक्षा में पढ़ रही थी तब उनकी असमय मृत्यु हो गई। कभी-कभी सोचती हूँ मेरे पीठ पीछे एक युवा प्रेम पलता और उनका प्यार जवाँ होता रहा और मैं इन सब से अन्जान बनी रही। कभी न जुदा होने वाला उनका प्रेम अटूट था जो एक ऐसे मजबूत धागे से बँधा था जिसके दोनों सिरों को प्रेम की अथाह गहराइयों ने थामा हुआ था। मैं अक्सर सोचती आखिर कौन सा ऐसा आकर्षण है, कौन सी ऐसी चुंबकीय ताकत है जिससे एक स्त्री पुरुष अपने प्रेम में बाँधता है और स्त्री निःस्वार्थ भाव से समर्पण की डोर से बँधती जाती है। आज इन दोनों का प्रेम देख पीछे मुड़कर जब अपनी जिंदगी में झाँकती हूँ तो पाती हूँ कि मैंने इमशु के लिए वहीं तड़प, वहीं प्रेम और वही आकर्षण क्यों नहीं महसूस किया जो आज मारथा लिपोकतुला के लिए महसूस कर रही है? आज भी वो दर्द और पीड़ा का एहसास मुझे सालता है जिस क्षण इमशु ने मुझसे शादी करने से मना किया था। वो असहनीय पीड़ा वो कसक सिर्फ मेरी अकेले की पीड़ा नहीं थी बल्कि एक समूची औरत जाति की ज़िंदगी की अंतस की पीड़ा थी। विछोह के

उन पलों के बाद मैंने यह तय कर लिया था कि अब कभी किसी पुरुष से ताल्लुकात नहीं रखूंगी। अक्सर मैं खुद से पूछ बैठती कि क्या मैं असामान्य हूँ। दूसरी औरतों की तरह नहीं। क्या वजह थी कि मैं आज तक इमशु को खुद से बाँध नहीं पाई? क्या उसे वो सब नहीं दे पाई जो एक आम औरत अपने प्रेमी को दे पाती है।

लिपोक्तुला

मेडेलमा मेरे पास मारथा के गर्भवती होने की खबर लेकर आयी थी। उसने इस बारे में मेरी राय जाननी चाही थी। मारथा की ऐसी हालत में मैंने जल्दी से जल्दी उसकी शादी करा देने की सलाह दी। शादी की तैयारियां जोर-शोर से होने लगी। कुछ चुनिंदा रिश्तेदारों को बुलाकर बस रस्म अदायगी की औपचारिकता करनी थी। शादी में कहीं कोई भव्यता नहीं थी। सब कुछ साधारण तरीके से हो रहा था। समारोह के दौरान मेडलेमा ने एक अजीब सा प्रश्न किया, ''माँ! समझ नहीं आता। इन नादान, नासमझ बच्चों ने शादी से पहले ये सब क्यों कर डाला? क्या वे थोड़ा रूक नहीं सकते थे? ऐसी कौन सी बात थी उस लड़के में कि मारथा कुछ दिन और इंतजार नहीं कर पायी।''

मुझे भी कई बार इमशु के साथ अकेले रहने का मौका मिला था पर कभी मेरे भीतर ऐसी भावना नहीं आई। मैंने कभी प्रेम का वो ज्वार महसूस नहीं किया। एक माँ के तौर पर मैं कैसे उसे ये बताती कि एक ही रक्त संबंध में प्रेम होने पर वह आकर्षण और खिंचाव कभी नहीं आ पाता जो दूसरे लोगों के प्रेम में आता है। यह जुड़ाव दो विपरीत रक्त संबंध वालों पर ही काम करता है। एक स्त्री होने के

नाते मैं खुद के अनुभवों को जब याद करती हूँ तो पाती हूँ कि कैसे किसी पुरुष देह की गंध एक स्त्री को अपने मोहपाश में बाँधती है। कैसे न चाहते हुए भी मैं उसका विरोध नहीं कर पाई थी। वो मुझे लूटता रहा और मैं लूटती रही। ये पुरुष आकर्षण नहीं तो और क्या था? बेचारी मेडेलमा! जिसे किसी और मर्द के साथ रहने और उसे छूने का मौका ही न मिला। फिर वो कैसे उन पलों के प्रबल आवेग को महसूस कर पाती।

मैंने बहुत पहले ये बता दिया था कि मिरिन साशी ने बहुत पहले मेरे साथ ज़बरदस्ती की थी। आज भी जब उन पलों को याद करती हूं तो लगता है जैसे मदहोश कर देने वाले उन पलों में मैंने खुद उसका साथ दिया था। उन पलों में मेरी मूक सहमति ही थी जिसकी वजह से वो जीत गया और मैं हार गई। जैसे मेरी माँ ने मुझसे सवाल किया था, ठीक वैसे ही मेरा मन अक्सर ये खुद से ये पूछ बैठता कि क्यों नहीं मैंने उस वक्त उसका कड़ा विरोध किया था? क्यों नहीं वक्त रहते उसके गलत इरादों को भाँपकर मैं वहां से भाग गई थी? एक व्यक्ति के पागलपन की हद तक पहुँच चुकी कुत्सित उत्तेजना को मेरे कमज़ोर प्रतिरोध ने मेरे मूक समर्पण में बदल दिया था। इन सवालों के उत्तर आज भी नहीं ढूँढ पाई हूँ।

भरत वाक्य

थोड़ा और जोर से! थोड़ा और, थोड़ा और! इस उत्तेजना ने भले ही प्रसूतीगृह में उसे प्रेरित किया हो पर बात फिर भी नहीं बनी। लगातार दर्द और असहनीय पीड़ा से जूझती उसकी चीखें दहला देने वाली थी। मारथा की चीख

सुनकर अपोक भागा हुआ अन्दर आया था, पर मेडेलमा ने सख़्ती से उसे ये कहते हुए बाहर ही रोक दिया कि अगर उसमें मारथा की चीखें बर्दास्त करने की क्षमता है तो भीतर आये वरना बाहर का रास्ता नापें। मारथा की पीड़ा लगातार बढ़ती जा रही थी। पिछले 12 घंटों से वो लगतार इस दर्द को झेल रही थी। मेडेलमा जैसी अनुभवी नर्स को भी एकबारगी ऐसा लगने लगा कि मारथा की जान खतरे में है। थोड़ा दर्द कम होते ही मारथा ने पीने को पानी मांगा। जैसे ही उसने पानी का एक घूंट भरा, दर्द की ऐसी तेज़ लहर उठी कि वो पस्त हो गई। उसका शरीर चारपाई पर धनुष की भाँति मुड़ गया और मुँह से अज़ीबोगरीब गड़गड़ाहट की आवाज आने लगी। उसकी अंतिम और दर्द से भरी चीत्कार ने बच्चे के इस दुनियां में प्रवेश का रास्ता खोल दिया। वहां खड़ी औरतों में से एक ने खुशी से उछलते हुए कहा, ''मैंने देख लिया, मैंने देख लिया।'' बस बेटा। अबकी बार थोड़ा और जोर लगाओ, सब ठीक हो जायेगा।'' मारथा ने अंतिम कोशिश की और सचमुच इस बार बच्चा बाहर आ गया था।

चिपचिपे द्रव्य और खून से लथपथ शिशु को देखते ही मारथा की ममता हिलोरें लेने लगी। उसने सुकून और राहत की गहरी सांस ली। माँ बनने की खुशी ने प्रसव पीड़ा के इस एहसास को कहीं पीछे धकेल दिया था। आज मारथा इस दर्द में, उस पीड़ा से भी ज्यादा कामुकता का अनुभव कर रही थी। जब पहली बार लिअपोक ने उसे छुआ था उसके चेहरे पर असीम तृप्ति का भाव था। मातृत्व का ये आनंद सहवास के उन क्षणिक पलों से कहीं ज्यादा विस्मयकारी व तृप्त करने वाला था।

अभी-अभी माँ बनी मारथा बिस्तर पर पस्त पड़ी थी। जबकि दूसरी औरतें नवजात के जन्म संबंधी अन्य धार्मिक रीति-रिवाजों को निभाने में व्यस्त थी। बच्चे को अब मारथा के बगल में लिटा दिया गया था। वो अपलक बच्चे को निहार रही थी। मानो वर्षों की उसकी दबी चाहत ने आज साकार रूप लिया हो। मातृत्त्व के ये पल अह्लादित करने वाले थे। उधर मारथा की नानी का भी कुछ ऐसा ही हाल था। अब वो परनानी बन गयी थी। मारथा के बच्चे के रूप में घर में एक नये मेहमान का आगमन हो चुका था। नानी लिपोकतुला ने बच्चे को उठाकर मेडेलमा की गोद में डाल दिया। मेडेलमा जो आज तक मातृत्व सुख से वंचित रही, उसे भी इस सुख का एहसास हो इसलिए उन्होंने पुचकारते हुए कहा, ''मेडेलमा लो आज तुम भी माँ बन गई। आखिर तुम कैसे इससे वंचित रहती? मारथा ने हम तीनों को एक बार फिर से माँ बना दिया है। तीन औरतें! और तीनों ही ममता की साक्षात् प्रतिमूर्त्ति! कैसा अद्भूत दृश्य था?

अपोक जो अब पिता बन चुका था, अब तक दरवाजे के बाहर खड़ा, अंदर हो रही गहमागहमी को बेसब्री से महसूस कर रहा था। अभी-अभी जन्में अपने बच्चे की एक झलक पाने को वो आगे बढ़ा पर इन औरतों के मज़बूत घेरे को चीरकर आगे न बढ़ सका। तीन अलग-अलग माएँ अपनी-अपनी नजरों से कुदरत के इस करिश्में को मंत्रमुग्ध हो देख रही थी। अपोक उनकी इस तन्मयता को भंग नहीं करना चाहता था। तीन अलग धाराओं के इस पवित्र संगम में वो स्वयं को विचछन्न महसूस कर रहा था। उसे लगा मौन रहकर अपनी धार बदल लेनी चाहिए। वो दबे पाँव बाहर निकल गया।

❐❐❐

2.6 एक सवाल छोटा सा

सुबह आँख खुलते ही इम्डोंगला कुछ बेचैन-सी जान पड़ी। कल रात उसने एक बुरा सपना देखा था। शायद ये उसी का असर था। पर सपने में उसने देखा क्या? उसे कुछ ठीक से याद नहीं। चूल्हा-चौका समेटते-समेटते अपने दिमाग पर जोर भी डाला कि शायद कुछ याद आ जाए पर सब बेकार। दिमाग का बंद दरवाजा खुलने का नाम ही न लेता था। मानो सात तालें जड़े हो।

आखिर उससे रहा न गया। अपने पति को आवाज लगाती बोली, ''सुनते हो! कल रात मैंने एक बड़ा बुरा सपना देखा। लगता है आज जरूर कुछ अनिष्ट होने वाला है। मेरी मानों तो कैंची-सी चलने वाली अपनी ये तीखी जुबान आज के लिए बंद हीं रखना और हाँ भूलकर भी आज घर से बाहर मत निकलना। समझे!''

उसका पति टेकबा भन्ना कर बोला, ''तुम! और तुम्हारे सपनें। पता नहीं कब मेरा पीछा छोड़ेंगे? इमडोंगला ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया और एक बार फिर जोर देते हुए बोली ''देखो! ज़रा सावधान रहना।'' आज का दिन तुम्हारे लिए बिल्कुल भी ठीक नहीं। इम्डोंगला भले ही कम पढ़ी-लिखी थी पर दुनियाँ जहाँ की तमाम खबरें उसके पास होती। बमुश्किल बाइबल के कुछ हाइम जुगत बिठाकर पढ़ पाती पर चौपाल से लेकर राजनीति तक की पक्की ख़बर अगर किसी के पास होती तो वो इमडोंगला थी। दरअसल वो राजनीतिक पृष्ठभूमि वाले परिवार से थी। उसके पिता गाँवबुड़ाह रह चुके थे और पति टेकबा भी इसी पद पर थे। घर के ऐसे महौल ने उसे राजनीतिक दाँव-पेंच में पारंगत कर दिया था। एक तो वातावरण उपर से स्वतः स्फूर्त जिज्ञासा से उसके भीतर राजनीति की बुनियादी

समझ स्वतः ही विकसित हो गई थी। वैसे भी वो चतुर और बुद्धिमान तो थी ही। उसकी इसी चतुराई ने टेकबा को प्रांतीय सियासत में लंबी रेस का घोड़ा बनाया हुआ था।

टेकबा और इमडोंगला के चार बच्चों का भरा-पूरा परिवार था। अगर गाँवबुराह की बात करें तो वह गाँव के कबीले से ही चुना गया प्रमुख होता है जिसे सरकार स्थानीय कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए सरकार अपने एजेंट के तौर पर नियुक्त करती है। इनका एक विशेष परिधान होता है। लाल और काली जैकेट जिस पर धारीदार लाल रंग का कम्बल उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा का सूचक है। वे ग्राम परिषद् के सदस्यों के साथ मिलकर पारंपरिक तौर-तरीके से ही काम करते हैं। इसका गठन दल प्रतिनिधित्व के सिद्धांतों के आधार पर किया जाता है। परम्परा की शुरुआत ब्रिटिश ज़माने में ही की गई थी पर ये सिलसिला आज भी लगातार ज़ारी है। ये बात और है कि युद्धबंदी के दौरान इन गाँवबुराहों को विशेष सुविधा प्राप्त थी। पर इंडियन स्टेट और नागाओं के बीच छिड़ी लड़ाई ने इन्हें असुरक्षित कर हासिये पर धकेल दिया। गांव में यदि कोई युवक गुमराह होकर किसी विद्रोही गुट में शामिल होता तो सरकार इन गाँवबुराओं के सिर इसका ठीकरा फोड़ती। दूसरी ओर भूमिगत विद्रोही गुट उन पर कि वे लगातार इस बात का दबाव बनाते रहते। कबीले के नवयुवकों को उनके समूह में शामिल करने के लिए उन्हें प्रेरित करें। गाँववाले के समक्ष आगे कुआँ पीछे खाई वाली स्थिति थी।

गाँव के युवकों को उनके गुट में शामिल करने की विद्रोहियों की माँग अब और ज्यादा तेज़ होने लगी थी। मांगें बढ़ते-बढ़ते पशु, चारे और धन की उगाही तक पहुँच गई थी।

चूंकि गाँवबुराह सरकारी नुमाइंदे के तौर पर काम कर रहे थे इसलिए उनसे अपेक्षा की जाती थी कि वे विद्रोही गुटों की गुप्त गतिविधियों की सूचना हाथ लगते ही फ़ौरन उसे सरकार तक पहुँचाएं। पर मसला यहीं तक सीमित नहीं था। उधर विद्रोही गुट भी उन पर लगातार नज़र बनाये रखते। वे सरकार तक कौन-सी और कैसी खबरें पहुंचा रहे हैं? इस पर उनकी पैनी निगाह रहती। स्पष्ट था कि गाँवबुड़ाह सिर्फ सरकारी दबाव ही नहीं झेल रहे थे बल्कि दोतरफ़ा दबाव के शिकार थे। वे चक्की के दो पातों के बीच बुरी तरह फँसे थे। विद्रोहियों के भय व आतंक से वे बुरी तरह डरे रहते। अनेकों ऐसी घटनायें हो चुकी थी जिसमें सरकार के साथ खड़े होने की क़ीमत उन्हें अपनी जान देकर चुकानी पड़ी थी।

दरअसल ये विद्रोही, नागा आजादी के नाम पर गाँव के भोले-भाले लोगों को धमका कर उनसे चंदा वसूलते थे। शुरू-शुरू में तो सब सामान्य रहा। गांव के प्रत्येक घर से एक-एक रुपया चंदे के रूप में इकट्ठा कर इन तथाकथित विद्रोही नेताओं की झोली में डाल दिया जाता। भोले-भाले गांव वालों को ये बताया जाता कि नागा आंदोलन को मुखरित करने व देश-दुनियाँ से इस आंदोलन में सहयोग प्राप्त करने के लिए दूसरे देशों की यात्राएं बेहद जरूरी है इसलिए इन यात्राओं में आने वाले खर्च को पूरा करने के लिए उनसे चंदा लिया जाना जरूरी है।

ये बात और थी कि इमडोंगला को ये विद्रोही फूटी आँख नहीं सुहाते थे। वो अपनी गाढ़ी कमाई की एक फूटी कौड़ी भी उन विद्रोहियों को नहीं देना चाहती थी। पर हर बार उसे टेकबा की खातिर मन ममोसकर रहना पड़ता। उधर जैसे-जैसे विद्रोहियों की माँग बढ़ती रही थी गाँव वालों का विरोध और भी तेज होता जा रहा

था। गाँववालों को इसका खामियाजा भी भुगतना पड़ता। आवाज़ उठाने वालों का मुँह गोलियों से बंद कर दिया जाता या फिर शारीरिक रूप से अक्षम बनाकर उन्हें ज़िंदगी की लड़ाई अकेले लड़ने के लिए छोड़ दिया जाता। छोटे से लेकर बड़े तक सब उनके जुल्म के शिकार थे। कई बार खुद टेकबा इन विद्रोहियों के हाथों पीटने से बाल-बाल बचा था। भला हो इमडोंगला का कि समय रहते उसने अपनी चतुराई का इस्तेमाल कर टेकबा को इस मुसीबत से बाहर निकाल लिया था।

घटना कुछ यूँ थी, कुछ दिनों पहले कुछ विद्रोही टेकबा के घर के सामने किसी निरीह, गरीब गाँववाले को बुरी तरह पीट रहे थे। मामला उनकी नाफ़रमानी का था। विद्रोहियों के फरमान से उलट उस व्यक्ति ने उम्मीद से कम चावल उन्हें चंदे में पेश किया था फिर क्या था, विद्रोहियों का पारा सांतवे आसमान पर पहुंच गया। होने लगी बेचारे की सरेआम धुनाई। बेचारे को अपने पक्ष में बोलने का मौका भी नहीं दिया गया। पास खड़ी इमडोंगला सारा तमाशा देख रही थी। अचानक तभी विद्रोही गुट के सदस्य मानते-मारते रुक गये। गुट के मुखिया ने वहाँ खड़े टेकबा की तरफ घुरकर देखा और कहा, ''हां भाई! बोलो। क्या तुम्हें भी इस मामले में कुछ कहना है? इमडोंगला मामले की गंभीरता को तुरंत भांप गई। उसने सोचा अभी तुरंत अगर बीच-बचाव नहीं किया गया तो मामला बिगड़ सकता है। हो सकता है उसका पति टेंकबा भी कहीं उनके गुस्से का शिकार न बन जाये। ये विचार मन में आते ही वो भागकर घर से चावल की ताज़ी छँटी हुई एक भरी टोकरी उठा लाई और ज़मीन पर गिरे उस घायल आदमी की ओर इशारा करके बोली, ''अरे ओ ताशी, तूने इन लोगों को क्यों नहीं बतलाया कि मैंने अपने बच्चे

के जन्मदिन की दावत के वास्ते तेरे से ये चावल उधार लिये थे और देख ज़रा! मैं भी कितनी भूल्लकड़ हूं कि अबतक तेरे उधार के चावल लौटाये नहीं।'' गुट के मुखिया की ओर मुखातिब हो इमडोंगला विनम्रता से बोली, ''भाई ये रही पूरी टोकरी! तुम्हें जितना चाहिए था उससे कहीं ज्यादा है। इसे फ़टाफ़ट समेट लो और बारिश होने से पहले निकल जाओ। देखो! काले घने बादल इधर ही चले आ रहे हैं, लो कहीं भींग न जाओ।''

दल के मुखिया ने घूर कर इमडोंगला की ओर देखा और अपने आदमियों से फ़टाफ़ट चावल समेटने को कह तुरंत वहां से चलता बना। इन विद्रोहियों के भय और आतंक से समूचा इलाका त्रस्त और परेशान था। एक तरफ़ सरकारी फरमान का भय तो दूसरी ओर इन भूमिगत विद्रोहियों का आतंक। पर हमेशा से ऐसा नहीं था। विद्रोही घटनायें जब अपने चरम पर पहुँच गई तो सरकार फ़ौरन हरकत में आई और देखते-ही-देखते समूचा इलाका छावनी में तब्दील हो गया। समय रहते सरकार पूरी तरह चेत गई थी। साल भर के भीतर ही गांव में जगह-जगह सैन्य कैंप बना दिये गये और दिन-रात पेट्रोलिंग की जाने लगी। सुरक्षा घेरे को और मज़बूत कर दिया गया। इमडोंगला के गाँव में भी एक ऊँचे टीले पर सेना का कैम्प बना दिया गया था। इसे बनवाने में टेकबा और ग्राम परिषद् के वरिष्ठ सदस्यों ने अहम् भूमिका निभाई। इसके लिए उन्होंने डेप्यूटी कमिश्नर, मोकोकचुंग को गाँव में एक खास जगह उपलब्ध करवाई ताकि वहाँ वे अपनी छावनी बना सकें। गाँव वालों की यही दरियादिली विद्रोहियों को नागवार गुजरी। जिस-जिस गाँव ने सेना को कैम्प के लिए अपनी ज़मीन मुहैया करवाई वे सभी

विद्रोहियों की नज़र में चढ़ गये। नतीजा ये हुआ कि उनके पर विद्रोहियों की ओर से दोगुना टैक्स लाद दिया गया। गाँव वालों के सामने एक अज़ीब से हालात थे। वे ऐसे दोरोहे पर खड़े थे जहां से, आगे के सारे रास्ते बंद थे। अगर वे सेना की खिलाफ़त करते तो सरकारी नुमाइंदे चुन-चुन कर उन्हें सज़ा देते। इसलिए सेना की हाँ में हाँ मिलाना उनकी मजबूरी थी। असहयोग से कुछ हासिल होनेवाला नहीं था। विद्रोहियों से वे ख़ासे नाराज़ थे पर सरकारी अमले से भी कुछ कम खफ़ा नहीं थे। हाल के दिनों में ऐसी कितनी ही सरकारी परियोजनाओं जैसे- फुटबॉल मैदान के लिए पहाड़ियों को काटकर समतल किये जाने के काम से लेकर राजमार्ग के दोनों ओर 200 मीटर तक जंगल साफ़ करने (सेना के काफ़िले को विद्रोही गुटों के हमले से बचाने के लिए), जैसे श्रमसाध्य कामों में गाँव वालों को यूहीं बेगार में झोंक दिया गया था। इससे वे खासे नाराज़ थे। ऐसा नहीं था कि इस 'बेगार' के विरोध में गाँव वालों ने आवाज़ नहीं उठाई थी। जिसने भी इसका विरोध किया उसे उनके ज़र-ज़मीन से बेदखल कर गाँव के बाहर भगा दिया गया जहाँ उन्हें नितांत निर्जन स्थान पर उनके जैसे निकाले गये अन्य साथियों के साथ सख़्त घेरेबंदी में रखा जाता। वहाँ उनकी छोटी-से-छोटी गतिविधि पर पैनी निगाह रखी जाती। हर समय उन्हें सख़्त पहरे के घेरे में रहना पड़ता।

इन सभी घटनाओं से गाँववालों की कमाई का धंधा एकदम चौपट हो गया। किसी की ज़मीन छिन ली गई तो किसी की फ़सल लूट ली गई। उनकी माली हालत बहुत खराब हो चली गई। ले-दे कर जो थोड़ी-बहुत उपज होती वो विद्रोहियों की मांग पूरी करने में ही चली जाती। विद्रोही चंदे में ज्यादातर तीन

चीजों की मांग करते, चावल, मवेशी और रुपया। कभी-कभी तो वसूली के दौरान इन तीनों की माँग एक साथ की जाती। गाँव का प्रतिनिधि टेकबा सब कुछ देख-सुन कर भी लाचार था। वो चाहकर भी कुछ नहीं कर पा रहा था। दिन-रात भीतर ही भीतर घुट रहा था। एक जनप्रतिनिधि के रूप में गाँववालों की सहायता और रक्षा करना उसका नैतिक दायित्व था पर चाहकर भी वो अपने इस दायित्व का निर्वहन नहीं कर पा रहा था। उसे अपनी लाचारी और बेबसी पर गुस्सा आता। उसका मन चीत्कार कर उठता। वो गाँववालों की मदद करना चाहता था पर डर और आतंक ने उसके हाथ पाँव बांध दिये थे। अपनी बेबसी देख उसे पीड़ा और आत्मग्लानि होती। इमडोंगला अपने पति के इस दर्द को भलीभांति समझ रही थी। वह टेकबा को तिल-तिल कर मरते नहीं देखना चाहती थी। ऐसे हालात में टेकबा चिड़चिड़ा और अवसाद ग्रसित रहने लगा। अब वो बात वेबात पर खीझ उठता और वेबजह इमडोंगला लड़ पड़ता। अब वो कमज़ोर और बूढ़ा दिखने लगा। बालों में सफेदी छा गई और शरीर सूखकर कंकाल हो गया। व्यथित हो कई बार अपने पद से इस्तीफ़ा देने की कोशिश की पर सफल न हो सका। हर बार इमडोंगला उसे रोक लेती और कहती, ''ऐसा करने पर एक तो सरकार खामख़्वाह तुम पर शक करेगी और तुम्हें बेवजह दूसरे गाँव वालों की नजरों में तुम दब्बू और डरपोक भी कहलाओगे।'' इमडोंगला के इस तरह समझाने पर हर बार वो अपना इरादा बदल लेता।

पर इस बार तो हद ही हो गई। अगस्त की पहली कटाई, विद्रोही पहले ही वसूल ले गये थे और अब सर्दियों में होने वाली फ़सल की दूसरी कटाई पर भी

निगाहें थी। धमकी भरे लहजे में वे अपनी माँग गाँव वालों के सामने रख गये थे। हालांकि पहली खेप की इस वसूली की गुप्त सूचना पर सेना के जवान, गाँव में पूछताछ के लिए आये थे पर गाँव वालों ने डर के मारे साफ़-साफ़ मना कर दिया था। लेकिन इस बार विद्रोहियों द्वारा दूसरी खेप की मांग जल्दी ही गांव में आग की तरह फैल गई। गाँव के मुखिया, टेकबा ने आनन-फानन में एक बैठक बुलाई गई। देर रात बहस चलती रही। इमडोंगला से जब नहीं रहा गया तो आखिर वो बीच बहस में कूद पड़ी। वो अपना सुझाव रखना चाहती थी पर टेकबा ने डपटते हुए उसे चुप रहने को कहा। उसने मुड़कर कहा, ''तुम चुप रहो! तुम्हें इस बारे में कुछ भी नहीं पता।'' ''अच्छा तो अब मुझे ही कुछ नहीं पता इमडोंगला ने भड़कते हुए कहा।'' ''उस दिन विद्रोहियों के सामने जब तुम्हारी जान पर बन आई थी, तब तुम्हें किसने बचाया था? ऐन वक्त पर अगर मैंने सूझ-बूझ से तुम्हें बचाया न होता तो पता नहीं उस दिन तुम्हारा क्या होता?''

फिर गाँववालों की ओर मुँह करके गुस्से में उफनते हुए बोली, ''तुम सबके सब कायर हो? कहाँ गई तुम सब की हिम्मत और बुद्धि? क्या तुममें से कोई भी ऐसा बहादुर नहीं जो जंगल जाकर उनके नेता से बात कर उनके सामने अपनी बात रख सके।'' हमारे पास जब खुद ही खाने को कुछ नहीं तो फिर हम उन्हें चंदा कहाँ से दें? आखिर कब तक हम ऐसे ही लाचार बन उनकी मांग पूरी करते रहे? उनकी मनमानी कब तक चलेगी? जाओ उनसे बात कर उन्हें मनाओ कि वे चावल के बदले हमसे सूअर या मुर्गे ले लें।'' गोश्त के बगैर तो हम फिर भी काम चला लेंगे पर चावल के बिना तो कुछ भी मुमकिन नहीं। क्या तुम लोगों की आँखें फूट

गई है? देखा नहीं, गाँव की औरतें और बच्चे भूख से कैसे बेहाल है? हम भूख से तड़पें और वे झूठी आज़ादी के नाम पर हमारा माल हड़पें। ऐसा बिल्कुल नहीं चलेगा।''

इमडोंगला के इस संक्षिप्त भाषण के बाद बैठक अब लगभग खत्म हो चुकी थी। लोग अपने-अपने घर लौट गये। अगले दिन इमडोंगला भले ही ग्रामसभा में हुई बातों को सोचती खेतों से घर लौट रही थी, पर वो अब तक उस रात सपने वाली बात को भूल नहीं पाई थी। आखिर उस सपने का जरूर उससे कोई लेना देना है। घर आते ही अपनी बेटी को समझाते हुए कहा, ''देख! इस बार अगर वसूली वाले आये तो ज़रा समझदारी से काम लेना। उन्हें आधी टोकरी चावल ही देना। बाकी कहीं छुपा देना। बहुत मेहनत से इस बार सालभर का राशन जोड़ पाए हैं। आधे चावल से कम से कम जनवरी तक तो घर के लिए खाने का जुगाड़ हो ही जायेगा उसके बाद देख लेंगे जो होगा। वैसे भी जनवरी के बाद बाबा किसी सरकारी सड़क निर्माण परियोजना या सेना के किसी कैम्प में हाथ-पैर मारकर काम ढूंढ ही लेंगे।'' इतना कहकर इम्डोंगला रसोई में घुस गई।

अगले ही दिन सुबह वो जल्दी ही काम पर निकल गई थी। थकी-हारी जब शाम को घर लौटी तो एक बुरी खबर उसकी बाट जोह रही थी। उसकी तो जैसे पैरों तले ज़मीन ही खिसक गई। पता चला सेना के कुछ जवान गाँव आये थे। वे टेकबा सहित गाँव के अन्य लोगों को अपने साथ ले गये। उनका कहना था कि गाँववालों ने विद्रोहियों को रसद पहुंचाकर सेना के साथ दगा किया है। वे अपराधी हैं। इसलिए उन्हें इसकी सज़ा मिलेगी। ये सब सुनकर इमडोंगला ऊपर से नीचे तक

काँप गई। जाड़े की रात थी। ठंड काफी बढ़ गई थी। इमडोंगला की नजर टेकबा की लाल कम्बल पर पड़ी। कम्बल वहाँ पड़ा देख उसके माथे पर बल पड़ गये। उसे अच्छी तरह पता था कि टेकबा को कितनी ठंड लगती थी ऐसे में वो कम्बल छोड़ कर कैसे जा सकता था? जरूर उसके साथ कोई हाथापाई हुई है? किसी अनहोनी की आशंका ने उसे डरा दिया। आनन-फानन में वो आर्मी कैम्प की ओर भागी जहां टेकबा और अन्य लोगों को रखा गया था।

जाते-जाते उसकी बेटी ने बताया कि कैसे सेना के जवानों ने उसके बाबा के कंधे से वो सम्मानसूचक लाल कम्बल ये कहते हुए उतार फेंका था कि वो गद्दार है, और अब इस कम्बल के लायक नहीं। उसने जंगल में विद्रोहियों को चोरी-छिपे सहायता पहुँचाई है। सुनकर इमडोंगला ने मन-ही-मन कुछ निश्चय किया।

बगल में कम्बल दबाये वो आगे बढ़ती जा रही थी। छावनी के करीब पहुँचकर जैसे ही गेट के भीतर घुसने लगी, गेट पर खड़े संतरी ने रोका, ''ऐ औरत! ऐसे कैसे भीतर घुसे चली आ रही है? किससे मिलना है?'' इमडोंगला ने विवेक से काम लेते हुए कैम्प की ओर इशारा कर, ऊंची आवाज में कहा, साहेब! ओ साहेब। इमडोंगला ने जिस आत्मविश्वास के साथ वो दो शब्द कहे थे वे सच की प्रतीती करा रहे थे। संतरी पर इसका तत्काल प्रभाव पड़ा। उसने सोचा, शायद ये औरत साहेब को जानती होगी या फिर कोई खबरिया होगी। उसने उसे फौरन अंदर जाने दिया।

अंदर घुसते ही एक गलियारे से गुजरते उसने कुछ जानी-पहचानी आवाजें सुनी। भीतर झांककर देखा तो गांव के वही लोग दिख गये जिन्हें सेना अपने साथ

उठा लायी थी। पर टेकबा कहीं नज़र नहीं आ रहा था। शायद उसे किसी दूसरे टेंट में अलग-थलग रखा गया था। जल्दी ही इमडोंगला ने टेकबा को एक दूसरे टेंट में ढूंढ निकाला। उसके टेंट के पास पहुंचकर उसने धीरे से आवाज़ लगाई, टेकबा! टेकबा! आवाज़ सुनकर टेकवा करीब आया। उसके नजदीक आते ही इमडोंगला ने फटाक से बगल में दबाया कम्बल उसकी ओर उछाल दिया। ''ये लो पकड़ो! जल्दी से ओढ़ लो।'' टेकबा ने फुर्ती से वो कम्बल अपनी ओर खींच लिया।

तभी अचानक वहां से गुजरते कैप्टन की नज़र इमडोंगला पर पड़ी। कैप्टन ने कड़कती आवाज में अपने जवानों से पूछा, ''कौन है ये औरत? और यहां कैम्प में क्या कर रही है?''

एक जवान ने डरते हुए कहा, ''सर इसका पति यहाँ कैम्प में बंद है। ये अपने पति को लेने आई है।'' कैप्टन ने कड़कती हुई आवाज़ में लगभग दहाड़ते हुए कहा, ''किसने इस पागल औरत को यहाँ घुसने दिया? इसे यहाँ से अभी निकालो।

जवान ने जवाब दिया, ''सर ये तो कब से यहाँ बैठी है? अपने पति को लिये बगैर यहां से इंच पर भी हिलने वाली नहीं। हम इसे बोल बोल कर थक गये हैं पर यह टस से मस नहीं हो रही। कहती है या तो अपनी जान दे देगी या फिर आज अपने पति को साथ लेकर ही जाएगी।''

कैप्टन उलझन में पड़ गया। उसे उस औरत से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। करे तो आखिर क्या करे? औरत पर हाथ उठाना सेना के उसूलों के खिलाफ था।

इमडोंगला, टेकबा की कोठरी के सामने ही ज़मकर बैठ गई। वहां से उठने का नाम न लेती थी। कैप्टन ने सोचा कब तक यूंही बैठी रहेगी, हारकर खुद ही चली जायेगी। जैसे ही कैप्टन वहाँ से जाने को हुआ इमडोंगला उसे देखते ही फुर्ती से उठा और कमर से लिपटी अपनी धोती (जिसे स्थानीय भाषा में मेखला कहते हैं) फटाफट उतारने लगी। नागा समुदाय में औरत की ऐसी हरकत बेहद आपत्तिजनक और शर्मनाक मानी जाती है। इसके अलावा पुरुष की नपुंसकता और कायरता का भी सूचक समझा जाता है। कैप्टन इसके लिए तैयार न था। वो हक्का-बक्का था। बिना किसी प्रतिक्रिया के वो सीधे वहाँ से निकल गया।

इमडोंगला वहीं ज़मीन पर बेतकल्लुफ़ी से पसर रही और अपने साथ लाया हुआ हुक्का गुड़गुड़ाने लगी। चिलम जलाने के लिए उसने टेबल पर पड़ा कैप्टन का कीमती लाइटर चुपके से उठा लिया। टेकबा की कोठरी के सामने ही थी। उसे पक्का यकीन था कि जबतक वो यहाँ जमी रहेगी, कोई भी जवान उसके पति या गाँव वालों को छू तक नहीं पायेगा।

टेन्ट के बाहर कैप्टन बेचैनी से टहल रहा था वो इमडोंगला की कही बातों के बारे में सोच रहा था। उसे याद आया कि इमडोंगला ने बातचीत के दौरान अपने ठेठ देहाती लहजे में कुछ ऐसा कहा था जिसे कैप्टन उस वक्त ठीक से समझ नहीं पाया था। पर जब उसके दुभाषिये ने उसे समझाया तो बात कुछ इस तरह से निकलकर सामने आया: इमडोंगला ने कैप्टन से बहस करते हुए टेकबा की ओर इशारा करते हुए स्थानीय भाषा में कहा था, ''जरा गौर से देखो उस आदमी को, क्या वो तुम्हारे पिता की उम्र के नहीं लगते? जब तुम्हारे पिता को कोई इस तरह सज़ा देगा तो तुम्हें कैसा लगेगा? क्या तुम्हें उनका डर महसूस नहीं होता? एक

तरफ तो सेना का डर दूसरी ओर विद्रोहियों का आतंक। बेचारा आखिर करें तो क्या करें? लेकिन तुम्हें क्या? तुम्हें इससे क्या लेना-देना? ये लोग तुम्हारे लगते ही कौन हैं? तुम्हें क्यों इनके दर्द का एहसास होगा? वह बार-बार यही बातें दोहरा रही थी आखिर तुम हमसे चाहते क्या हो?''

कैप्टन, इमडोंगला की इन्हीं बातों के बारे में सोच रहा था। अपने समूचे कार्यकाल के दौरान पहली बार वो किसी ऐसी औरत से टकराया था जिसने उसकी आंखें खोल दी। उसीके कारण उसे गाँववालों की समस्या का एहसास हुआ था। एक साधारण देहाती औरत ने पहली बार सच से उसका सामना कराया था।

सहसा कैप्टन अपने आदमियों की ओर मुड़कर बोला, ''जाओ, टेकबा को रिहा कर दो।'' और हाँ उन दोनों को कैम्प से दूर सुरक्षित उनके गाँव तक छोड़ आना। हालांकि उसने बाकियों को वहीं रातभर रखकर सुबह छोड़ने का निर्णय लिया ताकि सेना की कार्यशैली पर उंगली न उठे।

उन दोनों के जाने के बाद कैप्टन ने राहत की साँस ली। वो थोड़ा थक गया था थकान मिटाने के लिए उसने अपनी सिगरेट निकाली और लाइटर ढूँढने लगा। पर वो कहीं मिली नहीं। उसे तो इमडोंगला पहले हीं पार कर चुकी थी। काफी ढूंढने के बाद भी जब लाइटर हाथ नहीं लगा तो अचानक उसे याद आया कि वो औरत (इम्डोंगला) हुक्का पी रही थी पक्का उसी ने उसका लाइटर होगा। वे सोच में पड़ गया। लाइटर गायब होने की इस मामूली सी घटना ने कैप्टन को ये सोचने पर मजबूर कर दिया कि कैसे एक अनपढ़ देहाती औरत ने अपनी सूझ-बूझ के दम पर एक अनजानी जगह आकर उनके अस्तित्व पर सवाल खड़े कर दिये थे और कैसे पलभर में उनकी सैन्य दृढ़ता को डिगा दिया था।

❐❐❐

2.7 सोन्नी

माँ–बाबा के प्रति दायित्व या फिर यूं कहें कि उनके स्नेह ने मुझे उन गर्मियों में घर जाने को उद्वेलित किया था। मेरी समझ से इसकी कोई दूसरी सबसे बड़ी वजह थी तो वो था सीजफायर का ऐलान। इलाके में सक्रिय विभिन्न संगठनों और नागा विद्रोही समूहों ने आपसी समझौते और साझा पहल के तहत तथाकथित शांति का ऐलान किया था। इससे गोलीबारी और छिटपुट हिंसक झड़पों में कमी आई थी।

इस अल्पकालिक शांति समझौते ने मेरे भीतर के डर को थोड़ा कम ज़रूर हुआ था पर डर पूरी तरह गया नहीं था। अभी भी रह–रहकर हिंसक झड़पों की इक्का–दुक्का खबरें आ ही जाती। जिसमें कैडर प्रमुख और संबंधित गुटों के नेताओं की हत्या खबरें सबसे ऊपर होती। लोग अभी भी डरे हुये थे। किसी अनजाने डर से मैं घर जाने का अपना कार्यक्रम बार–बार बदलती रही। पर अंत में मन बना ही लिया। लेकिन क्या पता था कि मेरी अपनी यही धरती मेरी ख़्वाहिशों की कब्रगाह बन जायेगी।

वर्षों से संजोये मेरे ख़्वाबों के आशियाने में बेरहम वक्त की क्रूर सेंध लग गयी थी। अतीत के मुहाने छोड़ आयी थी आज वहीं वर्तमान के प्रवेश पर खड़ा दस्तक दे रहा था।

अरसे बाद घर वापसी का संतोष मुझे गुदगुदा रहा था। हफ़्ता दो हफ़्ता ऐसे निकल गया मोना मुट्ठी से रेत। बिछड़े–भूले संगी साथी और अपनों से मिलकर मैं अभिभूत थी। स्नेह, मिलन और सुकुन के ये पल कट ही रहे थे कि अचानक एक

दिन ऐसा हुआ जिसने मुझे भीतर तक हिला दिया। इसकी शुरूआत उस मनहूस सुबह हुई जब मेरी भतीजी ने सुबकते हुए फोन पर कहा, ''आंटी सोन्नी नहीं रहा! रात उसी के गुट के लोगों ने घर में घुसकर उसकी हत्या कर दी।'' सुनकर मैं सन्न रह गयी। हाथ-पैर सुन्न पड़ गये। बगैर कुछ बोले चुपचाप फोन रख मैं वहीं धम्म से बैठ गयी।

सौन्नी एक ऐसा किरदार जिसने हमेशा किस्मत से ज्यादा पाने की ख्वाहिश की और मुकद्दर से लड़कर अपने हिस्से का सुख छीन लाने का माद्दा रखा। एक ऐसा इंसान जिसमें जुनूनियत की हद तक जाकर किस्मत को चुनौती देने का जज़्बा था और आज उसी जुनूनियत ने उसकी साँसें छीन ली। जाने कब से वो उन तंग अंधेरी गलियों में अपने खोखले सपनों के पीछे बेतहाशा भाग रहा था और बस भागता ही जा रहा था। बेसाख़्ता, बेलगाम। कभी न खत्म होने वाले सफर की तरह। मुझे याद है एक बार उसने मेरे हाथों को अपने हाथों में थामते हुए कहा था, ''माई डियर तुम नहीं जानती ये मेरे लिए मेरे सपनों के क्या मायने हैं? मेरे जीवन में तुम्हारे होने से कहीं बढ़कर। ये मेरे जीवन का एकमात्र ध्येय है, नागा आजादी। और इसे पूरा करने के लिए जान भी न्योछावर करनी पड़े तो चुकुँगा नहीं। जीवन के इस समर में मुझे अपनी आहूति डालनी ही होगी। खुद को मिटाकर भी मिट्टी के इस कर्ज को चुकाऊँगी।''

मैं सोच रही थी, क्या यह उस विराट सपने का अंत था? उस चैतन्य का विलिन हो जाना था जो प्रखर और प्रज्ज्वलित हो समष्टि में समाहित होना चाहता था? क्या ये उस तारे का टूट जाना था, जो अपना सर्वस्व न्योछावर कर मातृभूमि

के कण-कण को सुभाषित करना चाहता था? क्या उस महान लक्ष्य की यही नियति थी कि वो अपने ही आंदोलनकारी भाई बंधुओं के पैरों तले बेरहमी से मसला जाए। ये किसी शख्सियत का अंत नहीं था, बल्कि एक आदमकद सपनों का विलिन हो जाना था।

मैं मर्माहत थी। इस खबर के बाद इतनी हिम्मत शेष नहीं रही कि इंच भर भी हिल पाऊं। पता नहीं कब तक यूहीं जड़वत खड़ी रही। एकदम मौन, मूर्त्तिवत निर्विकार। शायद माँ को इसकी खबर हो गई थी वो टूट गई पर मेरे मन के भावों को ताड़कर मौन साध लिया। शायद उन्हें एहसास था कि मेरे भीतर अभी-अभी कुछ ऐसा टूटा है जिसकी पीड़ा अपरिमित और अकल्पनीय है। वे अपने आँसूओं को मुझसे छुपाना चाहती थी शायद इसलिए दबे पांव चुपचाप कमरे से बाहर निकल गई। मुझे नितांत अकेला छोड़। ऐसा लग रहा था मानो जीवन समर में तन्हा खड़ी हूँ। एक अजीब सा वीराना था जो नस्तर सा चुभ रहा था सीने में। लहू था जो रगों में थम सा गया था, आँसू थे जो आँखों में जम से गये थे और सांसे थी पर रुकी-रुकी सी। बाहर प्रचंड रोशनी थी पर भीतर घुप्प गहरा अंधेरा।

याद नहीं कब तक मैं अपने तकिये को गीला करती रही। सौन्नी का ना होना मेरे लिए ऐसा था मानो दरिया से उसकी लहरों का निकल जाना, झरने से उसकी गति छिन जाना आग का धधकरना रूक जाना। उसका मेरे जीवन में ना होना उतना ही अकल्पनीय और अविश्वसनीय था जितना धरती पर रोशनी का न बिखना। मेरे हृदय में उसकी जीवंत छवि आज भी शाश्वत विराजमान थी वो इस यकीन को पुख्ता ही नहीं होने दे रही थी कि वो अब नहीं था। आज भी उसके

फुर्तीले और गठीले बदन को याद कर मन रोमांचित हो उठता है। आशा से भरी उसकी आँखें कितने सारे सपने संग लिये फिरती थी। उम्मीदों के दरख़्त से जाने कौन सा पत्ता तोड़ लाया था। हर वक्त कुछ नया कर गुजरने के ज़ज्बात से भरा रहता। क्रांति और इन्कलाब तो मानों उसकी खून में था। ऐसा लगता जैसे वक्त के मुहाने खड़ा इतिहास की नयी इबारत लिखने को तैयार बैठा है। उसके साथ बिताये उन अद्भूत पलों में मैं खुद को कितना जीवंत महसूस किया करती इसे शब्दों में बयाँ नहीं किया जा सकता। आज उसके चले जाने से दिल का बड़ा कोना खाली हो गया है। उसका चले जाना कितना साल रहा है। एक बार फिर उसका स्पर्श पाने और जीभर उसे देखने को मेरा मन बार-बार ललक रहा है। उफ! इतनी वीरानगी। इतनी तन्हाई। कैसा मंजर था ये? मेरा दिल बैठा जा रहा था। बिस्तर पर औंधे मुँह पड़ी अचानक अतीत के पन्ने पलटने लगती हूँ। उसकी प्रतिबद्धता, उसके प्रण घने काले बादलों की मानिंद मुझे चारों ओर से घेर लेते हैं। तब एक कॉमरेड की जिंदगी को फिर से खंगालने लगती हूँ। धुन का पक्का, लक्ष्य को समर्पित एक ऐसा सिरफ़िरा कॉमरेड जो अपने संगठन के उद्देश्य की खातिर अपने प्राणों की आहूति देने में ज़रा भी सांकेच न करे। हमारा मिलना और मिल के फिर से बिछुड़ जाना इन सबके केन्द्र में कहीं-न-कहीं उसी लक्ष्य प्राप्ति की आशक्ति थी। उसका अपनी मंज़िल की ओर कदम-दर-कदम आगे बढ़ना और मेरा हर कदम पीछे खींचना, सब एक साथ घटित हो रहा था। भले ही उसका प्रेम मेरे जीवन की संजीवनी थी पर उसके सपने उसके साँसों के लिए ऑक्सीजन था। हम दोनों को इन दोनों में से किसी एक चुनना था। और इस चुनाव में वो जीत गया,

मैं हार गई। उसके कदम उसकी मंजिल की दिशा में आगे बढ़ गये और आहिस्ता से मैंने अपने कदमों को पीछे खींच लिया। मैंने साफ़-साफ़ कह दिया, मैं उन रास्तों पर कभी उसका साथ नहीं दे पाऊंगी। भले ही सारी उम्र तन्हाइयों में काटनी पड़ जाए, पर उसकी मंजिल की ओर कदम बढ़ाकर खुद को तन्हा करना नहीं चाहती थी मैं।''

इसके बाद तो जैसे हमारी दुनियाँ ही अलग हो गई। वो अपने सपनों के जहाँ में कहीं खो गया और मैं अपनी मंजिल पर आगे बढ़ गई। इस बीच कभी-कभार किसी-किसी के मार्फ़त उसकी खबर मिलती रही। बाद में ये सिलसिला भी बंद हो गया। अख़बार के जिस दफ्तर में मैं काम करती थी वहां संवाददाताओं के ज़रिये यदा-कदा उसकी ख़बर मिल जाती। कभी उसका संगठन अखबार के किसी कोने की सुखी बन जाता तो कभी उसका सरगना मुख्य पृष्ठ पर छाया रहता। अख़बार की चंद कतरनें वर्षों तक उसकी उपस्थिति का आभास कराती रही। इन पाँच वर्षों के इस लंबे प्रवास के दौरान बस यही सोचती रही कि आखिर ऐसा क्या था उस इंसान में जिसने मुझ जैसी अंर्तमुखी और साधारण सी लड़की को ज़कड़न व रूढ़ियों से दूर प्रेम और भावनाओं के स्वप्नलोक में पहुंचा दिया था। जहां रातें रौशनी और सपने सतरंगी थे। फिर सोचती आखिर क्यों बीच में ही मुझे एक निर्जन द्वीप पर तन्हा छोड़ वो कहीं चला गया। मेरी क्या गलती थी? सिर्फ इतना न कि मैंने उसका साथ मांगा था, उसके साथ भरपूर ज़िंदगी जीने का एक ख्वाब देखा था। दूर जाकर भी वो मेरी ज़िंदगी में अब तक मौजूद था। आखिर उसमें ऐसा क्या था जिसे मैं आजतक नहीं समझ पाई।

हमारी मुलाकात की वो आख़िरी रात आज भी भूलाये नहीं भूलती। जब वो अंतिम बार मुझसे मिलने आया था। मुझे मालूम था कि सोन्नी अपने संगठन का एक समर्पित सिपाही था और उसकी इसी धर्मनिष्ठता की परीक्षा देने के लिए संगठन द्वारा उसे प्रशिक्षण और असलाह के सिलसिले में चीन भेज रहा था। जब हम मिले काफ़ी देर तक हम मौन खड़े रहे। पहल किसी ने भी नहीं की। सोन्नी शायद यही बताने आया था कि वो जा रहा था। मन की गहरी खाई एक बर्फ़ीली चट्टान की मानिंद हमारे बीच सीना ताने धृष्टता से खड़ा था। मैं जड़वत् खड़ी रही। उसके इस निर्णय ने तीन सालों की हमारी प्रणय यात्रा में अचानक विराम लगा दिया था। ये आखिरी रात हम दोनों के लिए ही बहुत कीमती थी। ये रात कभी न खत्म होने वाली रात बन ये रात यूँ ही चलती रहे, चाँद अपनी चाँदनी बिखेरती रहे और ख्वाबों का ये सिलसिला बदस्तूर जारी रहे। हम दोनों के भीतर शायद यही ख़्वाहिश आकार ले रही थी। इस सच से हम दोनों ही वाकिफ़ थे कि सूरज की पहली रोशनी के साथ ही हमारी दुनियाँ भी बदलने वाली थी। फिर पहले जैसा कुछ भी नहीं रहने वाला था। पता नहीं क्यों पर हमारे बीच एक अनचाही दूरी भी पैदा हो गई थी ऐसा लग रहा था जैसे हम एक-दूसरे को औपचारिक विदाई देने की तैयारी में थे। हमारी दैहिक प्रतिक्रिया पूर्व की भाँति भले ही तीव्र और गहरी थी पर दिलों में वो आग नहीं थी। मानों कोई अदृश्य ताकत हमें ऐसा करने से रोक रही थी। उन्माद का ये ज़्वर जब ठंडा पड़ा तो एक बार फिर जुदाई के भय ने हमें घेर लिया। हम रात-भर भले ही एक दूसरे की बांहों में झूलते रहे पर सारी रात साथ रहकर भी हम एक-दूसरे से अन्जान बने

रहे। उसके चले 'जाने' और 'रह जाने' के बीच सारी रात आँखों में कटी। मैं गुस्से में थी। मेरा प्रणय निवेदन भी उसे रोक न पाया। उसे मेरी बात नहीं माननी सो वो नहीं माना। उस रात की यादें आज भी मेरे ज़ेहन में ताज़ा है। ऐसा लगता जैसे उसने नहीं बल्कि मैं खुद अपनी मेरी गलती से दबे पाँव उसकी जिंदगी से बाहर आ गई थी। आत्मग्लानि का ये भाव हमेशा मुझे सालता रहा।

भोर की पहली किरण से रात का अंधेरा छूट गया था। मैं उसे सोता छोड़ वादियों में कहीं दूर निकल आयी थी। उससे दूर जाकर जुदाई से पहले खुद को पूरी तरह तैयार कर लेना चाहती थी। शायद ये मेरे भीतर का ही डर था जिसने मुझे उससे दूर जाने पर विवश किया। मैं तब तक जंगल में रूकी रही जब तक इस बात की तसल्ली न हो गई कि वो अपनी गणतव्य की ओर निकल चुका होगा।

कॉटेज वापस लौटी देखा वो जा चुका था। चारों ओर एक अजीब-सा सन्नाटा पसरा था। ऐसा लगा शरीर का कोई हिस्सा टूटकर अलग हो गया हो। अस्तित्वहीन सी इधर-उधर झूलती रही। उसका यूँ चले जाना मुझे भीतर तक खाली कर गया था। उसके लिए थर्मस में जो कॉफी रख छोड़ी थी वो खत्म हो चुकी थी। पास में ही ड्रेसर पर कागज़ के एक टुकड़े पर मेरे लिए चंद लाइनें छोड़ गया था। लिखा था, ''जानेमन यह गुडबॉय हमेशा के लिए नहीं है, तुम ताउम्र मेरा प्यार बनी रहोगी।'' मेरे भीतर जैसे आग लग गई। मैंने कागज़ के टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

उस समय किसी को भी ये अंदाज़ा नहीं था कि सौन्नी आज़ादी के नाम पर एक ऐसी काँटो भरी राह पर चल पड़ा था जहाँ हर कदम पर दुश्वारियाँ ही

दुश्वारियाँ थी। कौन-सा दोस्त कब दुश्मन बन जाये, कोई नहीं जानता था। क्योंकि संगठन का यह संघर्ष मात्र प्रतिरोध भर था। बल्कि इसने भीतरी अंर्तकलह और वैचारिक प्रतिस्पर्धा का रूप ले लिया था। संगठन के अन्य कार्यकर्ता जो इसी लक्ष्य के साथ आगे बढ़ रहे थे उनके बीच लगातार मतभेद बढ़ रहा था। और विडम्बना देखिये कि इस खूनी प्रतिस्पर्धा का पहला शिकार सोन्नी ही बना। अपने ही साथी कामरेडों ने सौन्नी के सीने में गोलियाँ उतार दी थी। उसका सीना छलनी कर दिया था।

ये बात और थी कि सौन्नी एक प्रेरक अगुआ के रूप में नई पीढ़ी के कामरेडो के लिए एक 'बौद्धिक गुरु' बन चुका था पर पुरानी पीढ़ी के कामरेड उससे खफ़ा रहते। जौन्नी की वाजिब़ बातें उन्हें खटकती। बात जब भी सही और गलत शोषण और गैरबराबरी की आई सौन्नी ने हमेशा सही का पक्ष लिया। भले ही इसके लिए उसे बुजुर्ग कामरेडो की बात अनसुनी करनी पड़ती, वो करता। उसकी यही वैचारिक निरंकुशता ने उसे उसे लील लिया।

उन दिनों जब समूचा विश्व, फिदेल कास्त्रों और उसके मित्र व सलाहकार शी गुयेवारा का, आँखें मूंदकर अनुसरण कर रहे थे, सोन्नी के संगठन और अन्य आंदोलनकारियों पर भी इसका गहरा प्रभाव था। संगठन के कुछ कार्यकर्ता सोन्नी की तुलना अज्ञेय तक से करने लगे थे। उनका मानना था कि इस आंदोलन को समूचे विश्व में फैलाने की कुब्ब़त अगर किसी के पास है तो वो है सोन्नी। अकेला वही है, जो आज़ादी की इस लड़ाई को जन-जन की लड़ाई बना सकता है और उसे अपने लक्ष्य तक पहुँचा सकता है। ऐसा भी नहीं था कि वह कार्यकर्त्ताओं

का चहेता हो गया था या आँख बंद कर उसका अनुसरण करने लगे थे। ये तो उसकी जुनून और संकल्प था जिसे देख लोगों ने उसमें संभावनायें देखनी शुरू कर दी थी। पर ये सफ़र इतना आसान न था। अभी तो बस शुरुआत थी। उबड़-खाबड़ रास्ते पर चलकर मंज़िल तय करनी थी, अलग-अलग वैचारिक प्रतिस्पर्धियों के बीच अपनी जगह सुनिश्चित करनी थी, और सिद्धांत और विचारधारा की कसौटी पर बुद्धिजीवियों को मात भी देनी थी। कठिन रास्तों को पार करना बाकी था।

उसके आहिस्ता से मेरी ज़िंदगी से बाहर चले जाने के बाद मुझे अपने निर्णय पर पछतावा होने लगा। उसके साथ जुड़ने का मेरा फ़ैसला कहीं गलत तो नहीं था। क्या एक ऐसे इंसान के प्रेम में आसक्त होना सही था जिसने मेरी भावनाओं के बजाय अपने लक्ष्य को तब्बज़ो दिया? अपनी प्रेम-प्रतिज्ञा पूरी करने में वो सर्वथा असफल रहा था। निराशाओं के प्रवल आवेग ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। ठुकराये जाने का जख़्म इतना गहरा था जिन्हें अगर ज़ल्दी ना भरा जाता तो वो नासूर बन सकता था। जुदाई के इस गम से बाहर निकलना बहुत जरूरी थी। और जब वो अपनी राह पर आगे बढ़ गया, तो मुझे कहाँ रुकना था? अवसाद और एकाकीपन से छुटकारा पाने के लिए मैंने पास के ही शहर के एक दैनिक समाचार पत्र में बतौर पत्रकार नौकरी शुरू की। ये एक नई ज़िंदगी की सुबह थी। मुझे उन सारी यादों को दफ़नाया था जिनके सहारे अब तक जीती आई थी। वो तमाम यादें, वो मुलाकातें और वो हँसीन पल मुझे इनके आवरण बाहर निकलना था। मुझे यकीन था, मैं अपनी जिंदगी दोबारा उसी अंदाज में शुरू कर सकती थी। मैं जितना उसकी यादों से दूर जाना चाहती, वो उतना ही मेरे करीब आता।

अख़बार के दफ़्तर में भी सौन्नी का अतीत साये की तरह मेरे पीछे लगा रहा। प्रांत के विभिन्न गुटों और संगठनों के बीच तनातनी और छिटपुट संघर्ष की खबरें क्षेत्रीय ब्यूरो के माध्यम से अंतत: मेरे डेस्क तक पहुँच ही जाती। सोन्नी के संगठन और उससे जुड़ी गतिविधियाँ भी मुझ तक पहुँचती रहती। प्रत्यक्ष रूप से न सही, अप्रत्यक्ष तौर पर वह हमेशा मुझसे जुड़ा रहा। उसके कैडर से जुड़ी जमाम खबरें मेरे अखबार की सुर्खियां बनती।

उसके संगठन में बढ़ते अंर्तकलह और गुटबाजी के बारे में सुनकर देखकर मायूसी होती। सोन्नी सोचती आखिर इन सब से कैसे निपटता होगा? क्या कैडर के कार्यकर्त्ता उसका साथ देते होंगे। संगठन के भीतर पनप रही कुंठा ओर लालच से निपटना टेढ़ी खीर साबित हो रही थी। कभी-कभी तो ऐसा लगता, सौन्नी अपने जुनून और वैचारिक दृढ़ता से सब को बाँध लेगा। लोगों के साथ प्रभावशाली संवाद उसकी सबसे बड़ी ताकत थी। कई बार अपनी इसी शक्ति का बेहतर इस्तेमाल कर उसने विभिन्न गुटों के बीच वैचारिक साम्यता और प्रतिक्रियात्मक तारतम्यता कायम करने में सफलता हासिल की थी। हाँलाकि उसकी बढ़ती लोकप्रियता को देखकर गुट के भीतर और बाहर उसके विरोधियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही थी। हालात चाहे जो हो वो अपने सिद्धांतों से समझौता करनेवालों में से नहीं था। जिस वैचारिकता की उर्वर भूमि में उसने आंदोलन के उन्नत बीज़ डाले थे उसकी नई पौध ज़न्म ले चुकी थी जो एक अटल वटवृक्ष की भांति सदैव अडिग रहने वाली थी। उसके तेवर से लगता वो कभी किसी के सामने घुटने टेकने वाला नहीं था। मातृभूमि की आज़ादी उसके जीवन का अंतिम ध्येय था।

वक्त यूँ ही लम्हा-लम्हा गुजरता गया। मैं, सौन्नी को सात साल पीछे छोड़ आयी थी। अचानक एक दिन दफ़्तर में बैठे एक सहकर्मी ने विदेशी अख़बार की कतरन दिखाई जिसे देखकर मैं एक बार फिर वहीं लौट आई जहाँ से अपना सफ़र शुरू किया था। मुझे ये बात पता थी कि सौन्नी ने अपने आंदोलन को सक्रिय बनाने के लिए इन दिनों पराई धरती को अपना ठिकाना बनाया हुआ था। अखबार की खबर किसी आंदोलनकारी द्वारा अपने ही कैडर की महिला कॉमरेड से शादी के बारे में थी। खबर की अगली लाईन पढ़ते ही मैं चौक गई। लिखा था इस कॉमरेड ने आंदोलन को ऊँचाईयों तक के लिए वकालत के अपने सुनहरे पेशे को दाँव पर लगा दिया था। समझते देर न लगी। यह कोई और नहीं सौन्नी ही है। मैं सकते में थी। दिमाग में सारी चीज़ें एक-एक कर चक्करघिरनी की तरह गोल-गोल घूमने लगी। मेरा मन नफरत, आक्रोश और घृणा से भर उठा। खुद से पूछा, क्या उस आदमी को कभी भूल पाऊँगी, या फिर उससे कभी नफरत कर पाऊंगी, जिसे कभी टूटकर चाहा था। मोहब्बत की हर लकीरों में बस उसका ही नाम लिखा था। अंतर्मन के इन सवालों ने फिर से मुझे अतीत में पीछे धकेल दिया। मैंने जिस कदर उसे चाहा, उसकी पूजा की, क्या उसने भी इस तरह टूटकर मुझे चाहा? क्या वफ़ादारी की राहों में वो मुझसे पीछे छूट गया था?

फिर धीरे से खुद को मनाया। हो सकता है किसी मजबूरी में उसे ऐसा करना पड़ा हो। जिंदगी जीने की जद्दोज़हद ने उसे ऐसा करने पर मजबूतर कर दिया हो। आंदोलनकारी गुटों और सरकारी ताकतों के मंडराते खतरे ने शायद उसे इस रास्ते पर धकेला होगा। तरह-तरह से मन को सांत्वना देने में लगी रही।

गहराई से सोचा तो एहसास हुआ, कितनी भोली और मासूम थी मैं। और कितना बड़ा छलिया था वो। हर कदम पर उसने मुझे प्रेम में छला था। उन दिनों जब हम मिलते, अक्सर इसी बात पर बहस होती कि वो क्यों कोरी कल्पना को मानने में लगा है? जिस दुनियाँ में वो जी रहा था वो सपनों की मायावी दुनियाँ थी जो कभी वास्तविकता का आधार नहीं ले सकती थी। कभी-कभी तो मैं उसकी 'आज़ादी' और 'मुल्क की आज़ादी' जैसे जुमलों पर ठठाकर हँस पड़ती। मेरे पास हमेशा यही सवाल होता कि जिस मुल्क की आज़ादी की वो बात कर रहा है क्या उसे आज़ादी के लिए उसके पास पर्याप्त कॉमरेडों और पर्याप्त धन है जिसके बूते वो आज़ादी के इस बड़े सपनों को साकार कर सके। मेरे इस सवाल का जवाब वो ऐसी रहस्यमयी मुस्कुराहट और इस कुटिल अंदाज़ में देता की मैं लाजवाब हो जाती। शायद ये उसके प्यार की खुमारी ही थी कि मैं उसकी हकीकत न जान सकी। प्रेम की दरिया में ऐसी डूबी कि सही-गलत का फ़ैसला न कर पाई। अब, जब वो किसी और के साथ शादी के बंधन में बंधने जा रहा था तब ये एहसास हुआ कि उसकी दुनियाँ कितनी बदल गई थी? कितना दूर हो गया था वो मुझसे? हर बार खुद को यही समझाती रही कि गलती उसकी नहीं, उन परिस्थितियों की है जिसने उसे बाध्य किया पर लाख समझाने के बाद भी मन ये मानने को तैयार न था। मेरे साथ धोखा हुआ था इसे मैं कैसे झुठला सकती थी?

सौन्नी की शादी की इस खबर ने मुझे भीतर तक तोड़ दिया था। मैं गहरे अवसाद में चली गई। सोचने समझने की शक्ति जैसे क्षीण होने लगी थी। ऐसे नाजुक वक्त में अगर मेरे बड़े भाई ने आकर मुझे संभाला न होता तो पता नहीं

क्या होता। मैं उसके साथ कुछ दिनों के लिए गांव जाने को तैयार हो गई। ज़ख्म भरने का सबसे अच्छा तरीका शायद यही था। मैं गाँव आ गई थी। घर की सफ़ाई करते हुए अचानक एक दिन पुरानी चिट्ठियों का बंडल हाथ लग गया। उलट-पलट कर देखा तो सौन्नी के हाथों लिखी तीन चिट्ठियाँ मिला जिन्हें करीब साल-दो साल पहले भेजा गया था।

मैं हतप्रभ थी। वो खत नहीं, दर्द का सैलाब था जिसे पढ़कर पहली बार उसकी बेबसी का एहसास हुआ। अपने पहले खत में उसने आंदोलन जीवन से जुड़ी कठिनाईयों और संगठन के आंतरिक कलह के बारे में बताया था। दूसरा खत बड़ा ही भावनात्मक था, जिसने मुझे हिलाकर रख दिया। अपने इस मार्मिक पत्र में उसने अपने लक्ष्य को न प्राप्त कर सकने के कारण हताशा-निराशा हो चुकी अपनी ज़िंदगी के पन्नों को खोला था। यहाँ तक कि आत्महत्या के असफल प्रयास का भी ज़िक्र था इस खत में। खत के अंत में चंद लफ्ज़ों में एक ही स्वीकारोक्ति थी, जिसने मुझे भीतर तक हिलाकर रख दिया। लिखा था, ''मेरी प्रियतमा, तुमने मुझे जाने से नहीं रोका था, इसके लिए मैं हमेशा से तुम्हारा शुक्रगुजार रहा, पर अब लगता है कि काश! तुमने मुझे रोक लिया होता तो अच्छा होता।'' क्या वो वही मजबूत इरादे वाला जुनूनी सौन्नी था? या कोई और? जिसके इरादें चट्टान से भी अटल और सीना फ़ौलाद से भी ज्यादा सख़्त था। क्या वो यही, सौन्नी था? क्या उसके सपनों, इरादों और आकांक्षाओं की यही हकीकत थी? बाहर से भले ही वो कठोर और अभिमानी दिखता था पर था तो संवेदनाओं का एक पुतला ही न। भावनायें तो उसके भी तिरोहित करती थी। आखिर कब तक वो चुपचाप सबकुछ सहता रहता? विपरीत हालातों से अंततः वह टूट ही गया

अगले दो तीन दिनों तक मैंने उस आखिरी खत को हाथ नहीं लगाया। हर बार यही सोचकर रूक जाती कि पता नहीं दर्द के कौन से दफ़न होंगे इस खत में। पर दर्द के उन लम्हों को जानने की कसक ने मुझे वो आखिरी खत भी खोलने पर मज़बूर कर दिया। यह छोटा और संक्षिप्त खत था जिसमें उसने लिखा था, ''इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम मेरे बारे में क्या सोच रही हो या फिर क्या पढ़ रही हो? लेकिन तुम्हें पता है न कि तुम हमेशा से मेरी संगिनी थी और आगे भी बनी रहोगी। उसने अपनी शादी की ओर इशारा करते हुए ऐसा लिखा था।''

कितनी मूर्ख थी मेरे प्रति उसके प्रेम की इन उदात्त भावनाओं को कभी समझ नहीं पाई। उसने अपने भीतर दबे इस प्रेम का कभी खुलकर इजहार भी तो नहीं किया। अब जब उसकी शादी लगभग तय हो चुकी थी, अपनी भावनाओं को दर्शा रहा था। ये कैसा प्रेम था? उसके इस आखिरी खत ने पूरी तरह ये यकीन दिला दिया कि हालात हाथों मजबूर होकर ही उसने अपनी शादी का फैसला लिया था।

मेरी आँखों से आँसूओं की अविरल धारा बह निकली। एब बार फिर सौन्नी ने मुझे तन्हा कर दिया था। बिल्कुल तन्हा। ज़िन्दगी के समर में अकेला छोड़ जाने किस दुनिया में चला गया था वो। एक हूक-सी सीने में उठी। एक बार फिर सपनों के उस सौदागर ने मेरा सब कुछ लूट लिया था। पता नहीं कब तक पर लगातार रोती रही। भीतर जमा दर्द आँसूओं के सहारे बाहर निकलता रहा। अब जब उसका अस्तित्व मिट चुका था तब मेरा मन बार-बार उस खूबसूरत चेहरे की एक

झलक पाने को तड़प उठा था। कैसे उसकी एक आवाज़ दिल के तारों को झंकृत करती थी? कितना अच्छा लगता था जब वो प्यार से मुझे अपने बाजुओं में भरता था? एक-एक कर वो तमाम लम्हें फिर-फिर लौट आते और मेरा मन उन मीठी स्मृतियों के गलियारे में कहीं खो जाता। तब मुझे उस पर बेइंतहा प्यार आता और खुद को उसके प्रेम की घनी छांव तले पाती।

उसकी यादें, अब यादें बनकर रह गई, सोचकर मन सिहर उठा। जिसे कभी मैंने टूटकर चाहा था वो अब स्मृतियों के पन्ने में कहीं दर्ज होकर रह गया। मेरा मन एक बार फिर रोमानियत से भरे उन पलों में कहीं खो गया। उसकी छाती के दाहिनी ओर जो नीले रंग का तिल था। जाने उसका क्या हुआ होगा? क्या वो अब भी वहीं होगा या कारतूसों के बदसूरत दाग ने उन्हें मिटा दिया होगा। मौत के बाद उसका खूबसूरत चमकता चेहरा अब कैसा दिखता होगा? क्या वो विकृत हो गया होगा? अब तक तो उसे ताबूत में सजाने के लिए तैयार भी कर दिया गया होगा। हे ईश्वर! किस घड़ी में ला खड़ा किया मुझे? इस बीच दीवार घड़ी पर नजर गई, वो 7.30 बजा चुकी थी पर यादों का रेला तो जैसे टूटने का नाम ही न लेता था। पता नहीं गोलियों से छलनी-छलनी उसके शरीर पर कौन सी कमीज़ पहनाई गई होगी? क्या वो नीली टाई अब तक भी उसकी अलमारी में पड़ी होगी जिसे मैंने क्रिसमस पर उसे उपहार में दिया था? उन पलों को याद करते हुए मेरे चेहरे पर बरबस ही मुस्कान तैर गई। मेरे उस उपहार को देख कैसी बालसुलभ मुस्कान तैर गई थी सौन्नी के मुख पर। उस क्रिसमस, यूनिवर्सिटी में जब वो मेरी दी हुई टाई को गहरे नीले सूट और हल्की नीली कमीज़ के साथ बाँधे आया था तो मेरा मन

खुशी और गर्व से नाच उठा था। तब ऐसा लगा कि इस धरती पर सौन्नी से ज़्यादा आकर्षक और जवान इस दुनियाँ में कोई और मर्द हो ही नहीं सकता। गर्व के इस एहसास से मेरा रोम-रोम खिल उठा था।

अब सुबह पहले जैसी शांत और शीतल नहीं रहीं। मन बार-बार बेचैन हो उठता। पहले दिन तो घर के कामों में खुद को उलझाने बहुत कोशिश की पर अगले दिन कॉलेज की एक सहेली के फोन ने मेरी तंद्रा भंग की। मुझे मालूम था, फोन उदसने सौन्नी के बारे में जानने की लिए किया था। इसलिए मैं उसे नजरअंदाज़ कर रही थी। माँ के जोर डालने पर आखिर मुझे उसका फोन उठाना ही पड़ा। दरअसल वो ये जानना चाहती थी कि मैं सोन्नी के शोक दिवस कार्यक्रम में जा रही थी या नहीं? और क्या मुझे उसके साथ की जरूरत थी? मैंने मना करते हुए धीरे से रिसीवर नीचे रख दिया। मेरे दिमाग में जैसे बम फटा हो। अंतिम संस्कार?? आखिर किसका, मेरा दिल और दिमाग ये मानने को कतई तैयार नहीं था कि सौन्नी अब इस दुनियाँ में नहीं रहा। झूठी दिलासा से खुद को बहलाती रहती। सच तो ये था कि वो अब हम सबसे बहुत दूर जा चुका था। और ये भी सच था कि मरने वाले का संस्कार किया जाना बाकी था, इस सच को कैसे झुठलाया जा सकता था। मेरा दिमाग फटा जा रहा था। क्या उसे दफ़नाया जायेगा जो कभी लोगों में जीने की आस जगाता था? जो मुश्किल भर क्षण में उपर उठना सिखाता था। क्या सचमुच हमेशा-हमेशा के लिए उसे दफ़ना दिया जायेगा? तो फिर उसके उन क़ीमती उपहारों का क्या होगा? वे बेश्कीमती शॉल जिन्हें उसके दोस्तों ने प्रेमस्वरूप भेंट किये थे, क्या उन्हें भी उसके साथ ताबूत में दफना दिया

जायेगा? और उसकी वैचारिकता का क्या? वे तो नश्वर नहीं। क्या उसे भी दफ़ना दिया जाएगा? क्या उसके शब्द कभी मर सकते? इन तमाम सवालों से जूझती मैं उसके होने या न होने की मृगतृष्णा में लगातार भटकती रही। मरकर भी वो मेरे लिए इतना जीवंत हो गया जो जीते जी कभी नहीं रहा।

गाँव वापस लौटते समय मैंने मन ही मन ये तय कर लिया था कि सौन्नी की यादों के पन्नों को अपने दिल और दिमाग दोनों से निकाल फेंकूंगी। और इन सबसे खुद को उबारकर जीवन की नयी राह पर आगे बढ़ूँगी। लेकिन उसकी मौत के खबर ने एक बार फिर मुझे जिंदगी की उन्हीं राहों पर धकेल दिया। मैं जितना उसकी यादों से दूर भागती रही, वो उतना ही मेरे क़रीब आता रहा। उसे पा लेने की तड़प ने मुझे उद्वेलित कर दिया। उसके अंतिम खत के वे शब्द अचानक एकाकार होने लगे। उसका प्रेम मेरे लिए निश्छल और सच्चा था जीते-जी तो उसे समझ न पाई पर उसकी मौक्त ने सब समझा दिया। उसकी मौत ने मेरे मन के आसियाने को तहस-नहस कर दिया था। उसकी एक झलक पाने की आस उसके चले जाने के गम को फ़ना कर रही थी। काश वो मुझसे एक बार मिल पाता तो मैं उसे बता पाती कि मैं भी उससे कितना प्यार करती थी। उसके सपने मेरे सपने थे। उसकी ख़्वाहिशें मेरी ख्वाहिशें थी। उसका दर्द उसके गम, उसकी खुशी और आँसू सब मेरे थे। कैसे बताऊँ कि उसका चला जाना कितना सालता है। सोचती हूँ तो लगता है, क्या यही वो रहस्यमयी उम्मीदें थी जो मुझे घर तक खींच लाई थी।

अगली सुबह मेरे स्कूल के दिनों की सहेली मेरा हाल-चाल पूछने घर आई। वो जानना चाहती थी कि मैंने नाश्ता किया या नहीं। ''मैंने कहा नहीं।''। तो उने

हँसते हुए कहा, ''यार तुझे तो खुश होना चाहिए कि तेरी शादी उस इन्सान से नहीं हुई वरना आज तू भी पश्चाताप कर रही होती।'' मैं उसे देखती ही रह गई। गुस्से में बिलबिलाते हुए मैंने उसकी पीठ पर कंघी दे मारी। वो चिल्लाते हुए माँ के कमरे में शिकायत करने भागी। उस मूर्ख के कटु वचनों ने मुझे वापस अतीत के उस दौर में धकेल दिया जब मैं और सौन्नी कॉलेज की डिग्री पूरी करने के बाद शादी की योजना बना रहे थे। वो भी क्या दिन थे। हर तरप आज़ादी के गीत गाने वालों की टोली नज़र आती। एक तरह से इसने राष्ट्रीय जोश का रूप ले लिया था। हर गली, हर मुहल्ले में बस एक शोर था आजादी, आजादी और आजादी। शहर तो शहर, छोटे कस्बे और गाँव-देहात के लोग भी बढ़-चढ़कर इसमें हिस्सा ले रहे थे। नागा आज़ादी की माँग हर तरफ़ सुनाई पड़ती। तथाकथित शहरी शिक्षित तबके के लिए इस आंदोलन का मतलब था, एक ऐसे देश की स्थापना जहाँ न असमानता न कोई शोषण और न ही कोई भेदभाव। जहाँ सिर्फ समता और सुशासन का बोलबाला हो। शुरू-शुरू में तो सब ठीक रहा। आंदोलन ने इतना जोर नहीं पकड़ा था। पर सरकारी अमलें की इसे तोड़ने की नाकामयाब कोशिश ने आग में घी डालने का काम किया। और तब इसने और हिंसक रूप ले लिया। गांव के गांव इसकी चपेट में आ गये। राज्य के कोने-कोने तक इस आंदोलन ने अपने पैर फैला लिये। झुंड-के-झुंड लोग कैम्पों में इकट्ठा होने लगे। अलग-अलग गुटों में बँटने से इस आंदोलन को और हवा मिली। काम-काज छोड़ लोग इस लड़ाई को खाद-पानी देने में लग गये। सरकार की ओर से भी जबाबी कारवाई होने लगी। दोनों ओर के लोग मौत के घाट उतारे जाने लगे। परिवार के परिवार अलग हो

गये। महिलाओं के साथ बलात्कार कर उन्हें मौत के घाट उतारा जाने लगा। घर के मर्दों के सामने ही औरतों का बलात्कार किया जाने लगा और वे चुपचाप देखतेया यूँ कहें उन्हें क्रूरता से इन कुकृत्यों को देखने के लिए मज़बूर किया जाता। जो देखने से इंकार करते उन्हें तत्काल मौत के घाट उतार दिया जाता। पता नहीं बलात्कार की घटनाओं में कितनी सच्चाई थी पर ये अफवाहें शहरों में ज्यादा तेज़ी से फैली। छात्रों और शहरी युवाओं पर इसका सबसे ज्यादा प्रभाव पड़ा। युवाओं में विरोध के स्वर तेज हो गये। उनके भीतर प्रतिशोध की आग धधकने लगी थी। इन तमाम घटनाओ ने हमारे शादी के मंसूबों पर पानी फेर दिया। आंदोलन में सौन्नी की सक्रिय भूमिका और शहर में हो रही हलचलों ने हमें विचलित कर दिया था। शादी के जिस उत्साह से सौन्नी लबरेज था अब वो काफूर हो चुका था। नागा आंदोलन की आँच उसे पूरी तरह जला चुकी थी। ऐसी परिस्थिति में शादी के लिए उस पर दबाव देना ठीक नहीं था।

अगली सुबह मेरी बहन वो अखबार उठा लाई जिसमें बड़े-बड़े कैप्शन में सौन्नी की हत्या की खबर के साथ उसके क्षत-विक्षत चेहरे की तस्वीर भी छुपी थी। कभी सुंदर और आकर्षक रहे इस नौजवान की ऐसी मर्माहत तस्वीर मुझसे देखी नहीं गई। मैंने धीरे वो पृष्ठ खिसका दिया और दूसरी खबरें पढ़ने लगी। हर जगह कुल मिलाकर वही खबरें छपी थी। एक रिपोर्टर ने तो हद ही कर दी। खबर को मसालेदार बनाने के चक्कर में उसने लिख डाला, ''मारे गये कार्यकर्त्ता की पूर्व दोस्त अभी इसी शहर में मौजूद है। शायद वो इस हत्याकांड पर ज्यादा प्रकाश डाल सके।''

मुझे रिपोर्टर का इशारा बखूबी समझ आ रहा था। पत्रकार होने की हैसियत से मुझे पता था कि वो रिपोर्टर मेरे ज़रिये सनसनी फैलाकर अपने अखबार का सर्कुलेशन बढ़ाना चाहता था। एक वक्त था जब इन्हीं अख़बारी लोगों ने मेरे और सौन्नी के संबंधों के बारे में क्या-क्या वाहियात खबरें नहीं छापी थी। हमारे पवित्र रिश्ते पर कीचड़ उछाला गया था। हमें कलंकित किया गया था। आज वही लोग मेरा इंटरव्यू लेना चाहते थे। सिर्फ इसलिए न कि उन्हें अपना अख़बार बेचना था। छि: कितने धुर्त्त और संवेदनहीन है ये लोग। मेरा मन कड़वाहट से भर गया।

मैंने तय कर रखा था कि किसी भी कीमत पर सौन्नी के फ्यूनरल में नहीं जाऊंगी पर अखबार की उस खबर से मेरा निर्णय एकाएक बदल गया। मैंने स्वयं को संयत किया। चेहरे से मायूसी और दुख को दूर किये बगैर ऐसा कतई संभव न था। मुझे अब मजबूत बनना होगा, ऐसा सोचकर पहले मन को हल्का किया और नहा-धोकर एक अच्छी सी चमकीली ड्रेस पहन कर खाने की मेज पर बैठ गई। माँ ने मुझे देखकर अपनी नजरें फेर ली, पिताजी ने औपचारिकतावश सिर हिलाया पर बहनें मुझे लगातार घूरती रहीं। मेरी सहजता से वे असहज थी। महसूस कर रही थी। तभी सामने के दरवाजे से भइया और भाभी ने प्रवेश किया। मुझे इस कदर शांत और चुप देखकर वे हैरान थे। पर उन्होंने अपनी कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। बच्चे बीच-बीच में धमाचौकड़ी कर ध्यान भंग कर रहे थे इसलिए माँ ने उन्हें पड़ोस के बच्चों के साथ खेलने भेज दिया। यूनिवर्सिटी के कुछ पुराने दोस्त मुझसे मिलने आये थे। उनके साथ काफी वक्त कट गया। इस दौरान मैं शांत और स्थिर बने रहने की भरसक कोशिश करती रही। शाम पाँच बचे तक वापस सभी लौट गये थे।

माँ ने भाभी को रसोई में हाथ बँटाने के लिए भीतर बुला लिया था। मैं लगभग खाली था। मुझे अकेला पाकर भईया ने बाहर तक घूम आने का आग्रह किया। मैं उनके इस अनुरोध से हैरान थी। मन बिल्कुल मानने को तैयार नहीं था कि ये वही भईया है जिन्होंने सौन्नी के साथ मेरे रिश्तों को लेकर कभी सीधे मुँह मुझसे बात नहीं की। मुझे कुलक्षिणी, कुलटा और न जाने क्या-क्या संबोधनों ने संबोधित करते रहे। दरअसल वे मुझसे कुछ ज़रूरी बात करना चाहते थे इसलिए उन्होंने विशेष तौर पर बाहर चलने का आग्रह किया था। घूमते-घूमते जब हम घर से काफ़ी दूर निकल आये तब उन्होंने मुझे एक लिफ़ाफा पकड़ाया। मैं अचकचा गई। मैंने एकदम से लिफाफा नहीं पकड़ा और पूछ बैठी, ''क्या है इसमें? थोड़ी देर तक वे निर्विकार भाव से मेरी ओर देखते रहे फिर अचानक भावुक होते हुए मुझे गले लगा लिया और भर्रायी आवाज में बोले, ''हो सके तो मुझे माफ कर देना मेरी बहन।'' इतना कहकर वो आगे बढ़ गये। लिफाफे को सीने से चिपकाये मैं अंधेरा घिरने तक वहीं इधर-उधर भटकती रही।

घर पहुँचकर सीधे अपने कमरे में जाकर लिफाफा फाड़ा और उसे पढ़ने बैठी। भीतर सोनी का हस्ताक्षर किया एक छोटा सा नोट और फ्लॉपी निकला। उसकी हालात देखकर लगा मानो इसे सालों पहले भेजा गया था। मैं पत्र पढ़कर स्तब्ध थी। वो उसमें खत नहीं उसके दिल का टुकड़ा था मानो। खत में एक जगह उसने मेरी इस हालत के लिए खुद को जिम्मेदार मानते हुए लिखा था कि वो अपने सीने पर एक बोझ महसूस कर रहा है और इस बोझ के साथ मरना नहीं चाहता है। पूरे खत को पढ़ा तो पता चला वो कोई साधारण फ्लॉपी नहीं थी। उसमें

आंदोलन का पूरा सच छुपा था। वो किसी तरह उस सच को दुनियाँ के सामने लाना चाहता था। और मेरे ज़रिये उसे अख़बार में छपवाना चाहता था। पूरे पत्र में आंदोलन की सच्चाई को विस्तार से बयान किया गया था। जिसकी ज़द में कहीं बड़े-बड़े नामों के खुलासे थे तो कहीं भीतर घात और षडयंत्र की पोल खोली। खत के अंत में कुछ यूँ लिखा था '' मेरी प्रियतमा, मुझे पता है ये कितना खतरनाक काम है? लेकिन तुम्हारे सिवा किसी और विश्वास नहीं कर सकता था। इसलिए पूरे भरोसे के साथ ये सीडी तुम्हें सौंप रहा हूं। उम्मीद है तुम इसे अपने मुकाम तक जरूर पहुँचाओगी।'' नीचे उसके दस्तखत के साथ ही लिखा था, हमेशा से ''तुम्हारा और केवल तुम्हारा सौन्नी।''

सानिध्य और प्रेम की कैसी सहज स्वीकारोक्ति थी वो दो छोटे शब्द, 'हमेशा से'। मैंने उन शब्दों को होठों से लगा कर चूम लिया और फूट-फूट कर रो पड़ी।

सुबह थोड़ा हल्का महसूस कर रही थी। देर रात तक अपने बैग में जरूरी चीज़ें मरती रही क्योंकि परिवार में किसी को बताये बगैर मुँह अंधेरे निकलने की योजना बनाई थी। पत्र और फ्लॉपी को बैग के भीतर सहेजने की नाकामयाब कोशिश के बाद अंततः उन्हें बाहर ही थैले में रख लिया। हवाई जहाज की वापसी की टिकट भी कुछ घंटों के लिए वैध थी। घर से एयरपोर्ट तीन घंटे की दूरी पर था। सुबह-सुबह निकलकर वक्त पर एयरपोर्ट पहुँचा जा सकता था। अब सबसे बड़ी समस्या थी एयरपोर्ट तक पहुँचने का साधन ढूँढना। मैंने टेलिफोन डायरी से अपने एक पुराने मित्र का नम्बर ढूंढा जो आजकल ट्रांसपोर्ट के धंधे में लगा था।

हालांकि सालों से मेरी उससे बात कोई नहीं हुई थी। फिर भी मैंने उसे फोन मिलाया। किसी बच्चे ने फोन उठाया था, उसने कहा, ''पापा अभी घर पर नहीं हैं। किसी के फ्यूनरल में गये हैं।'' दो घंटे बाद दोबारा बात करने पर मित्र से बात हो गई। मैंने अपना नाम न लेने के अनुरोध पर उसे अगली सुबह एयरपोर्ट चलने का आग्रह किया। पहले तो उसने थोड़ी आनाकानी की क्योंकि उसे सौन्नी के फ्यूनरल में जाना था। पर मेरे जोर देने पर वह अपना टैक्सी लेकर आने को तैयार हो गया। उसने कहा, ''ओके, ठीक, चार बजे घर के सामने वाले नुक्कड़ पर तैयार रहना। उसने ये भी पूछा कि मेरी इस यात्रा के बारे में किसी को पता है कि नहीं? मैंने कहा,, 'नहीं'। तब उसने गहरी साँस ली और फोन रख दिया।

इधर जाने से पहले वाली शाम को परिवार के साथ बैठकर आस-पड़ोस का हालचाल लेती रही। थोड़ा बहुत बात करने लेने के बाद बाबा खड़े होते हुए बोले, ''चलो अब सोने चलते हैं। मैं बहुत थक गया हूँ।'' माँ भी जाते-जाते बोल गयी, ''बेटा तुम जो भी सोचती हो, करती हो, मुझसे कुछ भी छुपा नहीं। मुझे सब पता है।'' माँ की बातें विचित्र लगी पर मैंने नजरअंदाज़ करते हुए उन्हें शुभरात्रि कहा और कमरे में जाकर फ्लॉपी छुपाने की माकूल जगह ढूँढने लगी। मेहनत सफल हुई। अंततः उसे अपने सैनिटरी नैपकीन के पैकेट में छुपाने में कामयाब हो गई और खत को एहतियात से अपने ब्रेसियर में नीचे छुपा लिया। मेरे पास सौन्नी की ये अंतिम अमानत थी। जाने की तैयारी लगभग पुरी हो चुकी थी।

पहली बार ऐसा था, जब माँ-बाबा से बिना कुछ बोले जा रही थी इसलिए एक छोटा-सा माफ़ीनामा लिख उनके टेबल पर रख दिया। नोट का मजमून कुछ

इस तरह था, ''आदरणीय माँ-पिताजी! आप सबको बिना बताये जा रही हूँ। इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। पर आपको तो पता है न, इसके पीछे किसी अच्छे कार्य का ही प्रयोजन है।

सारी रात आँखों में कटी। भावनाओं का आवेग कभी इतना तेज़ होता कि लगता चीख चीख कर सारी दुनियाँ को बताऊं कि सौन्नी मेरा था और हमेशा मेरा रहेगा। पर मन को दबा लेती। मसोसकर रह जाती। घर में किसी को भी ये जमाना नहीं चाहती थी कि सौन्नी के चले जाने का गम मुझ पर हावी है। मैंने घर वालों को लगे की मैं दुखी और टूटी हुई हूँ इसलिए सहज रहने की कोकशिश करती रही।

सौन्नी की शादी की खबर सुन जैसी घृणा का भाव मेरे मन में उत्पन्न हुआ था ठीक वैसा ही भाव अभी उसकी मौत की खबर से हुआ। पर इस बार घृणा के ये भाव अस्थायी थे। ज्यादा देर नहीं टिके। उस वक्त उसके, मुझे तन्हा छोड़ के चले जाने के गुस्से और खीझ ने मुझे इतना कठोर और निर्मम बना दिया था कि मैं संवेदनाशून्य हो गई थी। एकाकीपन और अवसाद के गहरे घने बादल ने उसके प्रेम की उदात्त भावनाओं को ढँक दिया था।

पौ फटने से पहले-पहले मैं बैग के साथ नियम स्थान पर पहुँच गई। वो आदमी वहाँ पहले से ही मेरा इंतजार कर रहा था। जाहिर है वो सिर्फ गुडबाय कहने आया था, क्योंकि उसे सौन्नी के फ्यूनरल में जाना था इसलिए वो थोड़ी जल्दी में था। उसने किसी दूसरे ड्राइवर का पहले से ही इंतज़ाम कर दिया था। वो थोड़ा घबराया हुआ भी दिख रहा था। कुछ तो ऐसा था जो वो मुझसे छुपाना

चाहता था। जाते समय उसने कान में फुसफुसाकर कहा, ''सौन्नी ने चाहे जो भी तुम्हें करने को कहा हो सके तो हमारे लिए तुम ऐसा मत करना।'' और फिर अपनी कार में बैठ कर रवाना हो गया।

उसके जाने के बाद मैंने सोचा कि उसे कैसे पता चला कि सौन्नी ने मुझे क्या देने को कहा है? और ये भी कि ''प्लीज हमारे लिए ऐसा मत करना।'' मेरा दिमाग घूम गया। इस पूरी घटना के तार कहाँ-कहाँ से जुड़े थे? और कौन कौन से लोग इसमें शामिल है? सोचकर मैं सन्न रह गई। घर से लेकर बाहर तक इसको सिरे षडयंत्र की तार से जुड़े थे। एक तरफ़ मेरा मित्र तो दूसरी तरफ मेरी माँ थी। जिसे पहले से ही सारी बातों का इल्म थी। उस रात धूर्त माँ की बेचैनी को याद कर मुझे ये पक्का यकीन हो गया कि ये महिलाओं का कोई बड़ा संगठन था जिनके नेटवर्क आपस में जुड़े थे। हकीकत समझते मुझे देर न लगी। मेरे पैरों तले ज़मीन खिसक गई थी। मैं फूट-फूटकर रो पड़ी।

❐❐❐

2.8 उड़ान

दूर फैले बंदगोभी की हरी-भरी क्यारियों के बीच पहली बार मेरी धड़कनों ने ज़िंदगी की नई रफ़्तार पकड़ी। वो चौड़े-विशाल खेत नहीं, ऐसा लगता था मानो सारा आकाश हरे परिधान में ज़मीं पर उतर आया हो। जहाँ तक नजर जाती बस हरियाली ही हरियाली। धानी चुनर ओढ़े इन खेतों के किनारे लगे फूलों की क्यारियों से दृश्य और भी सुंदर और मनमोहक प्रतीत होता। मानों धरा ने अपने हिस्से की सारी खूबसूरती यहीं बिखेर दी हो और उस खुबसूरती से जमीं के ज़र्रे-ज़र्रे ने अपना श्रृंगार कर लिया हो। रंगबिरंगे फूलों वाली हरी ज़ड़ीदार गोटे में धरा का अंग-अंग निखर आया था। कितना अद्‌भूत! कितना सुंदर! प्रकृति की इस नायाब, बेशक़ीमती आँचल तले मेरी साँसों का रफ़्ता-रफ़्ता बढ़ना किसी वरदान से कम था क्या?

फूलों के इन्हीं कतारों के आस-पास किसी हरे-भरे तल पत्र ने मेरी साँसों को थाम रखा था। मैं यहां कब और कैसे पहुंची? इसका तो इल्म नहीं पर हाँ ये ज़रूर सुना था कि कभी इन्हीं वादियों से गुजरते हुए मेरी माँ मुझे यहाँ छोड़ गई थी। सूक्ष्म बीज-कणिका से निकल, इन बड़े डैनेवाले पत्तों के झुरमुटों के साथ खेलती खेलती, जाने कब बड़ी हो गयी, पता हीं न चला।

भोर की पहली किरण के साथ जब रोशनी ने चारों ओर अपना डेरा ज़मा लिया और पक्षियों का कलरव व पत्तों की सरसराहटें हवा के साथ बहकर और तेज़ हो गई तो खेतों की मेड़ के पास सहसा कुछ हलचल हुई। धीरे-धीरे कदमों की वो आहटें और पास आने लगी। तभी यकायक एक आवाज़ आई, अहा! ई...ई..

.हे...हे... कैटरपिलर...कैटरपिलर। इसके साथ ही हवा में कई आवाज़ें एक साथ तैर गई। उनमें से कुछ बच्चों की थी तो शायद कुछ बड़ों की। उन आवाज़ों को पीछे धकेलती एक नन्हीं आवाज आई....ए...ई...ईह... कितना गंदा और घिनौना है ये? प्रतिवाद में फिर वही आवाज उभरी। अहा! कितना सुंदर है! देखो न माँ! देखो न प्लीज। क्या मैं इसे अपने पास रख लूँ। आवाज में थोड़ा मनुहार तो, थोड़ा अनुरोध का पुट भी था। माँ आपको इससे कोई परेशानी तो नहीं होगी। मैं इसे अपने कमरे में, जूते के बक्से में संभालकर रखूँगा। आपसे वादा करता हूँ ये आपको कभी परेशान नहीं करेगा।

साँसे थामे मैं उनकी गुफ्तगूँ सुन रही थी। भीतर से डर भी लग रहा था, कहीं ये मुझे चोट तो पहुंचाने नहीं आये हैं? मन में तरह-तरह के सवाल उमड़-घुमड़ रहे थे। मुझे कहाँ ले जाया जायेगा? ये लोग मेरे साथ क्या करने वाले हैं? इन अजनबियों ने मुझे क्यों घेर रखा है? कहीं ये मेरे जीवन का आखरी दिन तो नहीं होगा,? इन तमाम आशंकाओं से मन बड़ा डरा हुआ था। तभी एक पुरुष आवाज ने मेरी तंद्रा भंग की। हाँ जॉनी, मेरे प्यारे बच्चे! तुम इसे अपने पास रख सकते हो। अपनी पलंग के किनारे वाले ड्रेसर पर इसके रहने का इंतज़ाम कर लो। पर हाँ ये याद रखना! अगर इसकी वजह से घर में कोई भी परेशानी हुई तो इसके जिम्मेदार सिर्फ और सिर्फ तुम होंगे। समझे।

हे...हे...हे... शुक्रिया पापा! लड़का खुशी से चिल्लाया। खुशी के मारे उसके पांव जमीं पे नहीं टिक रहे थे। तभी उन कई हाथों में से किसी एक हाथ ने आगे बढ़कर बंदगोभी के उस पत्ते को तोड़कर लड़के को थमा दिया, जिस पर मैं बैठी

थी। लड़के ने डरते-डरते अपने नन्हें कोमल हाथों से मुझे थाम लिया। घर पहुंच कर मुझे थामे वो सीधे अपने कमरे में पहुंचा। भीतर से दरवाजा बंद करने की आवाज़ आई। इसके साथ ही मुझे पलंग पर रखकर, घंटों चीजों को उलटने पलटने का सिलसिला चलता रहा। पता नहीं वो क्या ढूंढ रहा था? कभी कागज़ के पन्नों का फाड़ता और बिखेड़ता तो कभी कपड़ों की कतरनें डब्बे में ठूंसता। चीजों को उल्टने पलटने और बिखेरने का ये सिलसिला काफ़ी देर तक चलता रहा। करीब घंटे भर बाद जब सबकुछ थमा तो जॉनी खुशी से चिल्लाया। मिल गया, मिल गया। उसके चेहरे की खुशी ये बयाँ कर रही थी कि उसे दुनियां का बड़ा खज़ाना हाथ लग गया है।

मैं हैरान थी। आखिर उसे ऐसा क्या मिल गया था? जिससे वो इतना खुश था। जब उसने मुझे धीरे से एक नर्म मुलायम मखमली गद्दे चीज पर उठाकर डाल दिया तब जाके लगा कि शायद यही वो चीज़ है जिसे जॉनी घंटों से ढूंढ रहा था। इसके बाद तो जैसे वो किसी दूसरे ही मिशन पर लग गया। रंग-बिरंगे कागज़ों की कतरने काटता रहा। कभी उन्हे डब्बे के भीतर डालता तो कभी उन्हें निकालता। खाये-पिये बगैर पूरी तन्मयता से लगातार इसी काम में लगा रहा। इस दौरान मैं बहुत बेचैन रहा। मैं समझ नहीं पा रहा था कि आखिर वो इतना परेशान क्यों था? अंत में उसने मेरे कानों में फुसफुसाकर कहा, ''चलो दोस्त, काम बन गया।'' सुनकर मैंने चैन की सांस ली। चलो अब तो उसकी बेचैनी का सिलसिला थमा।

अचानक मुझे किसी अंधेरी जगह पर पहुंचा दिया जाता है। मैं घबरा उठी। उपर देखा तो जॉनी सिर झुकाये अलविदा वाले भंगिमा में कह रहा था, ''अब सो जाओ मेरे प्यार ड्रैगन। रात बहुत हो गई है चलो कल सुबह मिलते हैं।''

इतना कहते ही बक्से का मुँह बंद हो जाता है। मैं घबरा उठी। पूरी जिंदगी मैंने कभी इतना अंधेरा नहीं देखा था। धप्प अंधेरे में बैठा, मैं रोशनी की राह तलाशती रही। बयाँ नहीं कर सकती, उस क्षण मैं कैसा महसूस कर रही थी। अँधेरी दीवारों से टकराकर हर बार मैं अपनी जगह लौट आता। रोशनी के एक क़तरे-क़तरे के लिए मन तरस गयी थी। उजाले और खुले में बिताये मुझे अपने पुराने दिन याद आ रहे थे। उजाले से उस चमकदार दुनियाँ से अंधेरे की यह काली-स्याह दुनियां कितनी अलग और कितनी अजीब थी? कितनी घुटन थी यहाँ? साँस भी ठीक से नहीं ले पा रही थी मैं। सुबह सब कुछ ठीक हो जाने की आस में जैसे-तैसे रात काट ली। पर अगले दिन भी मेरी इस हालत में कोई खास सुधार नहीं हुआ। दिन-हफ़्ते और महीने, हर बीतते वक्त के साथ अंधेरे का साम्राज्य और फैलता गया। अब तो जैसे ये रोज़ का ही सिलसिला हो गया था। रोज़ सुबह कुछ मिनटों के लिए बक्से का ढ़क्कन खोला जाता और पहले की तरह उसे बंद कर दिया जाता। समय के साथ अंधेरे के साथ मेरी ये लड़ाई और लंबी हो गई। दिन-ब-दिन मैं अंधेरे की अतल गहराइयों में धंसता गया। कभी-कभी तो उजाले की एक झलक पाये बगैर पूरा दिन बीत जाता। उफ! कितने नीरस और एकाकी दिन थे वो? आज भी वो लम्हें याद कर मन सिहर उठता है।

बक्से के भीतर की उमस से भरी ये अँधेरी दुनियाँ मेरी जिंदगी का हिस्सा बन गये थे। अंधेरे की इन गहरी अट्टालिकाओं ने वक्त की चाल जैसे धीमी कर दी थी। समय काटे न कटते। इधर जॉनी कुछ दिनों से ज़्यादा ही सोने लगा था। पता नहीं उसे क्या हो गया था? थुलथुला और आलसी भी हो गया था आजकल। अब उसका मेरे साथ पहले जैसा लगाव न रहा। पहले मुझसे मिले बगैर सोता नहीं था अब गुडनाइट विश किये बगैर ही बिस्तर में दुबक जाता। कभी मिलता, कभी

भूल जाता। ऐसा लग रहा था जैसे मुझसे जुड़े मोह के सारे धागे तोड़ लिये थे उसने। हरदम खींचा-खींचा सा रहता। मुझे बड़ा दुख होता। जानी से ऐसे व्यवहार की कभी उम्मीद न की थी मैंने। मुझे खीझ आती। मैं सोचता शायद अब मैं उसका प्यारा दोस्त न रहा। उपर वाले ने अगर शब्द दिये होते तो शायद पूछ भी लेता। पर सब कुछ देख सुनकर भी विवश था।

एक शाम, जॉनी जब अपने कमरे में गहरी नींद सो रहा था। उसकी पलंग के ठीक पास कुछ कदमों की आहटें सुनाई पड़ी। कुछेक पैरों का घिसटना और चंद शब्दों का हवा में तैरना। मेरे कान खड़े हो गये। किसी औरत की साड़ी की फड़फड़ाहट भी सुनी, शायद सिल्क की कोई साड़ी रही होगी। एक और मर्द के बीच हो रही गुफ्तगूँ से मैं चौकन्ना हो गया। पुरुष आवाज़ शायद जॉनी के पिता की रही होगी और स्त्री आवाज माँ की।

एकाएक बक्से का मुँह खुला और आवाज आई, ''गौर से देखो इस ड्रैगन को।'' इतना सुनते ही औरत सिसकने लगी। पुरुष आवाज दोबारा उभरी, ''चुप हो जाओ।'' तुम्हें तो मजबूत होना चाहिए, तुम उल्टे भावुक हो रही हो।'' इतना कहते ही एक बार फिर बक्से का मुँह झट से बंद हो गया और चारों ओर गहरा काला अंधेरा छा गया। फिर एक-एक कर उन पदध्वनियों के वापस लौटने की आवाज एक बार फिर सब कुछ पहले जैसा मैं और काली स्याह राह साथ-साथ।

वक़्त की मद्धम रफ़्तार के साथ-साथ मेरा शरीर भी बदल रहा था। शारीरिक और मानसिक बदलाव के एक अज़ीब दौर से गुजर रही थी मैं। किसी अन्जाने भार से दबा-दबा महसूस किया करती।

ना पहले जैसी कोमलता रही और ना स्फूर्ति। हर-पल थका-थका सा महसूस करती। मैं अपने पुराने जीवन में लौट जाने की इच्छा हर पल जोर मारने लगी।

भीतर और बाहर की इन उलझनों और झंझावातों के बीच एक दिन कुछ ऐसा हुआ जिसने घर के सभी सदस्यों को हिलाकर रख दिया। एक दिन अचानक घर में शोर-गुल तेज हो गया। लोग बद्हवासी के आलम में इधर-उधर भाग रहे थे और साथ में चिल्ला भी रहे थे- जल्दी करो, सावधानी से, संभलकर आदि आदि। अफरातफ़री के इस आलम में जॉनी की आवाज ने मुझे चौंका दिया। वो चिल्ला रहा था, ''मुझे मेरा ड्रैगन चाहिए। कोई मेरा ड्रैगन दे दो प्लीज।'' इस घटना ने मेरी दुनियाँ को अस्थिर कर दिया था। मैंने अंदाजा लगाया शायद कोई भूकंप आया होगा। अगली सुबह तक सबकुछ बदल चुका था। यहाँ तक की जगह भी।एक अन्जाने बदबूदार कमरे में मुझे फेंक दिया गया था। बच्चे अभी तक दर्द से चीख और कराह रहे थे। पता नहीं मैं कब से वहां पड़ा था पर इतना जरूर पता था, जब तक मैं वहां रहा, जॉनी मेरे साथ-साथ बना रहा। कभी-कभार उसके माता-पिता कमरे में आते। घर के लोगों की कराहें, और तकलीफें, सिसकियों में तब्दील हो चुकी थी। सबकुछ सामान्य होने में लंबा वक्त लगा।

जॉनी अब बीमार रहने लगा था। देखते-देखते ही वह एकदम कमज़ोर और पीला पड़ गया। मुझसे मिले भी उसे काफ़ी दिन हो गये। एक दिन सोते-सोते जब जब उसकी सांसें उपर नीचे होने लगी तो किसी अनहोनी की आशंका से मैं भीतर तक काँप गया। पर थोड़ी देर बाद उसकी लौटती सांसों से मेरी जान में जान आई।

होश आते ही उसने सबसे पहले अपना ड्रैगन माँगा। शायद बीमारी की वजह से शायद वो बहुत दिनों से मुझसे मिला नहीं था।

जॉनी की आवाज सुनते ही उसकी बहन ने बड़े प्यार से बक्से का ढक्कन ऊपर उठाया। भीतर देखते ही खुशी से नाच उठी। चिल्लाते हुए बोली, ''जॉनी जरा देखो तो सही तुम्हारा नन्हा ड्रैगन अब कितनी सुंदर तितली बन गयी है।'' जॉनी ने अनमने ढंग से डब्बे के भीतर झांक कर देखा। भीतर देखते ही उसका चेहरा घृणा और खिन्नता से भर उठा। छूटते ही बोला, ऊंह! ये मेरा प्यारा ड्रैगन नहीं। ये तो तितली है। मेरे प्यारे ड्रैगन ये तुम्हें क्या हो गया? तुम कितने गंदे और अजीब लग रहे हो? यह कहते हुए उसने झट से डब्बे का मुंह बंद कर दिया और चुपचाप धीरे से पलंग पर लेट गया। जॉनी में अब पहले जैसी बात नहीं रही। अब मुझे देखते ही मुँह फेर लेता। एक दिन उसकी बहन ने उत्सुकतावश डब्बे का मुँह खोल दिया। डरते-डरते आहिस्ता से मैंने अपने पंखों को फड़फड़ाया। नन्हें कदमों की जगह मजबूत पैरों की आजमाइश के लिए थोड़ी बहुत चहलकदमी की और एक नये जोश के साथ मुहाने पर आ उठ बैठी। नयी उड़ान का खुशनुमा सा ये एहसास मुझे भीतर तक रोमांचित कर रहा था। झरोख़े पर बैठी मैं एक ऐसी दुनियां देख रही थी जहां चारों ओर रोशनी ही रोशनी बिखरी थी। सालों बाद मैं खुली हवा में सांस ले पा रही थी। जॉनी की उस फ़टे-पुराने चीथड़ों वाली अंधेरी दुनियां से ये दुनियाँ अनोखी और अलहदा दुनियां थी।

जॉनी की बहन मुझे पकड़ने जैसे ही आगे बढ़ी मैं उड़कर दूर खंभे पर जा बैठी। फ़ेफ़ड़ों में ताजी हवा भर, अनंत ब्रह्मांड मापने को तैयार मेरा मन बल्लियों उछल रहा था। ऐसा जोश और जुनून मैंने पहले कभी महसूस नहीं किया।

अद्‌भूत, रोमांचकारी, अनंत उड़ान के इन खूबसूरत पलों को अपनी सांसों में भरने ही वाली थी कि अंतर्मन से आवाज आई, ''रूक जाओ।'' तुम्हारे बाद जॉनी का क्या होगा? क्या तुम उसे ऐसे ही अकेले छोड़कर चली जाओ? एक पल के लिए मेरे कदम वहीं ठिठक गये। मैंने पीछे मुड़कर सोते हुए जॉनी पर नज़र डाली। उसकी निरीह कातर आंखें रूकने पर विवश कर रही थी। पर मुझे पता था, एक न एक दिन मुझे उसकी इस बनावटी दुनियां को छोड़कर जाना ही है। तो क्यों न दर्द से भरी इस दुनियां को अभी ही अलविदा कह दूं। मैंने अपना दिल मज़बूत किया। पलटकर एक बार फिर जॉनी के मुरझाये चेहरे को देखा। पर मेरा संकल्प उन निरीह, कातर आंखों से कहीं ज्यादा दृढ़ और मज़बूत था। मैं अब एक पल भी और वहां नहीं रूक सकती थी। रूकती तो शायद वो कातर, निरिह आंखें मुझे एक बार फिर अपने मोहपाश में बांध लेती। उन आँखों को बिना देखे मैं उड़ चली उस खुले गगन में जो आशाओं और आकांक्षाओं के सितारों से जड़ी थी।

अचानक भीतर से आवाज आई, उड़ो कि ये दुनियाँ तुम्हारी है। बढ़ो कि ये हवा, रोशनी, सितारे, नदियाँ, पहाड़ और झरने सब तुम्हारा है। चमन का जर्रा-जर्रा तुम्हारा बाँहें फैलाये तुम्हारा मुस्तकबिल कर रहा है...बढ़ो और भर लो इन्हें अपने पाश में कि ये अब तुम्हारे हैं।

❐❐❐

तृतीय अध्याय

टेमसुला आओ के अंग्रेजी कहानी संग्रह ''लाबरनुम फॉर माई हेड'' का भाषिक विश्लेषण

अध्याय-तीन

टेमसुला आओ के अंग्रेजी कहानी संग्रह ''लाबरनुम फॉर माई हेड'' का भाषिक विश्लेषण

अनुवाद के संदर्भ में भाषा विश्लेषण के दो प्रमुख संप्रदाय माने जाते हैं-(1) संरचनावादी संप्रदाय और (2) अर्थवादी संप्रदाय। संरचनावादी संप्रदाय मूल भाषा की कृति की बाह्य संरचना को आधार मानता है। इसके मतानुसार कई आभ्यंतर आधार-संरचनाओं का रूपांतरित परिणाम सतही संरचना ही है। अनुवाद करने से पहले किसी भी अभिव्यक्ति का विखंडन मूल संरचनाओं में कर लेना जरूरी है।

भाषा के सतही संरचना के अनुसार किसी संदेश की अभिव्यक्ति अपने-आप में पूर्ण होती है और उसको समझने तथा दूसरी भाषा में अंतरण करने के लिए संरचनात्मक विश्लेषण की आवश्यकता पड़ सकती है। इसमें वाक्य को संरचनात्मक दृष्टि से खंडों, उपखंडों आदि की श्रृंखला में बाँट दिया जाता है और अनुवादक का यह पहला प्रयास रहता है कि वह बड़ी से बड़ी शृंखला के स्तर पर अनुवाद करने का प्रयास करे। जहाँ उसे अनुवाद प्रक्रिया में कठिनाई हो, वहाँ वह उपखंडों के स्तर पर उतर कर दूसरी भाषा में अंतरण कर सकता है। भाषिक अंतरण करते समय वह दूसरी भाषा में निकटतम और स्वीकार्य अथवा मान्य समतुल्य ढूंढा जाना चाहिए। इस मान्यता पर आधारित अनुवाद-प्रक्रिया में निकटतम पाठगत समतुल्य खोजने का प्रयास किया जाता है। इसमें अनुवाद की संकल्पना को अंततः व्यावहारिक रूप दिया जाता है उसके लिए भाषा के सतही स्तर पर अंतरा

की प्रक्रिया का प्रयोग करने से यह काम अधिक सरल हो जाता है। इसमें समतुल्य ढूंढा जाता है, उसे निर्दिष्ट पाठ में दी गई भाषायी सूचना के आधार पर लगभग पूर्णरूप से दूसरी भाषा में प्रकट किया जा सकता है।

इसमें संदेह नहीं कि यदि लक्ष्य केवल एक भाषा में निहित सूचनाओं को दूसरी भाषा में केवल काम चलाऊ रूप से स्थानापन्न कर देता है तो वह विधि काफी हद तक सफल हो सकती है, किंतु ज्यों हीं भाषा की निहित जटिलता और अर्थ की गहराई बढ़ती जाती है त्यों ही वह विधि उतनी सीमा तक सार्थक सिद्ध नहीं हो पाती। और इसमें अन्य सूचनाएं नहीं मिल पाती। भाषा की संरचना, उसके अंग-उपांग के परस्पर संबंधों की व्यवस्था और उसमें निहित सूचना-तत्वों का निर्धारण भी उतना ही आवश्यक बन जाता है। अनुवाद के भाषायी अध्ययन में भाषा की संरचना का अर्थ निर्धारित करना होता है और निर्दिष्ट संरचना का अर्थ उस सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्यमें जानना जरूरी हो जाता है।

कथ्य (वाच्य) और अभिव्यक्ति (वाचक) भाषा के महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं तथा वाक् (exphasia) एवं लिखित भाषा में इन दोनों का परस्पर अटूट संबंध होता है। भाषिक व्यवस्था इन संबंधों की प्रकृति निर्धारित करती है। कथ्य का संबंध अर्थ से और अभिव्यक्ति का ध्वनि एवं लिपि से होता है। इन दोनों संबंधों का संबंध प्रमुखत: वाक्य विन्यास से होता है। कथ्य, जो कि कथन का विषय है और अभिव्यक्ति, जो इस विषय को साकार रूप देती है, भाव की दृष्टि से एक-दूसरे से जुड़े होते हैं। यहाँ यह कहने की आवश्यकता नहीं कि अभिव्यक्ति शब्दों के माध्यम से ही कथ्य को साकार करती है। हर शब्द का एक अर्थ होता

है और उसमें कोई न कोई भाव निहित होता है, परंतु शब्द-प्रयोग अर्थ पर आधारित होता है।

बोलचाल की भाषा स्वनिमों की व्यवस्था होती है। लिखित भाषा में ध्वनि प्रतीक ही इन स्वनिमों का प्रतिनिधित्व करते हैं और इन्हें ही वर्ण कहा जाता है। वर्ण जब अकेले ही अथवा किसी स्वर या अन्य व्यंजन के साथ एक ही स्वर में बोला जा सके, तो वह अक्षर का रूप धारण करता है। फिर एक या एक से अधिक अक्षर धातु को रूपायित करते हैं और धातु से शब्दों का जन्म होता है। उपसर्ग एवं प्रत्यय शब्द के साथ मिलकर अन्य भिन्नार्थी शब्दों का निर्माण करते हैं। शब्द स्तर तक की इस विकास प्रक्रिया के बाद वाक्य का निर्माण आरंभ होता है। वाक्य में जब शब्द व्याकरणिक संबंधों के साथ प्रयुक्त होता है तो वह पद कहलाता है। ऐसे एक या अनेक पदों से पदबंध (यथा कर्ता पदबंध, क्रिया पदबंध) और एक या एकाधिक पदबंधों से वाक्यांश, वाक्यखंड अथवा उपवाक्य का सृजन होता है। अंत में दो या दो से अधिक वाक्यांश मिलकर वाक्य के रूप में प्रतिफलित होते हैं। कई वाक्य मिलकर एक प्रोक्ति को रूपायित करते हैं तथा कई प्रोक्तियों से भाषा का निर्माण होता है।

''व्याकरणिक संरचना की दृष्टि से वाक्य भाषा की सबसे बड़ी इकाई मानी जाती है। इसलिए भाषा की संपूर्ण संरचना में वाक्य की भूमिका केंद्रीय होती है। संदेश संप्रेषण की दृष्टि से प्रोक्ति भाषा की सबसे बड़ी इकाई है। प्रोक्ति वक्ता के पूर्ण मंतव्य या विचार बिंदु का प्रतिनिधित्व करती है और उसे संदर्भ और प्रकरण से जोड़ती है। प्रोक्ति एक अल्पांग वाक्य भी हो सकती है (जैसे-गाँववाले इकट्ठा

हो गये थे) और एक से अधिक वाक्यों का समूह भी (जैसे- जो पत्र सौन्नी ने मुझे भेजे थे, उनमें से कुछ पत्र भईया ने मुझे दिये)। अर्थ के स्तर पर अनुवाद की सबसे छोटी इकाई प्रोक्ति होती है, मात्र वाक्य नहीं।

वाक्य से छोटा घटक उपवाक्य है। वाक्य एक उपवाक्य का भी हो सकता है, एक से अधिक उपवाक्यों का भी (जैसे- कैप्टन टहलता आया, लेकिन तुरंत चला गया) उपवाक्य से छोटा घटक पदबंध कहलाता है। उपवाक्य पदबंधों से ही मिलकर बनता है[7], जैसे- बड़ा भाई, मेरे घर के पास आदि।

पदबंध से छोटा घटक शब्द है।

शब्दों से मिलकर पदबंध बनता है, जैसे- रमेश + का + छोटा + भाई = रमेश का छोटा भाई है।

शब्द से छोटा घटक रूपिम होता है। ध्वनियों का ऐसा अनुक्रम जा अर्थवान हो और जो अधिक अर्थवान खंडों में विभक्त न हो सकता हो, रूपिम कहलाता है। यह भाषा की लघुतम अर्थवान इकाई होता है। रूपिम शब्द के रूप में भी हो सकता है, लेकिन इसमें तीन रूपिम हैं : सहन + शील + ता, लेकिन जिस शब्द से केवल एक ही रूपिम होता है उसमें शब्द और रूपिम में कोई भेद नहीं होता, जैसे- कागज, खिड़की, मकान, मेहमान आदि शब्द भी हैं और रूपिम भी।

रूपिम से छोटा घटक स्वनिम है। स्वनिम किसी भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों का एक ऐसा समूह है जिसके सदस्य परस्पर पर्याप्त समानता रखते हैं, लेकिन कोई भी सदस्य किसी दूसरे सदस्य के स्थान पर नहीं प्रयुक्त हो सकता। मोटे तौर

---

[7] हिन्दी-अंग्रेजी व्याकरणिक संरचना, शर्मा, रमेश चंद्र, पृ. 84

पर किसी भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों को, जिनसे मिलकर उस भाषा के शब्द बनते हैं, स्वनिम हैं, जैसे- हिंदी में प्, क्, स्, ट् आदि। स्वनिमों से मिलकर रूपिम बनता है, जैसे- स् + त् + क् इन पांच स्वनिमों से मिलकर एक रूपिम या शब्द बनता है- भाषा की सबसे छोटी इकाई है।'

इस प्रकार भाषा एक बहुस्तरीय संरचना एक-दूसरे से अधिक्रमिक संबंधों के आधार पर जुड़ा है-

प्रोक्ति - वाक्य - उपवाक्य - पदबंध - शब्द

वाक्य एक बहुआयामी संरचना है। इसे हम व्यारकरणिक इकाई के रूप में भी देख सकते हैं, अर्थ की एक इकाई के रूप में भी देख सकते हैं और संरचना की एक इकाई के रूप में भी।'[8]

अंग्रेजी वाक्यों का पदक्रम इस प्रकार है- कर्ता-क्रिया-कर्म अर्थात् Subject Verb-Object है। हिंदी तथा अधिकांश भारतीय भाषाओं में वाक्योंका पदक्रम इस प्रकार है- कर्त्ता-कर्म-क्रिया। यह ध्यान देने की बात है कि (SVO कोटि की भाषाओं में जिनमें क्रिया, कर्ता और कर्म के बीच प्रयुक्त होती है) पदक्रम अपेक्षाकृत अधिक स्थिर होता है, जैसे- अंग्रेजी में। इसके विपरीत SOV कोटि की उन भाषाओं में (जिनमें क्रिया का स्थान वाक्य में अंत में होता है) पदक्रम अपेक्षाकृत अधिक लचीला होता है, जैसे- हिंदी में-

हिंदी- शिकारी इमचानोक प्रसिद्ध हो गया।

अंग्रेजी- Imchanok the hunter became famous.

---

[8] शर्मा, रमेश चंद्र, हिन्दी-अंग्रेजी व्याकरणिक संरचा, पृष्ठ संख्या 84

यहाँ अंग्रेजी वाक्य में पदक्रम परिवर्तन संभव नहीं–

- Became famous the hunter Imchanok.
- Famous became hunter Imchanok.
- Hunter Imchanok famous became.

हिंदी में इस प्रकार का पदक्रम परिवर्तन संभव है–

शिकारी इमचानोक प्रसिद्ध हो गया।

प्रसिद्ध हो गया शिकारी इमचानोक।

हो गया प्रसिद्ध, शिकारी इमचानोक

इमचानोक शिकारी प्रसिद्ध हो गया।

वाक्य की उपर्युक्त परिभाषाओं से यह देखने में आ रहा है कि वाक्य भाषा की छोटी–बड़ी इकाइयों की व्यवस्था होती है, जो अपने–आपमें चरम, एक दूसरी से स्वतंत्र और व्याकरण की दृष्टि से परिपूर्ण होती है। इस अध्याय में इनके विवेचन का उद्देश्य इनका छोटा या बड़ा होना अथवा इनका भाव की दृष्टि से चरम या एक दूसरे से स्वतंत्र होना नहीं है। ये बातें तो वाक्य के बाह्य पहलू हैं और यह भी जरूरी नहीं कि इन पहलुओं में कोई दोष ही न हो। इनमें कोई दोष होने पर भी वाक्य की संरचना या उसकी भाव–वहन–क्षमता पर कोई अंतर नहीं पड़ता। वाक्य की संरचना या उसकी भाव–वहन–क्षमता पर प्रभाव केवल उसके संरचनात्मक दोष से ही पड़ता है और संरचनात्मक सदोषता अथवा दोषरहित ही वाक्य का व्याकरिणक पहलू है तथा यही विवेचन का विषय है।

जब जहाँ यह बात स्पष्ट हो गई है कि लिखित और मानक भाषा के स्वरूप को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए उसकी चरम इकई वाक्य का व्याकरण–सम्मत

होना आवश्यक है, वहां इस बात को ध्यान में रखना भी आवश्यक है कि वाक्य के भाषा की एक इकाई होने से तथ्य को देखते हुए उसका दूसरे वाक्य अर्थात् दूसरी इकाई से भी भावात्मक रूप से जुड़ा होना आवश्यक है जिससे भावगत तारतम्य आ सके और भाषा अपने सही रूप में प्रवाहित हो सके।

अत: भाषा का सार्थक अंग बनने के लिए वाक्य प्रत्येक दृष्टि से सटीक होना चाहिए। वाक्य की सटीकता के लिए विभक्ति-चिह्नों, लिंग, क्रियादि सभी बातों का ध्यान रखना होता है। इनके अभाव में वाक्य सहज एवं सुबोध न होकर बोझिल तो होगा ही, तथ्यात्मक रूप से भी भ्रमपूर्ण हो सकता है। संरचनात्मक दृष्टि से उपवाक्य और पद (व्याकरणिक संबंधसहित शब्द) वाक्य में मुख्य घटक होते हैं। जहाँ तक उपवाक्य का संबंध है, यह अपने-आपमें स्वतंत्र होते हुए भी पूर्व वाक्य जे जुड़ा और प्रसंगानुकूल होना चाहिए। वाक्य सही न होने पर वह सामग्री में बलात् ठूंसा हुआ प्रतीत होता है। इस प्रकार वाक्य के पदों का उचित स्थान पर उपयुक्त विभक्ति-चिह्नों सहित स्थापन अत्यंत अनिवार्य है, क्योंकि हिंदी वाक्य में पदों को संस्कृत की भांति किसी भी स्थान पर नहीं रखा जा सकता। वाक्य के कुछ तत्त्व भी होते हैं। वाक्य के गठन में इनकी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। ये तत्त्व वाक्य को ठोस रूप प्रदान करते हैं और भाव की अभिव्यक्ति स्पष्ट रूप से करने में सहायक होते हैं।

इस विवेचन से यह बात सामने आती है कि वाक्य के निर्माण में दो बातों पर ध्यान देना आवश्यक होता है- उसके संरचनात्मक नियमों और उसके तत्वों पर। वाक्य-विश्लेषा के लिए भी इन्हीं बातों को आधार बनाया जाता है।

संरचना की दृष्टि से हिंदी वाक्य का विन्यास निम्न प्रकार होता है:

साधारण वाक्य = कर्त्ता, कर्म, क्रिया, सहायक क्रिया, पूर्णविराम।

नकारात्मक वाक्य = कर्त्ता, कर्म, न य नहीं, क्रिया, सहायक क्रिया, पूर्णविराम।

प्रश्नवाचक वाक्य = प्रश्नवाचक शब्द, कर्त्ता, कर्म, क्रिया, सहायक क्रिया, प्रश्नवाचक चिह्न।

प्रश्नवाचक और नकारात्मक वाक्य = प्रश्नवाचक शब्द, कर्त्ता, कर्म, न या नहीं, क्रिया, सहायक क्रिया प्रश्नवाचक चिह्न।

विस्मयादिबोधक वाक्य= विस्मयादिबोधक शब्द, कर्त्ता, कर्म, क्रिया, सहायक क्रिया, विस्मयादिबोध चिह्न।

पदक्रम तथा सन्निकट घटक वाक्य-संरचना के महत्त्वपूर्ण तत्त्व होते हैं। यदि इनके नियोजन में कुछ कमी रह जाए, तो वाक्य अपेक्षित अर्थ प्रकट करने की जगह भ्रामक अर्थ देता है, अत: इनके नियोजन पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

वाक्य में, शब्दों को अभिहित रूप से प्रकट करने वाले संज्ञा, सर्वनाम आदि का विन्यास अर्थ और पारस्परिक संबंध की दृष्टि से निहित होते है, जिसे पदक्रम कहते हैं। यह पदक्रम वाक्य से अपेक्षित भावाभिव्यक्ति के अनुसार ही बदलता है। साधारण वाक्यों में पहले कर्त्ता, फिर कर्म, पूरक पदक (यदि कोई हो) तथा सबसे बाद में क्रिया रखी जाती है, उदाहरणार्थ-

कर्त्ता	**कर्म**	**पूरक**	**क्रिया**	**सहायक क्रिया**
मैं	स्कूल	-	जाता	हूँ।

साधारण वाक्यों में पदक्रम दोष का बोध तुरंत हो जाता है, जैसे-'मैं जाता हूँ स्कूल।' पदक्रम अथवा अन्वय ठीक न होने से जहां वाक्य निरर्थक बन जाते हैं, वहां कई बार उनके अर्थ भी बदल जाते हैं, यथा-'वह कहां गया था?' 'वह गया कहाँ था?' 'आगे स्कूल है।' इस प्रकार वाक्य-निर्माण के समय पदों के उपयुक्त क्रम को ध्यान में रखना आवश्यक है।

प्रस्तुत कहानी के कुछ वाक्यों के दोनों अंग्रेज़ी अनुवादों की संरचनात्मक तुलना इस प्रकार दी जा रही है-

अंग्रेजी वाक्य	**हिंदी अनुवाद**	**टिप्पणी**
1. But most baffling was the behaviour of the taxi owner who had been a close confidant of Sonny (page 102)	लेकिन सबसे ज्यादा विचलित करने वाला उस टैक्सी मालिक का व्यवहार था जो कभी सौन्नी का विश्वासपात्र था।	इस वाक्य में संज्ञा पद में केवल 'टैक्सी मालिक' शब्द है। संज्ञापद वाक्य के आरंभ में आता है। जो सौन्नी का बहुत विश्वासपात्र' में शामिल सभी शब्द क्रियापद के अंग है और समस्त क्रियापद वाक्य के अंत में एक साथ आता है। संज्ञा या क्रियापद के मध्य एक दूसरे का कोई भाग नहीं आता।
2. With all my hope pinned on the currency of his number (page no. 100)	मेरी सारी आशाएँ उसके नंबर की उपलब्धता पर टिकी थी।	'उसका नंबर' यहाँ संज्ञा पद है, अतः यही वाक्य के आरंभ में जाएगा। 'पिन्ड' के बाद के सभी शब्द क्रिया पद के अंग है और वाक्य के अंत में जायेंगे।

3. I was Plunged into an abyss (page 92)	मैं अंधेरे के गर्त में समा गई।	इस वाक्य खंड में कर्त्ता पद स्पष्ट है। 'आई'। और कर्त्ता के तुरंत बाद सहायक क्रिया व मुख्य क्रिया भी अंग्रेजी भाषा व्याकरण के पदक्रम के अनुसार आया है अतः इस प्रकार के वाक्यों की अन्विति ठीक बन पड़ी है। वाक्य में तारतम्यता से इसका स्पष्ट सहज अर्थ भी मिल रहा है।
4. Loomed large like a dark Cloud between us (page 89)	हमारे बीच एक विशाल काले बादल की मानिंद आ खड़ा हुआ।	वाक्य की शुरुआत में कर्त्ता के स्थान पर क्रिया पद को रखा गया है। और कर्त्ता पद 'डार्क क्लाउड' को वाक्य के बीच में रखा गया है जिससे वाक्य में वचन, कारक, लिंग, पुरुष, कालादि के मध्य परस्पर सटीक संबंध की अन्विति नहीं हो पाई है। हिंदी में क्रिया का कर्त्ता और कर्म से अन्वय साधारणतः आसान होता है। केवल ऐसे वाक्यों में ही दोष मिलता है, जिनमें बहुवचन या दोनों लिंगों के कई कर्त्ता हो।

5. Naga woman could hurl at a man signifying his emasculations (page 86)	नागाशास्त्री का कपड़े उताड़ कर फेंकना पुरुष की नपुंसकता को दर्शा सकता था।	यहाँ 'नागा वूमन' संज्ञा पद है और सिंगनीफाइंग क्रियापद है जिससे क्रमशः कर्त्ता, कर्म और क्रिया का अन्वय वाक्य में ठीक से हो पाया है। प्राथमिक स्तर पर इस वाक्य की व्याकरणिक संरचना को देखते हुए यह बात सामने आती है कि वाक्य कर्त्ता, कर्म, क्रिया, विशेषण, क्रिया–विशेषण, सर्वनाम आदि पदों और पदबंधों की एक व्यवस्था रचना है और इस व्यवस्था में प्रत्येक का स्थान निश्चित होता है।
6. Stood like a statue about to wet your loin cloth? (page 85)	बुत की तरह खड़े हो गये और अपनी धोती गीली करने वाले वाले थे।	इस वाक्य में हालांकि संज्ञा पद 'स्टैचू' है परंतु वाक्य की शुरुआत में क्रियापद 'स्टूड' आया है जो अंग्रेजी पदक्रम के अनुसार हमेशा कर्त्ता के बाद आना चाहिए। वाक्य में मुहावरा Stood like a Statue about to wet your loin cloth' का प्रयोग हुआ है जो पूरे वाक्य का एक घटक बन गया है जिसका अर्थ है ''बुत की तरह खड़े हो गये और अपनी धोती गीली करने वाले थे।'' हालांकि यह मुहावरा ज्यादा प्रचलित नहीं है और पाठ के संदर्भ में प्रयुक्त हुआ है। वाक्य अपने आप पूर्णता को दर्शाता है। जहां शब्द और अर्थ एक ही वस्तु के दो पक्ष है, वहां वाक्य में लिखित भाषा और तदनुसार मन में प्रारंभिक रूप में अमूर्त स्तर पर उद्‌भूत भाव और अर्थ से उद्‌भूत भाव एक–दूसरे के अन्य रूप है और एक दूसरे के पूरक है।

7. How Secure I used to feel then? (page no. 65)	तब मैं खुद को कितना सुरक्षित महसूस किया करता थी।	Secure शब्द के सभी शब्द क्रियापद के अंग है और वाक्य के अंत में आऐंगे। करण से अधिकरण तक के शेष कारक, कर्त्ता और कर्म के
8. The villagers were living in anxiety given the proximity of the white men's camp; they did not know that the great war was over (page 48)	गाँव वाले, गोरों के कैम्प में पास फिक्र में रह रहे थे, उन्हें पता नहीं था कि महान युद्ध समाप्त हो गया था।	वाक्य में कर्त्ता के स्थान पर 'द विलेजर' का प्रयोग हुआ है। और क्रमशः क्रिया व कर्म अपने स्थान पर बिल्कुल सटीक रूप से रखे गये हैं। इसमें उपवाक्य 'द डिडनॉट नो दैड द ग्रेट वार वाज ओवर के रूप में वाक्य को सार्थकता प्रदान करते हैं।

मनुष्य के व्यवहार, चिंतन अथवा बाह्य आकार-प्रकार में बहुत-सी समानताएँ हैं परंतु दो भिन्न भाषाओं में समानता नहीं के बराबर होती है। दोनों भाषाएँ सर्वथा भिन्न संस्कृति, सभ्यता, इतिहास और परंपराओं को लेकर विकसित हुई है। दोनों भाषाएँ शब्द-सामर्थ्य, व्याकरण, प्रकृति और शिल्पगत विधान की दृष्टि से कमोवेश भिन्न-भिन्न हो सकते हैं।

अनुवादक के लिए अंग्रेजी और हिंदी दोनों भाषाओं का ज्ञान एक समान होना चाहिए। अनुवाद के क्षणों में जहाँ प्राथमिक स्तर पर रचना से संबंधित अंग्रेजी भाषा को कथ्य और व्यंजना की दृष्टि से गहराई से समझना होता है वहीं पर अनुवाद अथवा संप्रेषण की दृष्टि से हिंदी भाषा को भी उतनी गहराई से समझना आवश्यक होता है। साहित्यिक कृति की भाषा में निहित अर्थ की व्यापकता का

प्रसार उस संस्कृति विशेष में होता है। इसलिए रचनात्मक साहित्य की भाषा मूलतया अनेकार्थी होती है।

''साहित्य के अनुवादक से अक्सर जाने-अनजाने यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस समस्त अनेकार्थकता को अनुवाद में अन्तरित करेगा। हालाँकि यह अपेक्षा अपने आप में बहुत सख्त और ज़्यादतीपूर्ण अपेक्षा है क्योंकि संपूर्ण अनेकार्थकता को एक भाषा से दूसरी भाषा में अंतरित करने का अर्थ है उसे भिन्न संस्कृति में अंतरित कर देना। अनेकार्थकता को इस तरह स्थानांतरित अथवा रूपांतरित करना लगभग एक दुष्कर कार्य है क्योंकि भाषा की अर्थ संभावनाएं निश्चय ही उसके सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ी होती है। यही कारण है कि यह आदर्श कभी पूरी तरह प्राप्त नहीं हो पाता और सर्वोत्तम अनुवाद सदैव अपेक्षित रहता है। विदेशी अथवा भिन्न भाषा-भाषी पाठक (जो सामान्यता भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का होता है।) को अनुवाद के माध्यम से प्राप्त होने वाला संप्रेषण अनेकार्थकता की दृष्टि से हू-ब-हू मूल रचना जैसा नहीं होता। अच्छे साहित्यिक अनुवादक का लक्ष्य संप्रेषण की इस दूरी को कम करना है तथा उपर्युक्त आदर्श के ज्यादा-से-ज्यादा निकट पहुँचना होता है। साहित्य में अर्थ की लय और ध्वनि के साथ-साथ शब्द की लय और ध्वनि भी संप्रेषण-व्यापार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साहित्यकार व्यंग्य-वक्रोक्ति से भी काम लेता है। कभी वह जो कुछ कहता है उससे ज्यादा अर्थ निकलता है तो कभी जो कुछ कहता है उसके विपरीत अर्थ निकलता है।''[9]

---

[9] श्रीवास्तव आर.एन. तथा के.के. गोस्वामी, 'अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ', पृ.सं. 32

अनुवाद की प्रक्रिया के दोनों पक्ष–अर्थ ग्रहण और पुनः सृजन–साहित्य के अनुवाद में विशिष्ट स्थिति और रूप ग्रहण कर लेते हैं। साहित्य के अनुवाद में अनुवादक केवल अर्थग्रहण से काम नहीं चला पाता। उसे रचनाकार की अनुभूति से तादात्म्य स्थापित करना पड़ता है। उसकी संवेदना को भाव के स्तर पर जीना पड़ता है और फिर उस संवेदना को स्रोत भाषा से निकालकर लक्ष्य भाषा के संस्कार के भीतर उसकी पुनर्रचना ऐसी करनी पड़ती है कि वह संवेदना लक्ष्य भाषा की अपनी संवेदना बन जाए। इस पूरी प्रक्रिया में यह खतरा निरंतर बना रहता है कि स्रोतभाषा लक्ष्यभाषा पर हावी न हो जाए, उसका मुहावरा लक्ष्यभाषा के मुहावरे को निगल न जाए। इसलिए अनुवादक कथ्य को लक्ष्य भाषा की बिंब–प्रतीक–मिथक परंपरा से, अर्थविस्तार की सांकेतिकता से, उसके जातीय मन में निहित संस्कारों की बनावट–बुनावट से संपृक्त करता है। वह कथ्य की घटनाओं स्थितियों, अनुभूतियों और अभिव्यक्तियों को लक्ष्य भाषा की संस्कृति के भीतर सृजित करता है।

साहित्य के अनुवाद की एक विशिष्ट बात यह है कि भाषा के अर्थ–परिवर्तन की प्रक्रिया पर अनुवादक को पैनी नज़र रखनी पड़ती है। भाषा में अर्थ–परिवर्तन अन्य ज्ञान क्षेत्रों के अनुवादक को भी प्रभावित करता है।

पाठ की व्याख्या अनुवाद–प्रक्रिया का अनिवार्य अंग होती है। जो अनुवादक जितनी अच्छी तरह यह आंतरभाषी (Intra-Lingual) अनुवाद अथवा व्याख्या कर लेता है उतनी ही पैनी दृष्टि से वह पाठ की लक्ष्य भाषा में पुनर्प्रस्तुति कर सकता है।

किसी भी कहानी का पूरा ढाँचा- इसके चरित्र, घटनाएँ, जीवन, स्थितियाँ, भाषा आदि स्थान विशेष के परिवेश से एक खास तरह से जुड़े होते हैं। परिवेश के बदलने पर उनके बिखरने की आशंका होती है। विभिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न शब्दों अथवा पदों को दिया जाने वाला अर्थपरक अभिप्राय समान नहीं होता।

मनुष्य के व्यवहार, चिंतन अथवा बाह्य आकार-प्रकार में बहुत-सी समानताएँ हैं, परंतु दो भिन्न भाषाओं में समानता नहीं के बराबर होती है। दोनों भाषाएँ सर्वथा भिन्न संस्कृति, सभ्यता, इतिहास और परंपराओं को लेकर विकसित हुई है। दोनों भाषाएँ शब्द-सामर्थ्य, व्याकरण, प्रकृति और शिल्पगत विधान से कमोवेश भिन्न-भिन्न हो सकते हैं।

अनुवादक के लिए अंग्रेजी और हिंदी दोनों भाषाओं का ज्ञान एक समान होना चाहिए। अनुवाद के क्षणों में जहां प्राथमिक स्तर पर रचना से संबंधित अंग्रेजी भाषा को कथ्य और व्यंजना की दृष्टि से गहराई से समझना होता है वहीं पर अनुवाद अथवा संप्रेषण की दृष्टि से हिंदी भाषा को भी उतनी गहराई से समझना आवश्यक होता है। साहित्यिक कृति की भाषा में निहित अर्थ की व्यापकता का प्रसार उस संस्कृति विशेष में होता है। इसलिए रचनात्मक साहित्य की भाषा मूलतः अनेकार्थी होती है।

''साहित्य के अनुवादक से अक्सर जाने-अनजाने यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस समस्त अनेकार्थकता को अनुवाद में अन्तरित करेगा। हालाँकि यह अपेक्षा अपने आप में बहुत सख्त और ज्यादतीपूर्ण अपेक्षा है क्योंकि संपूर्ण अनेकार्थकता को एक भाषा से दूसरी भाषा में अंतरित करने का अर्थ है उसे भिन्न संस्कृति में

अंतरित कर देना। अनेकार्थकता को इस तरह स्थानांतरित अथवा रूपांतरित करना लगभग एक दुष्कर कार्य है क्योंकि भाषा की अर्थ संभावनाएं निश्चय ही उसके सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ी होती है। यही कारण है कि यह आदर्श कभी पूरी तरह प्राप्त नहीं हो पाता और सर्वोत्तम अनुवाद सदैव अपेक्षित रहता है। विदेशी अथवा भिन्न भाषा-भाषी पाठक (जो सामान्यता भिन्न संस्कृतिक पृष्ठभूमि का होता है), को अनुवाद के माध्यम से प्राप्त होने वाला संप्रेषण अनेकार्थकता की दृष्टि से हू-ब-हू मूल रचना जैसा नहीं होता। अच्छे साहित्यिक अनुवादक का लक्ष्य संप्रेषण की इस दूरी को कम करना है तथा उपर्युक्त आदर्श के ज्यादा-से-ज्यादा निकट पहुंचा होता है। साहित्य में अर्थ की लय और ध्वनि के साथ-साथ शब्द की लय और ध्वनि भी संप्रेषण-व्यापार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साहित्यकार व्यंग्य-वक्रोक्ति से भी काम लेता है। कभी वह जो कुछ कहता है उससे ज्यादा अर्थ निकलता है तो कभी जो कुछ कहता है उसके विपरीत अर्थ निकलता है।''[10]

अनुवाद की प्रक्रिया के दोनों पक्ष-अर्थ ग्रहण और पुनः सृजन-साहित्य के अनुवाद में विशिष्ट स्थिति और रूप ग्रहण कर लेते हैं। साहित्य के अनुवाद में अनुवादक केवल अर्थग्रहण से काम नहीं चला पाता। उसे रचनाकार की अनुभूति से तादात्म्य स्थापित करना पड़ता है। उसकी संवेदना को भाव के स्तर पर जीना पड़ता है और फिर उस संवेदना को स्रोत भाषा से निकालकर लक्ष्य भाषा के संस्कार के भीतर उसकी पुनर्रचना ऐसी करनी पड़ती है कि वह संवेदना लक्ष्य भाषा की अपनी संवेदना बन जाए। इस पूरी प्रक्रिया में यह खतरा निरंतर बना रहता

---

[10] श्रीवास्तव आर.एन. तथा के.के. गोस्वामी, 'अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ', पृष्ठ संख्या 32

है कि स्रोतभाषा लक्ष्यभाषा पर हावी न हो जाए। उसका मुहावरा लक्ष्यभाषा के मुहावरे को निगल न जाए। इसलिए अनुवादक कथ्य को लक्ष्य भाषा की बिंब-प्रतीक-मिथक परंपरा से, अर्थविस्तार की सांकेतिकता से, उसके जातीय मन में निहित संस्कारों की बनावट-बुनावट से संपृक्त करता है। वह कथ्य की घटनाओं स्थितियों, अनुभूतियों और अभिव्यक्तियों को लक्ष्य भाषा की संस्कृति के भीतर सृजित करता है।

साहित्य के अनुवाद की एक विशिष्ट बात यह है कि भाषा के अर्थ-परिवर्तन की प्रक्रिया पर अनुवादक को पैनी नजर रखनी पड़ती है। भाषा में अर्थ-परिवर्तन अन्य ज्ञान क्षेत्रों के अनुवादक को भी प्रभावित करता है।

पाठ की व्याख्या अनुवाद-प्रक्रिया का अनिवार्य अंग होती है। जो अनुवादक जितनी अच्छी तरह यह आंतरभाषी अनुवाद अथवा व्याख्या कर लेता है उतनी ही पैनी दृष्टि से वह पाठ की लक्ष्य भाषा में पुनर्प्रस्तुति कर सकता है।

किसी भी कहानी का पूरा ढाँचा- इसके चरित्र, घटनाएँ, जीवन, स्थितियाँ, भाषा आदि स्थान विशेष के परिवेश से एक खास तरह से जुड़े होते हैं। परिवेश के बदलने पर उनके बिखरने की आशंका होती है। विभिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न शब्दों अथवा पदों को दिया जाने वाला अर्थपरक अभिप्राय समान नहीं होता।

चतुर्थ अध्याय

''लाबुरनम फॉर माई हेड''
का सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण

अध्याय-चार
'लाबुारनम फॉर माई हेड' का सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण

''साहित्य का अनुवाद अन्य ज्ञान-क्षेत्रों के अनुवाद से भिन्न होती है। विज्ञान, प्रशासन अथवा अन्य क्षेत्रों की भाषा जहाँ अर्थ ग्रहण के स्तर तक संप्रेषण कराती है वहाँ साहित्य की भाषा हमारी अनुभूतियों, सौंदर्याभिरुचियों, सामाजिक सरोकारों, जीवन मूल्यों, जातीय संस्कारों और चित्तवृत्तियों के विविध प्रत्ययों से संप्रेषण का माध्यम होती है। भाषा के इस दायित्व के अंतर से अनुवाद-कर्म की अपेक्षाओं में भी अंतर आता है। परिणामस्वरूप अनुवाद की सामान्य विशेषताएँ और समस्याएँ साहित्य के अनुवाद के दौरान विशिष्ट रूप ग्रहण कर लेती हैं। सांस्कृतिक, शैक्षिक और जीवनपरक पृष्ठभूमि की समानता साहित्य के रचनाकार और पाठक के बीच एक अंतर्निहित पारस्परिक समझ पैदा करते हैं। यह समझ वस्तुतः एक भाषा-भाषी समुदाय के बीच समान भाषा संस्कारों से उत्पन्न होती है।

हर भाषा किसी संस्कृति को अभिव्यक्ति देती है और हर संस्कृति की एक भाषा होती है जो उसे बोलने वाले समाज को उस संस्कृति विशेष के बंधन में बांधे हुए होती है। साहित्यिक कृति की भाषा में निहित अर्थ की व्यापकता का प्रसार उस संस्कृति विशेष में होता है। इसलिए साहित्य की भाषा मूलतया अनेकार्थी होती है ।

''साहित्य के अनुवादक से अक्सर जाने-अनजाने यह अपेक्षा की जाती है कि वह इस समस्त अनेकार्थकता को अनुवाद में कायम रखेगा। हालाँकि यह अपेक्षा अपने आपमें बहुत सख़्त और ज्यादतीपूर्ण अपेक्षा है क्योंकि संपूर्ण

अनेकतार्थकता को एक भाषा से दूसरी भाषा में अंतरित करने का अर्थ है उसे भिन्न संस्कृति में अंतरित कर देना। अनेकार्थकता को इस तरह स्थानांतरित अथवा रूपांतरित करना लगभग एक दुष्कर कार्य है क्योंकि भाषा की अर्थ संभावनाएं निश्चय ही उसके सांस्कृतिक संदर्भों से जुड़ी होती है। यही कारण है कि यह आदर्श कभी पूरी तरह प्राप्त नहीं हो पाता और पाठनिष्ठ अनुवाद सदैव उपेक्षित रहता है। विदेशी अथवा भिन्न भाषा-भाषी पाठक (जो सामान्यता भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का होता है) को अनुवाद के माध्यम से प्राप्त होने वाला संप्रेक्षण अनेकार्थकता की दृष्टि से हू-ब-हू मूल रचना जैसा नहीं होता।''[11]

ज्ञान के क्षेत्र की भाषा मूलतः अभिधा की भाषा होती है जबकि साहित्यकार शब्द की अभिधा शक्ति के साथ-साथ व्यंजना और लक्षणा शक्ति से भी काम लेता है। साहित्य में अर्थ की लय और ध्वनि के साथ शब्द की लय और ध्वनि संप्रेषण-व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। व्यंग्य, वक्रोक्ति, ध्वनि, लय, बिंब और प्रतीक आदि को दूसरी भाषा में अंतरित करना या पुनः सृजित करना अनुवादक का दायित्व है। बिंबों और प्रतीकों का अनुवाद अपने आप में एक समस्या होता है क्योंकि बिंब और प्रतीक में किसी समाज का आदिम मन निहित रहता है। यथार्थ की अनुभूति और कल्पना की रूप विधायिनी शक्ति से रचनाकार कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर विविध प्रयोग करता है।

''सांस्कृतिक अर्थ छवि या स्थानीय विश्वास और त्योहारों का अनुवाद करना एक दुष्कर कार्य है। सांस्कृतिक दूरी की समस्या विदेशी भाषा से अनुवाद में

---

[11] डॉ. पूरनचन्द टण्डन, 'अनुवाद साधना', पृष्ठ संख्या 62

तो खड़ी होती ही है, कभी-कभी एक ही देश की भाषाओं में भी खड़ी हो जाती है। उदाहरण के लिए दक्षिण भारत के कुछ भागों में परिवार के भीतर ही वैवाहिक संबंधों का प्रचलन है। लड़की का अपने मामा से विवाह या लड़के का अपने मामा की लड़की से विवाह वहां की परम्परा में मान्य है। किन्तु उत्तरी भारत में यह स्थिति कल्पनातीत है। ऐसी किसी भी स्थिति का उल्लेख उत्तरी भारत की भाषाओं में काफी सावधानी से करना होगा। चाहे तो वह पाद-टिप्पणी देकर या व्याख्यात्मक विधि से स्पष्ट करे।''[12]

किसी कृति में अंचल-विशेष क्षेत्र-विशेष के जन-जीवन का समग्र चित्रण कई बार अपनी क्षेत्रीय भाषा या बोली में जितना स्वभाविक या सटीक हो पाता है, उतना भाषा के अन्य रूप या शैली में नहीं। इससे अंचल-विशेष के लोगों की सहज अभिव्यक्ति का परिचय मिलता है। और वातावरण में स्वभाविकता आ जाती है। इसके अतिरिक्त ये क्षेत्रीय बोलियाँ रहन-सहन और रिवाज भाषाओं को प्रवाहपूर्ण बना देती हैं। विभिन्न रीति-रिवाज और चाल-चलन, व्रत त्योहार आदि अपने क्षेत्रों की विशिष्टता लिए होती है।

भाषायी समस्या के अतिरिक्त पाठ में जो सामाजिक एवं सांस्कृतिक सूचना मिलती हैं, इसका अंतरण वास्तविक समस्या खड़ी कर देता है। भाषा और संस्कृति का अटूट संबंध होता है। इससे उस समाज के बारे में काफी सूचनाएं मिल जाती है। अतः इन सूचनाओं में निहित भाषिक रूपों का अंतरण नहीं हो पाता। उदाहरण के लिए, फिनलैंड की भाषा में 'Menen Saunaa' का हिन्दी अनुवाद होगा, 'क्या

---

[12] कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, पृष्ठ संख्या 56

आप सॉना जा रहे हैं?' यदि Saunaa का अर्थ 'स्नानघर या नहाने की जगह' रखा जाए तो पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं होती क्योंकि भारतीय परंपरा में स्नानघर में स्नान सामान्यत: अकेले में किया जाता है। स्नान में गर्म या ठंडे का प्रयोग होता है इससे शरीर को धोया जाता है और यदि नदी या सरोवर में स्नान किया जाए तो पानी में डुबकी लगाई जाती है। इसमें साबुन का भी इस्तेमाल हो सकता है। जबकि बाथ सॉना में सामूहिक स्नान होता है। इसलिए इसके कक्ष का निर्माण या उसका रूप भी अलग होता है। इसमें न तो गर्म पानी का प्रयोग होता है और न ही ठंडे पानी का। न ही पानी में डुबकी लगाई जाती है। इसमें साबुन का भी इस्तेमाल हो सकता है। जबकि बाथ सॉना में सामूहिक स्नान होता है, इसलिए इसके कक्ष का निर्माण या उसका रूप भी अलग होता है। इसमें न तो गर्म पानी का प्रयोग होता है और न ही ठंडे पानी का। न ही पानी में डुबकी लगाई जाती है और न ही शरीर धोया जाता है और यह एक प्रकार का वाष्प स्नान होता है जिसका प्रयोग सब लोग एक साथ मिलकर आनंद के लिए करते हैं। यह एक वाष्पस्नान भी नहीं है जो प्राकृतिक चिकित्सा में प्रयुक्त होता है। इसी 'Saunna' का अनुवाद अन्य यूरोपीय भाषाओं में भी नहीं होता।

''संस्कृति के संदर्भ में देश-प्रदेश की वेश-भूषा का विशेष स्थान होता है। इसके अनुवाद में भी काफी कठिनाई होती है। हिन्दी भाषी क्षेत्र में साड़ी, धोती, लुंगी आदि वस्त्रों का संदर्भपरक अर्थ है। महिलाएं साड़ी पहनती है और पुरुष लुंगी पहनते हैं जबकि धोती के पुरुष और महिलाओं के लिएअपने-अपने मायने होते हैं। लुंगी को पूर्णतया पहनने अथवा कमर तक लुंगी पहनने के लिए अलग-अलग

शब्द है। इनका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में कर पाना कठिन है क्योंकि ये वस्त्र उनकी वेशभूषा में नहीं आते। इसी तरह पंजाबी वस्त्र 'सलवार-कुर्ती' अपनी संस्कृति को अपने भीतर समेटे हुए हैं और इनका अनुवाद किसी भी भाषा में नहीं हो सकता क्योंकि अन्य भाषाओं में कोई वेशभूषा न होने के कारण इसका समतुल्य शब्द ढूँढें भी नहीं मिलता। इसलिए संस्कृति, रहन-सहन, तीज-त्योहार उद्घाटित करनेवाले पाठ का अनुवाद करते समय अनुवादक को कई बार विवरणात्मक समतुल्य शब्द बनाने पड़ते हैं ताकि वे पाठक को बोधगम्य हो सके। इसी तरह हर देश अथवा प्रदेश का अपना अलग-अलग भोज्य पदार्थ या खान-पान होता है और उनका भी प्रतिस्थापन करना असंभव-सा हो जाता है। उदाहरण के लिए भारतीय भोजन के अंतर्गत दाल-चावल, चपाती, रोटी, पराठा, इडली, डोसा आदि तथा यूरोपीय भोजन के अंतर्गत सैंडविच, हैमबर्गर, पिज्जा आदि का अनुवाद हिन्दी में संभव नहीं है। इसलिए इसका अनुवाद न करके इनको लक्ष्य भाषा में ज्यों-का-त्यों रखा जाता है।''[13]

प्रत्येक भाषा की शब्द-संपदा अपने सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था की मांग के अनुरूप होती है। इससे एक भाषा के शब्द द्वारा व्यक्त अर्थ को ठीक उसी तरह दूसरी भाषा में उपलब्ध शब्दों द्वारा अभिव्यक्ति करना कठिन हो जाता है। इसका आशय यह न समझा जाए कि लक्ष्य भाषा किसी भी विषयवस्तु या भाव-विशेष को अभिव्यक्त करने में अक्षम होती है। वास्तव में भाषा अक्षम नहीं होती, उसकी अभिव्यक्ति के ढंग या रीति में अंतर आ जाता है। उदाहरण के लिए

---

[13] कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, पृष्ठ संख्या 46

हिन्दी के नाते-रिश्ते की शब्दावली में प्रयुक्त जेठ, देवर और ननदोई शब्दों जैसी अंग्रेजी की नाते-रिश्ते की शब्दावली में व्यवस्था नहीं है और इनका अनुवाद अंग्रेजी में Brother in in-law होता है किन्तु इस अनुवाद से जेठ, देवर और ननदोई के रिश्ते स्पष्ट नहीं होते। अतः भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से संघटकीय विश्लेषण से इनका अन्वय कर उसका संकेतार्थ व्यक्त किया जा सकता है। वाक्य के आधार पर जेठ का 'Elder brother of husband' तथा देवर का 'Younger brother of husband' हो सकता है। भारतीय परिवार में ननद का विवाह हो जाने के बाद वह पिता के परिवार की सदस्य नहीं होती इसलिए बड़ी या छोटी ननद के लिए कोई अलग शब्द नहीं है, जैसेपति के बड़े भाई के लिए 'जेठ' और छोटे भाई के लिए 'देवर' शब्द प्रयुक्त होता है। इस दृष्टि से 'ननदोई' शब्द वय-निरपेक्ष है और इसका अन्वय करते हुए इसकी संकल्पना 'Husband of the elder of younger sister of the husband' ही होगी। स्रोत भाषा के कथ्य के अंतरण की प्रक्रिया एक जटिल व्यापार है। विषय के अनुसार पाठ में कथ्य के प्रसंग पर जहाँ बल देने की आवश्यकता होती है वहाँ अभिव्यक्ति पर कम बल दिया जाता है और जहाँ अभिव्यक्ति पर बल देना होता है, वहाँ कथ्य पर भी ध्यान देने की जरूरत होती है।

''भाषा सामाजिक संस्कार का बोध भी कराती है। भाषिक परिवेश का संदर्भ सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति के साथ रहता है। इसमें संप्रेष्य कथ्य का संबंध भाषिक अभिव्यक्ति के प्रयोग या व्यावहार से जुड़ा होता है। इससे सामाजिक शैली का जन्म होता है। इससे जो अतिरिक्त अर्थ व्यंजित होता है वह सामाजिक अर्थ

भी माना जा सकता है। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी अभिव्यक्तियाँ भी मिलती हैं जिनका कोशगत अर्थ और संरचनात्मक अर्थ जिस कथ्य का बोध कराता है उससे भिन्न उसका सामाजिक और सांस्कृतिक अर्थ होता है। उदाहरण के लिए, 'गंगा स्नान' या 'गंगा नहाना' अभिव्यक्ति का अर्थ गंगा में मात्र स्नान करना नहीं है। इसके कई सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थ निकलते हैं। जैसे-'पवित्र डुबकी' (Holy dip) 'पाप धोने के लिए गंगा में नहाना' (to bath in Ganges to wash away the sings) 'बेटी का विवाह कर मुक्ति का अनुभव करना या मुक्ति महसूस करना' (to be relieved or to feel relieved after the marriage of the daughter)."[14]

शब्द किसी भी समाज संस्कृति के वाहक होते हैं। कोई भी भाषा अपने में सम्पूर्ण नहीं होती। वह निरन्तर विकसित होती रहती है। सांस्कृतिक प्रभाव के फलस्वरूप एक भाषा दूसरी भाषा से कुछ-न-कुछ शब्द ग्रहण करती है। बहुत से शब्दों का अनुवाद संभव ही नहीं है। हिंदी में प्रयुक्त कुछ मिठाइयों तथा खाद्य पदार्थों जैसे-जलेबी, रबड़ी, रायता आदि को अनुवादित करना कठिन है।

प्रत्येक संस्कृति में रहन-सहन रीति-रिवाज, खान-पान, आचार-विचार, जाति-कुल, धर्म, उपासनाविधि आदि की विशिष्ट शब्दावली होती है। त्योहार, इतिहास, जलवायु, पशु-पक्षी आधारित भी विशिष्ट शब्दावली होती है। भारतीय पुराण तथा पुराण कथा-पुरावृत्त (मिथ) पर आधारित शब्द अपनी विशिष्टता लिए होते हैं। यही बाद में अन्य देशों में प्रयोग के माध्यम से चले जाते हैं। जाति विशेष की भी विशिष्ट शब्दावली है। मछुए, भील, नट, सपेरों आदि जातियों के पेशों के अनुसार उनकी अपनी-अपनी शब्दावली है। सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में

---

[14] भोलानाथ तिवारी, अनुवाद विज्ञान, पृष्ठ संख्या 44

अनुवाद की ये सीमाएं भिन्न राष्ट्रों की भाषाओं में ही दृष्टिगत नहीं होती वरन एक राष्ट्र की भिन्न-भिन्न भाषाओं में भी पृथक्-पृथक् प्रकृति एवं सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टताएँ लिए होती हैं जिनके कारण अनुवादकों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। भारत में प्रत्येक प्रदेश की अपनी कुछ विशिष्टता में पर्व एवं त्योहार हैं। यदि अनुवादक को स्रोत भाषा के इन सांस्कृतिक उत्सवों की पूर्ण जानकारी नहीं होगी तो वह मूलनिष्ठ अनुवाद नहीं कर सकेगा। इसी के साथ भिन्न भाषा-भाषी प्रदेशों के व्यक्तियों के खान-पान, वेश-भूषा, रीति-रिवाज भी भिन्न-भिन्न होते हैं। उनकी सांस्कृतिक विशेषताएँ इन्हीं के माध्यम से व्यक्त होती हैं। ऐसे में अनुवादक को मूल के शब्दों को यथावत लिखते हुए पाद-टिप्पणी में उनकी व्याख्या प्रस्तुत करना होगा। जहाँ शब्दानुवाद संभव हो वहाँ उसे ग्रहण करना चाहिए। वस्तुतः अनुवादक यदि अनुवाद के साथ उचित न्याय करना चाहता है तो उसे अनुवाद करते समय सांस्कृतिक बारीकियों तथा अभिव्यक्तियों की बारीकियों को समझना होगा अन्यथा वह मूल पाठ के भाव को पाठक तक पहुंचाने में सर्वथा असफल सिद्ध होगा।''

''अनुवाद को एक असाधारण, चुनौतियों से युक्त, जटिल, कृत्रिम, आवश्यकता जनित तथा एक प्रकार से सृजनात्मक प्रक्रिया मानते हुए विभिन्न राष्ट्रों के बीच भाषा के माध्यम से संपर्क स्थापित करने में अनुवाद की समस्या पर विचार करते हुए डॉ. अम्बादास देशमुख का कथन है-''भाषाएँ समसांस्कृतिक होते हुए भी अनुवाद की दृष्टि से अनेक कठिनाइयाँ और समस्याएँ सामने लाती है। जैसे- हिन्दी-मराठी।''

अनुवाद की सीमाओं का उल्लेख करते हुए डॉ. माधव सोनटक्के कहते हैं कि–''मूल साहित्यिक कृति में अभिव्यक्त सांस्कृतिक संदर्भों के रूपान्तर की भी अपनी सीमा है। मूलकृति की भाषा और अनुवाद की भाषा में सांस्कृतिक समानता हो तो यह दिक्कत नहीं आती, लेकिन उनमें सांस्कृतिक असमानता जितनी अधिक मात्रा में होती है, उस मात्रा में उसके अनुवाद में असहजता बढ़ जाती है। इसे अनुवादक का दोष नहीं बलिक सीमा मानी जानी चाहिए। सांस्कृतिक संदर्भों का अतितायी सम्प्रेषण दुराग्रह अनुवाद को किलष्ट बनाता है और नीरस भी।'' इसी क्रम में अमृत देशमुख का कथन है कि–''अनूदित पाठ में स्वच्छता, सहजता और प्रवाह की कमी खटकने लगती है।'' सम्बद्ध भाषाओं में सांस्कृतिक और भाषागत दूरी जितनी अधिक होगी, अनुवादगत सीमाओं की मात्रा में उतनी ही अधिक होगी।

अनुवाद की सीमाओं के संदर्भ में अंग्रेजी भाषा के कवि राबर्ट ग्रेज की धारणा है कि 'अनुवाद किसी भी स्थिति में सम्भव नहीं है।' अन्य कुछ विद्वानों के मतानुसार अनुवादक कभी वफ़ादार नहीं हो सकता। इस प्रकार भाषा पक्ष की साहित्य तथा सांस्कृतिक संदर्भ में भी अपनी सीमाएं हैं। साथ ही इनसे संबंधित धार्मिक तथा दार्शनिक शब्दावली जो रूढ़ हो चुकी है, अन्य भाषाओं में किसी भाव को व्यक्त करने वाले पर्याय नहीं है।''[15]

'अनुवाद की सीमाओं' के संदर्भ में हुई चर्चा तथा प्रस्तुत विचारों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान समय में इस विधा को अत्यन्त व्यापक एवं असाधारण एवं वैचारिक समन्वय का महत्त्वपूर्ण माध्यम माना जाता है। इसकी उपयुक्तता के कारण ही असाध्य भी साध्य लगने लगता है।

---

[15] गोपीनाथ जी, 'अनवुाद सिद्धांत और प्रयोग', पृष्ठ संख्या 29

जहाँ एक ओर अनुवाद के इस उपयुक्तता के पक्ष में बहुत कुछ कहा जाता है वहीं दूसरी ओर यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि अनुवाद की अपनी कुछ सीमाएँ अवश्य है। जैसे-साहित्यिक रचना के शाश्वत पक्ष को लक्ष्य भाषा में रूपान्तरित अवश्य किया जा सकता है किन्तु उस रचना में समाहित विशिष्टता तथा अलौकिकता अभिव्यक्ति के स्तर पर नष्ट हो जाती है। इसलिए अनुवाद को पुनः सर्जक की भूमिका में आना होता है।

प्रस्तुत मूल पाठ में आये कुछ तीज-त्योहार, रीति-रिवाज, स्थानीय विश्वास व मान्यताओं का विश्लेषणः

1. Easter Week (Page No. 1) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : इस्टर सप्ताह), पृ.सं. (43)

पूर्वोत्तर भारत में उत्तर या दक्षिण भारत से इतर बहुत कम ऐसे त्योहार हैं जिन्हें बड़े स्तर पर मनाये जाने की परंपरा है। इसमें इस्टर एक प्रमुख है जिसकी तैयारियाँ हफ्तों पहले शुरू हो जाती है। चूंकि यहाँ ईसाई धर्मावलंबियों की संख्या ज्यादा है और इस्टर का वहाँ के लोगों के लिए अपना सांस्कृतिक व धार्मिक महत्त्व है। चूँकि सांस्कृतिक भाव वाले इस शब्द को उसी भाव के साथ अंग्रज़ी विकल्प में प्रस्तुत करना संभव नहीं है इसलिए अंग्रेजी के 'इस्टर' शब्द को हिन्दी अनुवाद पाठ में ज्यों का त्यों रखा गया है ताकि लोगों की धार्मिक भावनायें उसी भाव के साथ सुरक्षित रखी जा सके।

2. Gravesite (Page No. 4) (लक्ष्य पाठ रूपांतरण : कब्रिस्तान), पृ.सं. (47)

ईसाई परम्परा में मृत शरीर को ताबूत के भीतर दफनायें जाने की परम्परा

रही है उस स्थान विशेष को 'ग्रेवसाइट' अर्थात् 'कब्रगाह' की संज्ञा दी जाती है। हालांकि जहाँ तक भाषिक वैषम्यता का प्रश्न है तो 'आओ' नागा जनजाति में प्राथमिक भाषा के तौर पर या तो 'नागा' (जिसमें विभिन्न जनजातीय उपभाषायें शामिल है) या फिर अंग्रेजी भाषा बोली सुनी जाती है। हिंदी रूपांतरण करते समय 'कब्रिस्तान' या 'कब्रगाह' को पर्याय के रूप में रखा गया है। मूल पाठ में आये अंग्रेजी के शब्द 'ग्रेवसाइट' को लक्ष्य पाठ में ज्यों का त्यों रखा जा सकता था ताकि स्थानीय विशेष की धार्मिक व सांस्कृतिक आस्था को संरक्षित किया जा सके। तथापि हिंदी पर्याय की सीमित उपलब्धता से इसका कोई अन्य सटीक विकल्प नहीं मिल पाया जिससे इसकी सांस्कृतिक अर्थ छवि को रूपांतरित किया जा सके। अंग्रेजी शब्द 'ग्रेवसाइट' को ज्यों को त्यों रखने से पाठ में प्रवाहमयता नहीं आ पाती। अत: पर्याय के रूप में 'कब्रगाह' को लक्ष्य पाठ में रखना उचित प्रतीत होता है इससे भाषाई विविधता वाले अन्य भू-भाग के निवासी इसके अर्थ को सुगमतापूर्वक ग्रहण कर सकते हैं। सांस्कृतिक अर्थछवियों वाले ऐसे शब्दों को लक्ष्य भाषा में उतारना दुष्कर है।

3. (Headstones (Page 4) (लक्ष्य पाठ रूपांतरण : कब्र के सिरहाने लगाई जाने वाली पत्थर), पृष्ठ सं. (47)

पूर्वोत्तर समाज में मृत्त शरीर को ईसाई धर्मानुसार कब्र में दफ़नाने का चलन है। वहाँ हिन्दू समाज के रिवाज़ों के अनुसार शवों को जलाया या दफ़नाया नहीं जाता। मृतक के कब्रों के सिरहाने एक विशेष प्रकार के स्टोन या पत्थर स्थापित किये जाते हैं। इन शिलालेखों पर मरने वाले का विवरण यथा- जन्म, मृत्यु, कार्यकाल,

घर का पता आदि खुदवाया जाता है। उनकी संस्कृति में मृत्यु संबंधी अनुष्ठान का यह एक अहम् हिस्सा है। 'पत्थर' या 'शिलाखंड' आदि के विकल्पों द्वारा इसकी सांस्कृतिक अर्थछवि को कदापि व्यक्त नहीं किया जा सकता था। इसलिए पाद-टिप्पणी देकर इसकी व्याख्या कर दी गई है।

4. University Chapel (Page 95) (लक्ष्यपाठ रूपान्तरण : विश्वविद्यालय का छोटा गिरजाघर) पृ.सं. (179)

दरअसल 'चैपल' की धारणा रोमन कैथोलिक गिरजाघर से आई है जो ईसाईयों के मुख्य गिरजाघर से इतर छोटे पूजागृह (किसी संस्था या घर से संबद्ध) अर्थात् मुख्य चर्च से दूर एक छोटा गिरजाघर। प्रस्तुत पाठ में 'यूनिवर्सिटी चैपल' का प्रसंग नायिका और नायक के मिलन स्थान से संबंधित है। जहां दोनों पहली बार मिलते हैं। शब्द पर्याय के निर्धारण में अर्थ की सूक्ष्मता एक बड़ी समस्या है उपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थ में सूक्ष्म अंतर होता है। यहां चैपल का अनुवाद छोटा गिरजाघर किया गया है। ताकि उपासनागृह के भाव को सारगर्भित अर्थ में लक्ष्य भाषा में पिरोया जा सके।

5. Bamboo Stakes (page 86) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण: बाँस का खूँटा या खंबा), पृष्ठ सं. (164)

यह जलवायु आधारित शब्द है। पूर्वोत्तर में बाँस की खेती बहुतायत में होती है। विशेषकर आसाढ़ और सावन के दौरान बाँस के झुरमुट हरे कोमल पत्तों और कोपलों से समूचा क्षेत्र आच्छादित हो जाता है। बाँस का अर्थ समझे बगैर बैम्बू की अवधारणा और इसमें निहित अर्थ को पूर्वोत्तर के सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में नहीं

समझा जा सकता। अत: अर्थग्रहण के लिहाज से 'बाँस का खंबा' 'ज्यादा सटीक और श्रेयस्कर है।

6. Waist Cloth (Page 86) (हिंदी रूपांतरण : मेखला : 'कमर के चारो ओर लपेटकर बाँधा जाने वाला कपड़ा'), पृष्ठ सं. (163)

'मेखला' पूर्वोत्तर समाज के पहनावे का एक प्रमुख अंग है। यह पूर्णत: सांस्कृतिक शब्द है। पूर्वोत्तर समाज में स्त्रियों का पहनावा इसके बगैर अधूरा माना जाता है। चूंकि लेखिका पूर्वोत्तर से है तो जाहिर है इस पहनावे से बखूबी परिचित होगी परन्तु अंग्रेज़ी पाठकों को ध्यान में रखते हुए अंग्रेज़ी के मूल पाठ में 'मेखला' का लिप्यंतरण करते हुए इसके स्थान पर 'वेस्ट क्लोथ' लिखा इससे 'मेखला' में निहित भाव स्पष्ट नहीं हो रहा। यहां अनुवादक के तौर पर ने थोड़ी स्वतंत्रता लेते हुए 'मेखला' को 'वेस्ट क्लॉथ' के पर्याय के तौर लक्ष्य पाठ में समाहित किया गया है। जिससे 'मेखला' में निहित अर्थ स्पष्ट हो सका है साथ ही पाद-टिप्पणी में इसके अर्थ को समझाया गया है।

7. Red and black Jacket (Page 85) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : लाल धारीदार काली जैकेट), पृ.सं. (161):

मोटो कपड़ों से बनी विशेष प्रकार का यह जैकेट नागा समुदाय के कबीलाई प्रमुख को स्थानीय प्रशासन द्वारा नियुक्त करते समय सम्मानस्वरूप दिया जाता है। यह जैकेट उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा का द्योतक है। यद्यपि इसे प्राप्त करने का अवसर कुछ खास लोगों को ही प्राप्त होता है। इसके कुछ अपने सांस्कृतिक व सामाजिक महत्त्व है। यदि इसका अनुवाद सिर्फ लाल जैकेट से कर दिया जाता तो वह सटीक

नहीं बैठता पर लाल धारीदार काली जैकेट बंडी इसमें निहित सांस्कृतिक भाव को अभिव्यक्त करने में सक्षम है।

8. Granaries (Page 84) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : खलिहान), पृ.सं. (158)

'खलिहान' शब्द भारतीय कृषक समाज के लिए नया नहीं है। फसल कटाई के बाद उसे एक सुरक्षित व निश्चित स्थान पर रखने के स्थान विशेष को 'खलिहान' कहा जाता है। अंग्रेजी भाषा में 'खलिहान' का सबसे सटीक व उपयुक्त विकल्प 'ग्रेनरी' ही हो सकता था। शायद इसलिए लेखिका ने 'ग्रेनरी' का विकल्प चुना। अपितु हिंदी अनुवाद करते समय मूल पाठ की एकनिष्ठता व मूल भाव बनाये रखते हुए इसका अनुवाद खलिहान किया गया है जो प्रत्येक लिहाज से अंग्रेज़ी के ग्रेनरी के समकक्ष खड़ा उतरता है। हिंदी के 'खलिहान' पर्याय के द्वारा ग्रेनरी के सांस्कृतिक भाव सहेजा गया है।

9. Age-set feast (Page 83) (लक्ष्य पाठ रूपांतरण : अन्नप्रासन भोज, पृ.सं. 156) :

प्रत्येक समाज में जन्म, मरण, विवाह, उपनयन आदि को लेकर कुछ खास परम्परायें रही हैं, और उनसे संबंधित विशिष्ट अनुष्ठान भी। जैसे उत्तर भारत में नवजात बच्चे को प्रथम बार अन्न खिलाये जाने की परम्परा 'अन्नप्रासन' उत्सव के नाम से प्रचलित है ठीक वैसे ही नागा समुदाय में 'ऐजसेट फिस्ट' की परम्परा है। जिसमें अन्नप्रासन की तरह ही सारे अनुष्ठान संपन्न किये जाते हैं। यद्यपि सांस्कृतिक अर्थछवियों वाले शब्दों को किसी भी परभाषा में ठीक उसी भाव के साथ रूपांतरित करना कठिन है अतएव सटीक विकल्प से इसका लिप्यंतरण कर दिया गया है।

10. Gaonburah (page No. 81) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : गाँवबुराह), पृष्ठ सं. (152)

नागा समुदाय में 'गाँवबुराह' एक शासकीय पद है जिसे ग्रामीण स्तर पर सरकार द्वारा कबीला प्रमुख के तौर पर नियुक्त किया जाता है। ये गाँवबुराह मुख्य रूप सरकारी एजेंट के तौर पर कानून व्यवस्था बनाये रखने में मदद करते हैं। इन्हें स्थानीय प्रशासन द्वारा एक विशेष प्रकार का वस्त्र प्रदान किया जाता है। काली बंडी व लाल कम्बल के रूप में ये वस्त्र इनके सम्मान व प्रतिष्ठा का सूचक है। ये गाँवबुराह पारंपरिक रूप से ग्रामीण परिषद् के साथ मिलकर काम करते हैं। 'गाँव बुराह' नियुक्त करने की प्रक्रिया अंग्रेजों के जमाने से ही चली आ रही है जो स्वतंत्रता उपरांत भी यथावत जारी है। 'गाँवबुराह' की सांस्कृतिक विशिष्टता को हिंदी में लाना कल्पनातीत है अत: इसे लिप्यांतरित कर दिया गया है।

11. Coolie (page No. 63) (हिंदी रूपांतरण : काली), पृ.सं. (125)

प्रत्येक समाज में जातियों व उपजातियों के अनेक विशिष्ट शब्द मिलते हैं। प्रस्तुत मूल पाठ में 'काली' शब्द एक चरित्र विशेष 'मारथा' के लिए प्रयुक्त हुआ है। यहाँ अंग्रेजी के 'कूली' का शाब्दिक अर्थ हिंदी में दरअसल 'काली' है। सांप्रदायिक और जातीय अर्थछवियों वाले शब्दों को लक्ष्य भाषा में उसी भाव के साथ रूपांतरित करना कठिन है। अतएव पाद टिप्पणी के साथ इसकी व्याख्या की गई है।

12. Shawl and dao (Page No. 59) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : शॉल व दाव), पृ.सं. (188) :

यह सांस्कृतिक वेश-भूषा आधारित शब्द है। पूर्वोत्तर में नागा समुदाय के पुरुष अपने कंधे पर विशेष प्रकार से तह लगाये शॉल रखते हैं तथा कमर के साथ लोहे से बना दाँव (हँसिया) भी लटकाते हैं। हिंदी में इसका रूपांतरण नहीं किया जा सकता। अत: इसमें निहित सांस्कृतिक भाव को अक्षुण्ण रखते हुए लक्ष्य पाठ में ज़्यों का त्यों रखा गया है और पाद-टिप्पणी में इसके अर्थ छवि को विस्तार से समझाया गया है।

13. Village Sentries (Page No. 36) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : ग्रामप्रहरी) पृ. सं. (88)

यह शब्द मूल पाठ में ग्राम्यप्रहरी के संदर्भ में प्रयोग किया गया है। क्षेत्रिय परम्परा के अनुसार नागा समुदाय में कबीलाई जीवन व्यवस्था है। प्रत्येक कबीलों के अपने अलग-अलग गाँव है जहाँ उस खास जनजातीय समूह के लोग मिलजुलकर रहते हैं। प्रत्येक कबीला आपसी सहमति से गाँव की निगरानी या रक्षा के लिए एक प्रहरी या सन्तरी नियुक्त करता है जो आपात स्थिति में ग्रामीणों को गुप्त सूचना व सुरक्षा मुहैया करवाता है। ये उचित नहीं की गांव का संतरी कहकर इसकी खानापूर्ति कर ली जाए। संतरी और प्रहरी में न केवल अर्थवैषम्यता है बल्कि दोनों ही अलग संदर्भ में प्रयुक्त किये जाते हैं। 'चौकीदार' इसकी मूल अभिव्यक्ति के थोड़ा करीब है। पर 'संतरी' या 'चौकीदार' से वो भाव स्पष्ट नहीं होता जो 'ग्राम्य प्रहरी' से होता है इसलिए इसे मूल के सन्निकट मानते हुए लक्ष्य पाठ में इसका प्रयोग किया गया है।

14. Cold Rice and black tea (page no. 24) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : ठंडा चावल व काली चाय), पृ.सं. (74)

शब्द किसी भी समाज और संस्कृति के वाहक होते हैं। कोई भी भाषा अपने में सम्पूर्ण नहीं होती। वह निरन्तर विकसित होती रहती है। सांस्कृतिक प्रभाव के फलस्वरूप एक भाषा दूसरी भाषा से कुछ-न-कुछ शब्द ग्रहण करती है। बहुत से शब्दों का अनुवाद संभव ही नही है। उपर्युक्त पाठ में 'कोल्ड राइस व ब्लैक टी' के लिए ठंडे चावल व काली चाय का पर्याय रखा गया है। नागा समुदाय में 'कोल्ड राइस व ब्लैक टी' खान-पान का एक अभिन्न हिस्सा है। प्रत्येक समाज का के अपना विशिष्ट रहन-सहन, खान-पान व आचार-विचार है। लिप्यंतरित करते समय ठंढा चावल व काली चाय पर्याय ही उपर्युक्त है।

15. Dobhasi (Page 23) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : दोभाषी) पृष्ठ सं. (72)

'दोभाषी' का शाब्दिक अर्थ है दो भाषाओं का ज्ञाता। मूल पाठ में 'दोभाषी एक मध्यस्थ' में चित्रित किया गया है जो एक सरकारी नुमाइंदा है जिसे सरकार और स्थानीय लोगों के बीच मध्यस्ता के लिए नियुक्त किया जाता है। प्रस्तुत पाठ में सरकार के नुमाइंदों को अन्य दूसरी भाषाओं का ज्ञान नहीं ऐसे में दोभाषिया उनकी सहायता करते हैं। हिंदी अनुवाद करते समय 'दोभाषी' के लिए 'दोभाषी' शब्द ही रखा गया है। प्रतीक शब्द, कम शब्दों की निहित व्यंजना में बहुत कुछ कह जाते हैं और मूल की संवेदना को लक्ष्य तक पहुंचाने में आंशिक रूप से सफल दिखते हैं। ऐसे में 'दोभाषी' बिल्कुल उपयुक्त विकल्प है।

16. Laburnum Tree (Page no. 14) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : अमलतास), पृष्ठ सं. (60)

सम्पूर्ण स्त्रोत पाठ के केन्द्र में 'लाबुरनम वृक्ष' है और प्रस्तुत कहानी-संग्रह का शीर्षक भी यही है इसलिए हिन्दी अनुवाद में इसके समकक्ष विकल्प की महत्ता बढ़ जाती है। इसे पूर्वोत्तर में कब्रों के आस-पास हेडस्टोन के नजदीक लगाये जाने का चलन है। इस वृक्ष का न केवल धार्मिक महत्त्व है अपितु यह वैभव व सम्पन्नता का भी प्रतीक है। यह पूर्वोत्तर की संस्कृति का एक अभिन्न अंग है। लक्ष्य भाषा हिंदी में इसके समतुल्य ऐसा कोई शब्द नहीं जो इसका पर्याय बन सके। सिर्फ 'अमलतास' कह देने मात्र से इसकी सांस्कृतिक अर्थाभिव्यक्ति स्पष्ट नहीं होती। तथापि 'अमलतास' से काम चलाया जा सकता है।

17. Chicken Curry (Page No. 43) (लक्ष्यपाठ रूपांतरण : गोश्त करी), पृष्ठ सं. (43)

प्रत्येक संस्कृति में खान-पान, अचार विचार के लिए विशिष्ट शब्दावली है। त्योहार, उत्सव आदि से उनका विशिष्ट संबंध होता है। 'चिकन करी' एक प्रकार का मांसाहारी व्यंजन है जिसका पूर्वोत्तर के खान-पान में विशेष महत्त्व है। उत्तर-पूर्व से इतर कश्मीर प्रांत में कुछ इसी प्रकार का व्यंजन बनाये जाने का चलन है। अतः 'चिकन करी' के पर्याय के रूप 'गोश्तकरी' शब्द का रखना श्रेयस्कर है। इससे करी में निहित स्वाद का रंग का भाव उचित रूप से रूपांतरित हो रहा है।

मूलपाठ में आये मुहावरों का तुलनात्मक अध्ययन

मूल पाठ में आये मुहावरे	अनुवाद
1. Dozed off (page No. 34)	तन्द्राभिभूत (पृ.सं. 86)
2. life-force oozed (page no. 28)	रक्त स्त्रावित होना (पृ.सं. 76)
3. Shining like ivory (page no. 38)	गजदंत की भांति चमकीला (पृ.सं. 91)
4. Tell-tale Signs (page 37)	रहस्यसूचक चिन्ह (पृ.सं. 90)
5. Cojoling and Consoling to coax (page 37)	बहलाना–फुसलाना और सांत्वना देना। (पृ.सं. 90)
6. glanced at (page 97)	नजर डालना (पृ.सं. 186)
7. added fuel to the anger (page 97)	आग घी में डालना (पृ.सं. 186)
8. drove off (page 101)	हाँक ले जाना (पृ.सं. 188)
9. Heart-rending Sob (Page 105)	हृदयविदारक सिसकी (पृ.सं. 194)
11. speak of love (page 94)	अति प्यारा होना (पृ.सं. 186)
12. Wide awake (page 6)	पूर्णतया जगा हुआ (पृ.सं. 50)
13. Gnaw at my heart (page 65)	सीने पर आरी चलाना, सीना छलनी कर देना (पृ.सं. 128)
14. Coo and smile (page 68)	प्रेम भरी बातें व मुस्कान (पृ.सं. 133)
15. Blur into dusk (page 14)	शाम का धुँधलका (पृ.सं. 66)
16. blurted out (page 11)	फट पड़ना/फूट पड़ना (पृ.सं 63)
17. In a daze (page No. 10)	स्तब्ध करना / चकाचौंध हो जाना (पृ. सं.45)

18. Burst into Shouts of Joy and relief (page no. 35)	चीख पड़ना (पृ.सं. 86)
19. put a spring to their gait (page no. 36)	चाल चपलता (पृ.सं. 87)
20. Sun-warmed gun. (page no. 22)	धूपतिक्त बंदूक (पृ.सं. 69)
21. Burst out in consrestained guffaurs (page no. 21)	लगातार ठहाका मारना (पृ.सं. 69)
22. Burst forth in all its glory of butterly-yellow splendour (page no. 20)	अपने पूरे शबाब पर हल्के पीले रंग के साथ फूट पड़ना (पृ.सं. 68)

मुहावरे और लोकोक्तियाँ समाज के सम्मिलित अनुभव की लोक कल्पना में रंगी अभिव्यक्तियाँ होती हैं। प्रत्येक मुहावरे एवं लोकोक्ति में उस भाषा के बोलने वाले की सांस्कृतिक परम्पराएँ निहित होती है। चूँकि प्रत्येक भाषा–भाषी समाज की भिन्न सामाजिक–सांस्कृतिक विशिष्टताएँ होती हैं उसमें उनके अपने सामूहिक अनुभव सम्मिलित होते हैं। इसलिए प्रत्येक भाषा में विशिष्ट मुहावरें और लोकोक्तियाँ पाई जाती हैं जिसके सांस्कृतिक संदर्भ अलग–अलग हैं। ऐसे में अनुवादक के समक्ष कठिनाई उपस्थित हो जाती है। अनुवादक को चाहिए कि जहां लक्ष्य भाषा में स्त्रोत भाषा के मुहावरे और लोकोक्ति के समान मुहावरा–लोकोक्ति उपलब्ध हो वहां उन्हें अपना ले। जहां पूर्ण रूप से समान मुहावरा–लोकोक्ति न मिले वहाँ पर अर्थ की दृष्टि से समान मुहावरा–लोकोक्ति को प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

अनुवादक के सामने सबसे कठिन समस्या तब आती है, जब उसे स्त्रोत भाषा की किसी लोकोक्ति के लिए लक्ष्य भाषा में न तो शब्द की समानता वाली लोकोक्ति मिलती है और न केवल भाव की समानता वाली। अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रकार की लोकोक्ति नहीं मिलती। ऐसी स्थिति में उसके सामने तीन ही रास्ते रह जाते हैं–

(1) लोकोक्ति का शब्दानुवाद कर दे। (2) लोकोक्ति का भावानुवाद कर दे। (3) लोकोक्ति के भाव को व्यक्त करने वाली कोई लोकोक्ति गढ़ दे।

उपयुक्त तुलनात्मक अध्ययन में क्रम.सं. 1 के मुहावरे को देखें तो मूल पाठ और लक्ष्य पाठ में शाब्दिक समानता रखने का प्रयास किया गया है। समान अर्थ वाला यह रूपांतरण स्त्रोत पाठ के संदर्भ के अनुसार अधिक उपयुक्त है क्योंकि 'डोज्ड ऑफ' का प्रयोग नींद लेने / झपकी लेने के अर्थ में नहीं किया गया है बल्कि संबंधित पाठ में, नींद से अकुलाये शिकारी के संदर्भ में इसका प्रयोग किया गया है जो शिकार की टोह में निकलता है और रात भर जगे होने के कारण भोर में नींद से तन्द्राभिभूत हो जाता है। अत: यहाँ नींद से अभिभूत या 'तन्द्राभिभूत' शब्द ज्यादा सटीक और उपर्युक्त है।

वही क्रम सं. 2 में 'लाइफ फोर्स उज्ड' अंग्रेजी मुहावरे के लिए हिंदी में उसके समानार्थी मुहावरे 'प्राण पखेरू उड़ जाना' या 'जीवन लीला समाप्त होना' नही लिया गया है क्योंकि अगर इसे लिप्यंतरित किया जाता या फिर इसके लिए हिंदी के प्रचलित मुहावरों का प्रयोग किया जाता तो कदापि स्रोत पाठ में आये मूल अर्थ का प्रसार नहीं हो पाता। क्योंकि 'हाथी के गोली लगने से घायल होकर गिरने' के संदर्भ में इस मुहावरे का प्रयोग किया गया है जो हिंदी के उपर्युक्त मुहावरों से स्पष्ट नहीं होता। यहाँ ध्यान देने की बात है कि हाथी गोली लगने से मरा नहीं बल्कि घायल हुआ था अत: यदि यहाँ 'प्राण पखेरू उड़ जाना' मुहावरे का प्रयोग कर दिया जाता तो अर्थ बिंब कदापि स्पष्ट नहीं होता। अत: भावार्थ के लिए 'रक्त रंजित होना' या रक्त स्त्रावित होना ज्यादा उपयुक्त है। यह पूर्णरूपेण

स्त्रोत पाठ के भावार्थ को लक्ष्य पाठ में अभ्यर्थित कर रहा है।

क्रम.सं. 3 और 4 और 5 में आये मुहावरों का भावार्थ अनुवाद न कर उसके शाब्दिक समकक्ष विकल्पों को लक्ष्य पाठ में रखा गया है ताकि समान अर्थ वाले समकक्ष विकल्पों से उद्धरण का सारगर्भित अर्थ प्रेषित हो सकें। 'टेल-टेल साइन' का प्रचलित हिंदी मुहावरा अनुवाद 'रहस्य सूचक चिन्ह' या 'किदवंतियां' भी है। 'किवदंतियां' किसी विशेष अर्थ में प्रयोग की जाती है जबकि 'रहस्यसूचक चिन्ह' मूल पाठ के संदर्भ के बिल्कुल करीब है। इससे अर्थ का समुचित प्रकटीकरण हो रहा है।

यदि मूल पाठ में आये मुहावरों के क्रम सं. 6, 7 और 8 का लक्ष्य पाठ के विकल्पों से तुलनात्मक अध्ययन करें तो यहाँ भी स्रोत व लक्ष्य पाठ में अधिक साम्यता नहीं दिखती। क्रम सं. 7 में 'ऐडेड फ्यूल टु द एंगर' के लिए हिंदी का प्रचलित मुहावरा 'आग में घी डालना' को विकल्प के तौर पर लिया गया है। इन दोनों अनुवादों में सिर्फ शाब्दिक भिन्नता दिखती है, प्रतीकात्मक स्तर पर लोकोक्ति के भाव को एक समान रखने का प्रयास किया गया है।

अनुदित पाठ में मुहावरा (क्रम सं. 09) Heart rending Sob (page no. 105) के लिए हृदय-विदारक सिसकी/रूदन का प्रयोग किया गया है जो शैलीगत समतुल्यता के लिहाज से उपयुक्त है। इससे स्त्रोत भाषा का संदेश या मंतव्य प्रभावकारी शैली में संप्रेषित हुआ है। हालांकि Sob के लिए हिंदी में सर्वप्रयुक्त शब्द सिसकी/सुबकना है परन्तु संदर्भ की गंभीर्यता को देखते हुए यहां रूदन के सर्वथा अनुपयुक्त होता क्योंकि कहानी की मुख्य पात्र 'मेडलमा' की माँ अपने

होनेवाले दामाद की मृत्यु की खबर को अपनी बेटी से छुपाना चाहती है इसलिए वह नेपथ्य में खड़ी होकर सुबकने का उपक्रम करती है। अतः अर्थ संप्रेषण की दृष्टि यह समतुल्यता स्थितिपरक और प्रयोज्य रूप में उपयुक्त है।

अर्थसंगति वातावरण की सृष्टि वार्तालाप, विवरण से होती है। इसमें बिंब-निर्धारण, चरित्र-चित्रण अथवा कथानक अपनी प्रतीकात्मक अर्थ योजना के आधार पर परस्पर संसक्त होते हैं और पाठ को सार्थकता प्रदान करते हैं। वास्तव में अर्थ संगति संदर्भपरक और प्रतीकात्मक होती है जो अनूदित कृति में सार्थक भूमिका निभाती है और अनूदित कृति को मूलपाठ का सहपाठ बनाती है। इसका ध्यान रखा जाना नितांत आवश्यक है।

इस संदर्भ में यदि मुहावरा क्रम सं. 14 में आया 'gnaw at my heart' के लिए हिन्दी विकल्प 'सीने पर आरी चलना' 'सीना छलनी करना' लिया गया है। जिसे स्थितिपरक संदर्भ में ही समझा जा सकता है। पाठ का अनुवाद करते हुए किसी एक शब्द को न देखते हुए समतुल्य स्थितिपरक संदर्भ में पाठ की समूची योजना को देखना चाहिए ताकि उसमें भाषिक संसक्ति के साथ अर्थ संगति भी बनी रहे। स्त्रोत पाठ में 'gnaw at my heart' पीड़ा से सीना छलनी-छलनी कर देने के संदर्भ में हुई है। किसी अप्रिय समाचार की खबर से कहानी की मुख्य पात्र का हृदय रूदन कर उठता है। चूंकि हिन्दी में इसके समतुल्य और कोई सटीक शब्द नहीं जिससे संदर्भ का अभिप्राय स्पष्ट हो अतः यही विकल्प श्रेयस्कर है।

क्रम सं. 15, 16, 17 और 18 में आये अंग्रेजी के मुहावरे क्रमशः 'Coo and smile', 'Blur into dusk', 'blurted out' and 'in a daze' का लक्ष्य पाठ में हिन्दी

रूपांतरण क्रमशः प्रेम भरी बातें व मुस्कान, शाम का धुँधलका, फट फड़ना तथा स्तब्ध करना आदि किया गया है जो संदर्भ और अर्थप्रयोजन की दृष्टि से न केवल उपयुक्त है बल्कि संदर्भ के अर्थाबिंब को भी समेकित रूप में लक्ष्य भाषा में संप्रेषित करता है। इसके अतिरिक्त अलग-अलग पर्याय भिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है जैसे- प्रेम भरी बातें व मुस्कान नायक-नायिका के प्रेमालाप के लिए तथा 'शाम का धुँधलका' शिकारी के परिप्रेक्ष्य में जंगल के रास्ते के लिए किया गया है वही 'फट पड़ना' 'गुस्से से उबल पड़ने' और 'चकाचौंध हो जाना' आश्चर्य में पड़ जाने की स्थिति को दर्शाने के लिए प्रयुक्त हुआ है जो अर्थ और बिंब की दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त और समतुल्य है।

पंचम अध्याय

अनुवाद की स्वानुभूति एवं अनुवाद की समस्याएँ

अध्याय-पाँच

अनुवाद की स्वानुभूति एवं अनुवाद की समस्याएँ

अनुवाद की समस्या पर किए गए सभी अध्ययन यह स्वीकार करते हैं कि अनुवादक को पाठगत सामग्री के भाषा और भाव को समझकर उसे लक्ष्य भाषा में अन्तरित करना होता है। किन्तु यह इतना सरल कार्य नहीं है जितना ऊपर से दृष्टिगत होता है। इस कार्य की अपनी भीतरी कठिनाइयां हैं, जिन्हें व्यावहारिकता के धरातल पर समझा जा सकता है।

प्रत्येक देश और काल की विशेष सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ होती हैं जो काल विशेष के सृजन कर्म में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। अनुवाद किए जाने पर स्रोत भाषा की ये परिस्थितियाँ, लक्ष्य भाषा के लिए कभी-कभी एकदम नयी, अजनबी और चुनौती भरी होती है। ऐसी स्थिति में समानार्थक शब्दों को सही सन्दर्भों में खोजना और उनमें वही अर्थवर्त्ता निश्चित करना जो स्रोत भाषा में विद्यमान रही है, अपने आप में बड़ी समस्या बन जाती है।

''स्रोत भाषा के शब्दों, वाक्य-विन्यास के विशेष लहजे की विशिष्टतापरक अभिव्यंजकता के समकक्ष लक्ष्य भाषा में प्रायः उपलब्ध न हो पाने की स्थिति में अनुवादक को बड़ी छटपटाहट महसूस होती है। उदाहरण के लिए यदि अनुवाद में एक वाक्य आता है-'हाल ही में खुले सेवाश्रम में अभिनव ने लगभग पन्द्रह दिन पहले ही काम शुरू किया था।' यहां 'सेवाश्रम' ऐसा शब्द है जिसके लिए अंग्रेज़ी में अनुवाद समकक्ष खोजना कठिन है। यह तत्सम शब्द है, आधुनिक सन्दर्भ में

इसका अर्थ होगा-'समाज सेवा केन्द्र'। आश्रम शब्द प्राचीन भारतीय सभ्यता-संस्कृति से जुड़ा है। यदि इस शब्द के लिए 'A centre for social service' लिखते हैं, तो 'सेवाश्रम' शब्द में निहित सम्पूर्ण अर्थगर्भी व्यंजना और शब्द से जुड़ा गांधीवादी अर्थ दूर पड़ जाएगा। 'आत्मानुशासन', 'संयम', 'अहिंसा' आदि सभी इसी से जुड़े अर्थ सन्दर्भ हैं। अर्थ-सन्दर्भ से हटते ही यह शब्द भटक जायेगा। अतः अनुवाद करते समय 'सेवाश्रम' का 'लिप्यन्तरण' करना ही बेहतर होगा। इससे अनुवाद में एक स्थानीय रंग का प्रवेश होगा, किन्तु प्रश्न यह उठेगा कि भारतीय पाठक या गांधीवाद से परिचित पाठक तो 'सेवाश्रम' का अर्थ समझ लेगा, किन्तु विदेशी भाषा और संस्कृति के ऐसे पाठक, जो इस शब्द-सन्दर्भ से परिचित नहीं हैं, को इसे समझाने में कठिनाई होगी। ऐसी स्थिति में या तो 'सेवाश्रम' को समझाने के लिए अलग से विशिष्टार्थक टिप्पणी दी जाए या शब्दगत सन्दर्भ को कोष्ठक में खोलकर रखा जाए।''[16]

अनुवादक को स्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा की गम्भीर जानकारी के लिए दोनों भाषाओं से जुड़ी संस्कृति की व्यापक जानकारी होगी तभी वह दोनों भाषाओं के सांस्कृतिक सन्दर्भों को सही परिप्रेक्ष्य में पकड़ सकेगा। साथ ही सही सन्दर्भों में दोनों भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से ठीक शब्द को ग्रहण कर सकेगा।

कभी-कभी ऐसा होता है कि अनुवादक के समक्ष जो समस्या खड़ी होती है, वह सांस्कृतिक अननुवाद्यता की होती है। स्रोत भाषा पाठ में मौजूद परिस्थितिगत तत्त्व कभी-कभी लक्ष्य भाषा में सम्पृक्त संस्कृति में बिल्कुल अनुपस्थित होता है,

---

[16] अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ, श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ एवं कृष्ण कुमार गोस्वामी, पृ. 81

जैसे परम्परागत भारतीय घरों का शब्द-'चौका'। इसे अंग्रेज़ी शब्द 'Kitchen' के समकक्ष नहीं रखा जा सकता। क्योंकि दोनों में भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के भिन्न-भिन्न अर्थ विद्यमान हैं। भारतीय शब्द 'चौका' या 'रसोई' में 'भोजन पकाने की शुद्धता और पारिवारिकता' का अर्थ विद्यमान है तथा यह शब्द भारतीय गृहिणी के समस्त त्याग-सौजन्य की अंर्तमानसिकता से जुड़ा है।

इसके लिए Kitchen अनुवाद किया जायेगा तो वांछित अर्थ ही नहीं आ पाएगा। क्योंकि वहां 'किचिन' घर से अलग केवल भोजन पकाने की जगह है और यहां 'चौका' घर के भीतर सम्पूर्ण रसायन से भरा शब्द है।

सांस्कृतिक अननुवाद्यता की सर्वाधिक बड़ी कठिनाई यह है कि जब कभी स्रोत भाषा के किसी अननुवाद्य शब्द के लिए लक्ष्य भाषा के सन्निकट शब्द को रख देने पर लक्ष्य भाषा का वाक्य-विन्यास अटपटा और असामान्य सा हो जाता तब लक्ष्य भाषा स्रोत भाषा को सोख जाती है। दूसरे शब्दों में इस बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक अननुवाद्यता वास्तव में वाक्य-विन्यासगत अननुवाद्यता होती है। वहां पर लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के समकक्ष खोजने की समस्या होती है। अतः उसे एक प्रकार की 'भाषिक अननुवाद्यता' भी कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ जापानी भाषा का एक शब्द है-'यूकाता'। यह 'यूकाता' एक ढीला-ढाला वस्त्र होता है, जिसे वहां स्त्री-पुरुष दोनों ही पहनते हैं और जापान के होटलों या सरायों में ठहरने वाले व्यक्तियों को पहनने के लिए होटल की ओर से दिया जाता है। यह एक ऐसा वस्त्र है जो घर-बाहर, सोने-तैरने से लेकर सभी कामों में पहन लिया जाता है। अगर इसका

अंग्रेजी में अनुवाद किया जाए तो समस्या यह आती है कि अंग्रेज़ी में अलग-अलग समयों पर पहने जाने वाले वस्त्रों के नाम अलग-अलग हैं-जैसे 'ड्रेसिंग गाउन', 'बाथरोब', 'हाउसकोट', 'पैजामा', 'नाइटगाउन' आदि। यहां दिक्कत यह होगी कि जापानी शब्द 'यूकाता' के लिए कौन-सा अंग्रेज़ी शब्द लिखेंगे- 'He was wearing the hotel dressing gown' या 'Hotel bath robe'। यह समस्या अर्थ-संदर्भ की दृष्टि से भिन्नता वाली भाषाओं में सर्वाधिक होती है किन्तु जो भाषाएं सांस्कृतिक दृष्टि से समानता रखती हैं जैसे- हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि, उन भाषाओं में यह समस्या प्रायः नहीं होती है।

अनुवाद करते समय अनुवादक के समक्ष स्त्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की दो संरचनाएं होती हैं-सांस्कृतिक संरचना और भाषिक संरचना। दोनों ही संरचनाएं एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं। यदि भाषा को लिखित या मौखिक रूप में प्रस्तुत घटनाओं की एक श्रृंखला कहा जाए तो यह अर्थपूर्ण होगी। अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक को दो आधारभूत संरचनाओं-भाषिक और सांस्कृतिक पर कार्य करना पड़ता है।

भाषिक अननुवाद्यता विशेष रूप से उन स्थानों पर आती है, जब स्रोत भाषा में रूपात्मक, मिथिकल और आलंकारिक प्रयोगों की भरमार हो जाती है। ऐसी स्थिति में लक्ष्य भाषा में उनके समकक्षों को खोजना टेढ़ी खीर हो जाती है। लेकिन यह समस्या मूलतः साहित्यिक अनुवाद (उसमें भी नाटक तथा काव्य के अनुवाद) की समस्या है। स्त्रोत भाषा में क्लिष्ट, रूपकात्मक और आलंकारिक प्रयोगों की भरमार के कारण प्रायः लक्ष्य भाषा में अनुवाद अस्पष्ट होकर अर्थ की अमूर्तता की

ओर बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए ''सुबरन को खोजत फिरत, कवि, व्यभिचारी, चोर'', जैसी काव्य पंक्तियों को लिया जा सकता है। इस काव्य-पंक्ति में 'सुबरन' का अनुवाद शब्द-श्लेष के कारण चक्कर में डालता है। दूसरी भाषा में इसका अनुवाद करते ही कवि के अर्थ और अभिप्रेत का सम्पूर्ण चमत्कार ठण्डा हो जाता है।

इसी प्रकार की समस्या अनेकार्थी वाक्यों या शब्दों के आने पर उत्पन्न होती है। स्त्रोत भाषा के इन अनेकार्थियों को लक्ष्य भाषा के मूल सन्दर्भ में लाकर ढालना कठिन होता है जैसे- 'रस' शब्द की पारिभाषिकता अनुवाद के लिए चुनौती पूर्ण है। भारतीय काव्य-शास्त्र के अतिरिक्त भी इस शब्द का प्रयोग आयुर्वेद का रस, पदार्थ का रस आदि अनेक रूपों में होता है। सामान्य भाषा में भी रस शब्द पाक-रस आदि के लिए खूब चलता है। ऐसा ही एक शब्द है 'धर्म'। जिसका पर्याय केवल 'Religion' नहीं होता। यह शब्द 'कर्त्तव्य' तथा 'मानवीयता' के अर्थ में ज्यादातर प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार वड्र्सवर्थ की एक प्रख्यात पंक्ति को लिया जा सकता है-'The child is father of the Man' इस वाक्य में इतने अर्थ-सन्दर्भ गर्भित है कि इसका अनुवाद हो ही नहीं पाता। 'बच्चा आदमी का पिता है', कहते ही इस शब्द की दार्शनिकता, अर्थक्षमता आदि सब कुछ समाप्तप्राय होने लगती है। मूल पंक्ति अपने में बृहत्तर अर्थ-अनुषंगों को रखने के कारण जितना व्यापक दिखता है उसका अनुवाद उतना ही छोटा और 'सीमित' अर्थवाला दृष्टिगत होने लगता है।

मिथक, प्रत्येक देश में एक खास ढंग से उत्पन्न होते रहते हैं। किसी भी जाति की जातीय अवचेतन इन्हीं मिथकों में युगों-युगों तक यात्रारत रहता है। देशबद्ध इन मिथकों का अनुवाद बहुत कठिन काम है। इसका प्रधान कारण यही है कि मिथक का एक विशिष्टतावादी लोक-सन्दर्भ होता है, जैसे- 'Tekba took his dao and Shawl'. पाठ की इस पंक्ति का अनुवाद करते समय dao को लिप्यंतरित भी किया जाए तो पूरे अर्थ का वहन नहीं हो सकता क्योंकि शब्दों के पर्याय एक जैसे नहीं होते हैं, हर पर्याय का अलग अर्थ-सन्दर्भ होता है। 'dao' के पर्याय हँसली, गड़ासा आदि है, जो अनुवाद में पूर्ण अर्थ नहीं दे सकते, क्योंकि ये शब्द पर्याय के रूप में सटीक नहीं बैठते। पूवोत्तर समाज में विशेषकर नागा समाज में मुखिया (गाँवबुराह) को सरकार की ओर से सम्मानस्वरूप शॉल और दॉव दिया जाता है। दाँव एक तरह का लौह निर्मित धारदार हथियार होता है जो तलवार की तरह दिखता है। ऐसे में हँसली और गड़ासा आदि जो आकार में छोटे होते हैं, कहीं से भी पर्याय के रूप में सटीक नहीं बैठते। गहराई से सोचें तो यह समस्या देश-विदेश के साहित्यिक अनुवाद की प्रधान समस्या है। अतः अनुवादक को ऐतिहासिक व सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य के साथ मिथिकल प्रसंगों-सन्दर्भों की सही जानकारी होनी अत्यन्त आवश्यक है।

अनुवाद की समस्या का एक पहलू शब्द-समुच्चय से जुड़ा है। प्रत्येक भाषा का शब्द-समुच्चय एक विशिष्ट समुच्चय होता है। इस शब्द-समुच्चय के भीतर अनेक उपसमुच्चय होते हैं। इन उपसमुच्चयों का निर्धारण संबद्ध भाषा की संरचना में उन शब्दों की स्थिति तथा प्रकार्य को आधार बनाकर दिया जाता है। अतएव

एक भाषा के शब्द-समुच्चयों से जैसे उपसमुच्चय बनेंगे वैसे दूसरी भाषा के शब्द समुच्चयों से नहीं।

पाठ का अंतरण करते समय बहुत सी समस्याएँ सामने आती है जिनमें प्रमुख रूप से समतुल्यता, वाक्य क्रम, व्याकरणिक संसक्ति, भाषिक ईकाई की अन्विति और पाठ में प्रस्तुत घटना, चरित्र-चित्रण, वातावरण आदि की सटीकता आदि की समस्या सबसे ज्यादा परेशान करती है। इसमें यह भी देखना होता है कि स्त्रोत भाषा का संदेश लक्ष्य पाठ में ठीक से संप्रेषित हो रहा है या नहीं। पाठ कृति से मुक्त नहीं होते, वे रचना के बीज तत्त्व होते हैं। अतः अनुवाद करते समय पाठ में निहित भावों और विचारों का तर्कपूर्ण संप्रेषण आवश्यक है।

सामाजिक अर्थों, कार्यव्यापारों और वाक्यों के बीच के संबंधों की संरचना पाठ है। वास्तव में व्याकरणिक और अर्थपरक दृष्टि से वाक्योपरि संरचना प्रोक्ति है और संप्रेषण विधि तथा रचना-प्रक्रिया की दृष्टि से यह पाठ है। पाठ का संबंध विषय के प्रतिपाद्य की संरचना और उसके प्रस्तुतीकरण से है। वास्तव में पाठ विवरण को सर्जनात्मक बनाता है। शब्द और वाक्य पाठ के अनिवार्य अंग है। साथ ही इसमें आवश्यक सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्व निहित रहते हैं। तत्त्व न केवल प्रोक्ति के स्तर पर होते हैं वरन् पाठ में निहित शब्दों, पदबंधों, वाक्यों, मुहावरों आदि के स्तर पर भी होते हैं।

''व्याकरण के स्तर पर अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद की सर्वप्रथम समस्या अंग्रेज़ी भाषा के वाक्यांशों और उपवाक्यों के अनुवाद से संबंधित है। कई बार इन वाक्यांशों और उपवाक्यों के हिंदी अनुवाद में अंग्रेज़ी भाषा की वाक्य संरचना की

प्रतिछाया स्पष्ट रूप से देखने में आती है और दूसरे वह हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुकूल भी नहीं जान पड़ते।

अंग्रेज़ी शब्दों के हिंदी पर्यायों के निर्धारण में एक समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब अनुवादक अंग्रेज़ी शब्दों का अनुवाद विषय, प्रसंग और संदर्भ को ध्यान में रखे बिना करता है। ऐसा करने से अपेक्षित अर्थ व्यंजित नहीं हो पाता और कोई अन्य अर्थ ही संप्रेषित हो जाता है।

सृजनात्मक स्तर पर अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद के दौरान आने वाली समस्याओं में सर्वप्रथम समस्या बिंबानुवाद की है। बिंबों के अनुवाद के लिए अनुवादक को सृजनात्मक प्रतिभा का धनी होना चाहिए और साथ ही दोनों भाषाओं की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए।''[17]

मूलपाठ (page no. 58)

"In private they called theire menfolk 'women' and taunted them by indirect remarks and bawdy songs about their emasculation. The men could do nothing about this because in their hearts they acknowledged the fact that they had in deed been cowed down for very long time. But there emotional upheavals were soon overshadowed by everyday realities and village once again returned to its placid ordinariners".

अनुवाद (पृष्ठ सं. 117)

''गाँव में एक बार फिर से सब कुछ सामान्य होने के बावजूद भी उस असहाय व्यक्ति के उपर हुए घातक हमले की घटना को लेकर महिलाओं में अब भी रोष था। वे मर्दों को 'औरतों' की संज्ञा देती और उनकी मर्दानगी पर छींटाकशी

---

[17] अंग्रेजी हिन्दी अनुवाद व्याकरण, प्रो. सूरजभान सिंह, पृ. 88

करते हुए उन्हें अप्रत्यक्ष टिप्पणियों के जरिये उनका मज़ाक बनाती। इस पर आदमी चुप रहते अपनी कोई प्रतिक्रिया नहीं देते। वे मन-ही-मन इस सच्चाई से अवगत थे कि वे कायर और बुज़दिल है और लंबे समय से डर के साये में जीते आ रहे हैं। परन्तु जल्द ही ज़िंदगी पुराने ढर्रे पर आ गई और एक बार फिर गाँव में पहले जैसी शांति बहाल हो गई।''

उपर्युक्त पाठ्यांश वाक्यों की संसक्त श्रृंखला से निर्मित हुई है और उसमें गाँव में हुई घटना और उस घटना पर स्त्रियों की प्रतिक्रिया स्वरूप आक्षेप-पटाक्षेप का चित्रण हुआ है। संदेश की आंतरिक संरचना और भाषिक इकाइयों की अन्विति से ये वाक्य तर्कपूर्ण और संदर्भपूर्ण अनुक्रम से परस्पर जुड़े पाए हैं। चूँकि पाठ में प्रोक्ति अंर्तग्रंथित होती है और प्रोक्ति में वाक्यों के बीच व्यक्त अथवा अव्यक्त रीति से एक संबंध है इसलिए पाठ जीवंत, स्वायत्त और स्वतंत्र ईकाई के रूप में यहां प्रतिष्ठित है और संदर्भ के धरातल पर यह विशिष्ट अर्थ देता है।

पाठ में छोटे-छोटे उपवाक्य मिलकर एक पूरी वाक्य-प्रक्रिया का निर्माण करते हैं। उपर्युक्त गद्यांश में 'Menfolk' के लिए 'मर्द' का प्रयोग किया गया है जो गाँव के समूचे मर्द समुदाय का सूचक है। चूँकि 'मेनफोल्क' का शाब्दिक अर्थ यदि देखें तो 'मर्दसमुदाय' या 'पुरुषझुंड' है जो कि पाठ के अर्थाभिव्यक्ति के सर्वथा प्रतिकूल है। चूँकि गद्यांश में प्रारंभ वाक्य से ही यह स्पष्ट है कि यह शब्द पुरुष विशेष समुदाय के लिए प्रयुक्त हुआ है। अतः लक्ष्य पाठ के अनुवाद में 'पुरुष' का प्रयोग अर्थ और भाव को ज्यादा सटीकता से प्रस्तुत करता है। गद्यांश में कई जगह वाक्यों का अन्विति को देखते हुए वाक्यों का लोप भी कर दिया

गया है क्योंकि वाक्य के अवयव जो कि शब्द होते हैं अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रखते। कथन के समग्र अर्थ की प्राप्ति वाक्य से ही होती है। शब्दों तथा वाक्यों के साथ वाद एवं सहवाद करके ही भाषान्तरण का संवाद संभव है।

मूलपाठ (Page no. 103)

"Or was he so confident of my love for him that even after so many years and so many barriers between us he believed that I would still do his bidding? I shall never know. In the meantime the convoluted politics of the ravaged land continue in the self-diminishing moves and counter moves of people living in Limbo. And I? I live on with the debris of a passionate carnival because I had oince loved a dream-chaser named Sonny."

अनुवाद (पृष्ठ सं 166)

''या फिर उसे मेरे प्रेम पर इतना भरोसा था कि इतने वर्षों और इतनी बाधाओं के बावजूद भी मैं अब भी उसका साथ दूंगी। मुझे कभी नहीं पता नहीं होगा। इस बीच विध्वसंकारी भूमि की राजनीति अपनी गति से स्वक्षीण होती रही और लोगों के प्रतिक्रियात्मक कदम भी द्वंद्वात्मक रहे। और मैं? मैं उस रंगारंग जुनूनियत के खंडहर पर खड़ी रह गई क्योंकि मैंने कभी सोन्नी नाम के सपनों के सौदागर से प्रेम किया था।''

यद्यपि अनुवाद एक तरह का भाषिक संवाद है और इसमें शब्द तथा वाक्य वाद और सहवाद की भूमिका में होते हैं। भाषान्तरण में शब्दान्तरण की बड़ी भूमिका होती है। यह सर्वप्रथम स्त्रोत भाषा के लिए शब्द के लिए लक्ष्य भाषा में पर्याय निर्धारित करने के माध्यम से घटित होता है। यदि हम उपर्युक्त गद्यांश के

एक पाठ प्रोक्ति जैसे- "I would still do him bidding" को देखें तो अंग्रेज़ी के इस कथन के लिए हिन्दी में यदि कहा जाए, ''मैं अभी भी उसकी बोली लगाऊंगी'' अथवा ''मैं अब तक उसका वचन निभाऊंगी'' तो स्पष्ट है कि इस भाषान्तरण में शब्दों के जिस पर्याय का प्रयोग है वे अभीधात्मक नहीं, बल्कि व्यंजनात्मक है। दोनों कथनों का रंगबोध बड़ा मोहक है।

मूल कथन में 'bidding' 'सहयोग', साथ या 'पक्ष लेने' के संदर्भ में प्रयुक्त हुआ है। हिन्दी में अनुवाद करते समय हिन्दी की प्रकृति में संगत लगने वाले विशेषणों का ही प्रयोग करना पड़ेगा। अर्थ-संगति में वातावरण और संवादों का विवरण संदर्भपरक अर्थवत्ता प्रदान कर रहा है। अनुवाद की दृष्टि से पाठ के अभिव्यंज़क कथ्य की विवेचना करने के लिए संसक्ति और अर्थ-संगति की युक्तियाँ इस अंश में देखी जा सकती है:-

मूल पाठ में आये शब्द	**लक्ष्य पाठ में प्रयुक्त पर्याय**
1. bidding	साथ देना
2. ravaged	विध्वंसक
3. dream Chaser	सपनों का सौदागर
4. Carnival	रंगारंग कार्यक्रम
5. Convoluted	कुंडलित

पहले, दूसरे व अंतिम वाक्य में क्रमशः bidding, ravaged, dream chaser carnival तथा convoluted के लिए साथ देना, विध्वंसक, सपनों का सौदागर, रंगरेलियाँ तथा कुंडलित का पर्याय रखा गया है। 'Carnival' शब्द का हिन्दी पर्याय

प्रचलित रूप से 'उत्सव' या 'त्योहार' रखा जाता है परंतु गद्यांश में Carnival की अभिव्यक्ति अर्थगत रूप में आमोद-प्रमोद व रमणीयता के संदर्भ में किया गया है। भाषाओं में अन्तर ध्वनि, शब्द, पर्याय, परसर्ग, वाक्य, रूप, प्रोक्ति या भाषिक स्वभाव अथवा सांस्कृतिक संदर्भ के स्तर पर पाया जाता है।

मूल पाठ (Page no. 90)

"Neither of us uttered the dreaded word. But 'China' now stood between us, like an impossible ridge of ice buliding my vision with its brilliance and enormity and numbing my senses with its inevitability. It threatened to eclipse the deep love we had shared for the last three years".

अनुवाद (पृष्ठ सं. 170)

''हम से किसी ने भी एक दूसरे को कोसा नहीं। किन्तु 'चीन' भी एक जड़ स्तंभ की भाँति हमारे बीच खड़ा था जो आँखें चौंधिया देनेवाली और विशालता से मुझे अनुभूति शून्य कर रहा था। जिसने तीन वर्षों के हमारे प्रेमसिक्त पलों को निस्तेज करने पर मजबूर किया।''

प्रस्तुत पाठ में शैलीगत समतुल्यता बनाए रखने के लिए अनूदित पाठ को अलंकारपूर्ण या अतिरंजित बनाए रखने का प्रयास किया गया है। इससे स्त्रोत भाषा का संदेश या मंतव्य प्रभावकारी शैली में संप्रेषित हुआ है। जैसे- But 'China' now stood between us like an impassble ridge of ice blinding my vision with its brilliance and enormity and numbing my senses with its inevitability". ''किन्तु चीन अभी भी एक जड़ स्तंभ की भांति हमारे बीच खड़ा था जो आंखें चौंधिया देने वाली अपनी प्रभा और विशालता से मुझे अनुभूति शून्य कर रहा था। और जिसने तीन वर्षों के हमारे प्रेमसिक्त पलों को निस्तेज करने पर

मजबूर कर दिया।'' उपर्युक्त पाठ का अनुवाद अलंकारपूर्ण है। अनूदित पाठ के वाक्य (3) में 'numbing my senses' के लिए 'अनुभूतिशून्य' का प्रयोग किया गया है। चूँकि यह शैलीगत प्रयोग है और शब्दानुवाद से इतर इसमें भावाभिव्यक्ति पर ज्यादा ज़ोर दिया गया है जो पाठ के मूल भाव के भावांतरण के लिए अतिआवश्यक है। हाँलाकि यहाँ 'numbing my senses' के लिए 'इंद्रियों को सन्न करना' भी लिखा जा सकता था। परंतु हिंदी की प्रकृति में संगत लगने वाले पर्यायों का ही प्रयोग उचित व श्रेयस्कर होता है। वैसे भी अनुवाद एक अन्तरभाषिक पर्याय प्रतिस्थापन ही तो है। पाठ में कई स्थानों पर पर्यायों का अभीधात्मक नहीं बल्कि व्यंजनात्मक प्रयोग किया गया है। जो अंग्रेज़ी की प्रकृति के अनुसार है यथा- 'eclipse' के लिए 'निस्तेज', 'deep love' के लिए 'प्रेमसिक्त पल' तथा 'dreaded word' के लिए 'कोसना'।

शब्द-पर्याय के निर्धारण में अर्थ की सूक्ष्मता एक बड़ी समस्या है। ऊपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थ में सूक्ष्म अंतर होता है। शब्दों के हिंदी पर्याय निर्धारित करने में बड़ी समस्या का सामना करना पड़ता है, क्योंकि इन शब्दों में उपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थों में अंतर है।

मूलपाठ (page no. 86)

"She Sat in front of Tekaba's enclosure and when the captain approached her, she stood up and made as if to take off her waist cloth which he knew was ultimate insult a Naga woman could hurt at a man signifying his emasculation".

अनुवाद (पृ.सं. 163)

''वो उस टेंट के पास बैठ गई जहाँ टेकबा को रखा गया था और जैसे ही कैप्टन

उसके करीब आया, झट से खड़ी हो गई और अपने कमर से नीचे बँधी साड़ी (जिसे स्थानीय भाषा में मेखला कहते हैं) को उतारने का अभिनय करने लगी। कैप्टन के लिए यह स्थिति शर्मशार करने वाली थी। किसी नागा महिला का इस प्रकार कपड़े उतारना पुरुष की नपुंसकता का सूचक है। कैप्टन को यह अच्छी तरह मालूम था।''

अंग्रेज़ी के मूल पाठ की अभिव्यक्ति उस घटना का विवरण है जिसमें नागा विद्रोहियों को भारतीय सेना के जवान मुखबिरी के आरोप में उठाकर कैंप तक ले जाते हैं। इनमें कबीले का प्रमुख टेकबा भी है जो कहानी की मुख्य पात्र इम्डोंगला का पति है। जब इम्डोंगला को अपने पति की गिरफ़्तारी की खबर लगती है तो वह तुरंत कैंप पहुंचती है और कैप्टन से अपने पति को रिहा करने की गुज़ारिश करती है। कैप्टन के नहीं मानने पर विरोधस्वरूप अपने कपड़े उतारने लगती है। यहाँ पाठ में एक खास तरह के परिधान (जिसे पूर्वोत्तर में महिलाओं द्वारा विशेषकर पहना जाता है जिसे 'मेखला' कहते हैं) का ज़िक्र हुआ है। प्रत्येक समाज में वेश-भूषा और खान-पान का अपना तरीका होता है। 'मेखला' पूर्वोत्तर की महिलाओं का खास पहनावा है। जैसे उत्तर भारत में साड़ी मुख्य पहनावे के रूप में प्रचलित है ठीक वैसे ही उत्तर-पूर्व में 'मेखला' परिधान का एक प्रमुख अंग है। इसके लिए अंग्रेज़ी भाषा में 'Waist cloth' का प्रयोग हुआ है। अगर पाठ में आये भौगोलिक स्थिति व पहनावे की अनदेखी करते हुए इसका अनुवाद 'कमर का कपड़ा' या 'कमरवस्त्र' या 'कमर परिधान' कर दिया जाता तो कदापि पाठ का अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाता।

ऐसी स्थिति में यदि शब्द सांस्कृतिक अर्थ में प्रयुक्त होने वाली अमूर्त भावना अथवा संकल्पना से संबंधित हों तो उस स्थिति में उस समाज में प्रयुक्त रीति-रिवाज अथवा परिवेश के अनुसार ही अनुवाद किया जाना चाहिए और पादटिप्पणी देकर उसका अर्थ समझाना चाहिए।

मूलपाठ (Page No. 88)

"The nagging missigivings about these sporadic killing notwithstanding. I came to my hometown, little knowing that the murky politics of a contested land would once again rip apart my assiduously restructure life".

अनुवाद (पृष्ठ संख्या 165)

''छिटपुट हत्या की घटनाओं से मुझे अक्सर दुख होता फिर भी मैं अपने गृहशहर आयी थी लेकिन मुझे जरा भी एहसास न था कि संघर्ष की भूमि की रक्तरंजित राजनीति ने बेहद करीने से संजोये मेरे जीवन को एक बार फिर हिलाकर रख दिया।''

सबसे अधिक कठिनाई सांस्कृतिक अनुवादों में आती है। हर संस्कृति की कुछ अपनी विशेषताएं होती है। अत: उन विशेषताओं के अनुरूप उस संस्कृति की भाषा में कुछ विशिष्ट शब्द और अभिव्यक्तियाँ होती है। ऐसे शब्दों और अभिव्यक्तियों का अनुवाद करना टेढ़ी खीर है, क्योंकि अन्य संस्कृतियों में पनपी भाषाओं में यह आवश्यक नहीं कि उसके समकक्ष अभिव्यक्ति मिले ही, और यदि अभिव्यक्ति नहीं मिली तो अभिव्यक्ति का पैनापन समाप्त हो जाता है। उपर्युक्त पाठ में हालांकि सांस्कृतिक अभिव्यंज़ना की स्पष्ट अभिस्वीकृति नहीं हुई है परंतु हर शब्द का अर्थबिम्ब का प्रभाव पड़ा है जो सांस्कृतिक, भौगोलिक तथा सामाजिक

पृष्ठभूमि से सम्बद्ध है। यथा "assiduoury restructure life" के लिए 'करीने से संजोये मेरे जीवन को' आया है जाहिर है यहां हिंदी पर्याय 'सावधानीपूर्वक संभाला गया' या 'वर्षों से संजोये जीवन' हिन्दी पर्याय रखे जा सकते थे परन्तु स्त्रोत भाषा के सभी शब्दों के लिए लक्ष्य भाषा में प्राप्त शब्द आंतरिक, बाह्य तथा प्रभाव की दृष्टि से सर्वदा समान नहीं होते अत: उस शब्द का प्रतिशब्द कोशीय अर्थ ही दे पाता है। अत: यहाँ थोड़ी स्वतंत्रता लेते हुए शब्दानुवाद न कर पाठ के भाव के अनुकूल शब्द प्रतिचयन किया गया है। इससे अनुवाद में प्रवाहमयता बनी है और पाठ का मूल अर्थ भी संदर्भ के अनुसार समझ आ रहा है।

मूलपाठ (Page No. 89)

"I break into tiny shards, so taut was I with my unutterable grief. My mother burst into the room but when she saw my face she knew I'd heard and quaetly withdrew, almost on tiptoe".

अनुवाद (पृष्ठ सं. 166)

'मैं तो मानो मिट्टी के घड़े की मानिंद बिखड़ गई। जड़ीभूत पीड़ा ने जैसे कसकर जकड़ लिया हो मानों। मेरी माँ कमरे में फूट-फूट कर रो पड़ी। पर जब उसकी नज़र मुझ पर पर गई तो उसे लगा कि मैं सबकुछ जान गई हूं इसलिए वो दबे पांव बाहर निकल गई।'

अनुवाद के प्रसंग में दो भाषाओं की संरचनाओं में समान अभिव्यक्ति के लिए पाया जानेवाला अन्तर यार व्यतिक्रम अथवा विपर्यय से है। अनुवाद करते समय स्त्रोत और लक्ष्य भाषाओं के बीच विद्यमान अन्तर अथवा असंगत स्थितियों का प्राय: सामना करना पड़ता है। उदाहरणार्थ- I break into tiny shards, so that was

I with my unutterable grief" के लिए मैं तो मानों मिट्टी के घड़े की मानिंद टूटकर विखर गई। जड़ीभूत पीड़ा ने जैसे कसकर जकड़ लिया हो मुझे'' अनुवाद किया गया है। मूल भाषा में जो बात कही गई है उसे उसी तरह लक्ष्य भाषा में अभिव्यक्त नहीं किया गया है। ध्वनि, लिपि, शब्द, अर्थ, वाक्य, व्याकरण और संस्कृति, भाषा के विभिन्न अंग-उपांग होते हैं और इन स्तरों पर स्त्रोत और लक्ष्य भाषाएँ काफी भिन्न होती है। प्रस्तुत वाक्य में मूल की तुलना में लक्ष्य का अनुवाद एकदम भिन्न हुआ है ताकि उसके संदर्भ अर्थ को सहेजा जा सके।

मूलपाठ (Page no. 74)

"I did try to ward him off but he was like an enraged bull and his passion was brutal. When he was done, he held on to me and would not let go of my body lying almost naked next to him. He tried to say something and I began to collect my clothes in order to slip out and make for the village. But no, something stirred in him and he pinned me to the ground and took me once more".

अनुवाद (पृ. सं. 141)

''मैंने उससे छूटने की कोशिश की पर वो तो एक खूंखार मदमस्त सांड में बदल चुका था। वो क्रूरता की हद तक जुनूनी बन गया था। जब तक वो तृप्त न हो चुका उसने मुझे उठने न दिया। उसने कुछ कहना चाहा। मैं रूकी नहीं अपना कपड़ा समेट उठने लगी। पर उसके दिमाग में तो कुछ और ही चल रहा था। उसने मेरा हाथ खींच ज़मीन पर पटक दिया और दूसरी बार मेरा बलात्कार किया।''

उपर्युक्त पाठ के संदर्भ में एक समस्या आड़े आती है वह है मूल क्रिया के साथ विभिन्न adverb particles जोड़ने से अर्थ की विभिन्नता। जैसे 'take' मूल क्रिया

के साथ 'after', 'at', 'into', 'far' आदि adverb particles जोड़ देने से इनके अर्थ भी बदल जाते हैं। 'Ward off' का हिंदी पर्याय है 'भगाना' या 'हड़काना' परंतु पाठ के संदर्भ में इसका अनुवाद पकड़ से छूट निकलना ही ज्यादा उपयुक्त है।

मूल पाठ (Page no. 55)

"With hatred in their hearts and murder in their eyes the men started to count the amounts due from each and placed them in front of the headman."

अनुवाद (पृष्ठ संख्या 113)

''दिलों में नफरत और आँखों में खून भरकर उसके आदमियों ने हरेक से उसकी बकाया राशि वसूली और सरदार के सामने रख दिया।''

सृजनात्मक अनुवाद में एक बड़ी समस्या अंग्रेज़ी के मुहावरों और लोकोक्तियों के हिंदी अनुवाद की है। अंग्रेज़ी में कुछ मुहावरे और लोकोक्तियाँ ऐसे हैं जिनका समतुल्य हिंदी में आसानी से उपलब्ध हैं जैसे- 'To build castles in the air' के लिए 'हवाई किले बनाना', 'To throw mud' के लिए 'आंखों में धूल झोंकना' आदि। किन्तु ऐसे मुहावरे और लोकोक्तियाँ भी है जिसके हिंदी में समतुल्य आसानी से नहीं मिलते और उनके भाव को दृष्टि में रखकर ही अनुवादक को हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुरूप सृजन करना होता है। जैसे- उपर्युक्त पाठ में 'hatred in their hearts and murder in their eyes" के समतुल्य हिंदी भाषा में कोई पर्याय उपलब्ध नहीं है।

मूलपाठ (Page no. 39)

"He tore out a tuft of his hair and blew it towards the haunted forest, and without a backward glance retraced his steps towards the village. And

that night, for the first time since the boar hunt, Inchanok slept like a baby in his wife's embrace".

अनुवाद (पृष्ठ सं. 92)

''उसने अपने बालों का एक गुच्छा तोड़ा और उस भूतिया जंगल की ओर उड़ा दिया और बिना पीछे मुड़े अपने गाँव की ओर चल पड़ा। और उस रात पहली बार इमचानोक, अपनी पत्नी की गोद में एक बच्चे की भाँति सुकून से सोया।''

सृजनात्मक अनुवाद के स्तर पर एक समस्या मिथकीय सादृश्यों की आती है। ये मिथकीय सादृश्य पात्रों एवं स्थानों के नाम, रचनाओं के शीर्षकों, घटनाओं आदि के रूप में प्रस्तुत होते हैं और ये सभी अपने में कोई न कोई मिथक लिए रहते हैं। ऐसे अनुवाद में अनुवादक का इन मिथकीय सादृश्यों की पृष्ठभूमि से अवगत होना अति आवश्यक होता है अन्यथा अनुवाद के साथ न्याय नहीं हो पाता है। उदाहरण के लिए उपर्युक्त पाठ में 'haunted forest' और without a backward glanced retraced his steps towards the village' का प्रयोग हुआ है, ऐसे शब्दों के अनुवाद में कठिनाइयां सामने आती है। 'हांटेड फारेस्ट' का प्रयोग 'भूतिया जंगल' के लिए तो without a 'backward glanced' का प्रयोग पाठ में एक प्रचलित मान्यता के लिए हुआ है। स्थान विशेष में लोगों की ये मान्यताा है कि जादू-टोना या कालाजादू आदि से संबंधित कोई अनुष्ठान संपन्न करने के उपरांत पीछे मुड़कर नहीं देखना चाहिए इससे उपरी हवायें या भूत-प्रेत उस व्यक्ति विशेष के पीछे चलने लगती है। ऐसे में समतुल्य शब्द अनुपलब्ध होने की स्थिति में उन्हें ज्यों का त्यों लक्ष्य भाषा में रखा जाना चाहिए और उन्हें पाद टिप्पणियों के माध्यम से स्पष्ट कर देना चाहिए। ऐसा करने से अपेक्षित अर्थ व्यंजित नहीं हो पाता और कोई अन्य

अर्थ ही संप्रेषित हो जाता है। उदाहरण के लिए affirmation का सामान्य अर्थ है 'पुष्टीकरण', किंतु विभिन्न विषयों में इसका अर्थ भी भिन्न भिन्न हो जाता है, जैसे- प्रशासन के संदर्भ में इसका अर्थ 'प्रतिज्ञा' या 'पुष्टि' भाषा विज्ञान में 'सकारात्मक', राजनीतिशास्त्र में 'समर्थनात्मक' विधि में सत्य की घोषणा करना। इसी प्रकार 'charge' का अर्थ प्रशासन में 'कार्यभार' राजनीतिशास्त्र में 'दोष' वाणिज्य में 'उधार' और 'एकाउन्टस' में 'व्यय' होगा।

इसी प्रकार एक अन्य समस्या विभिन्न प्रसंगों में मूल शब्द का पर्याय बार-बार बदलने की है। अंग्रेज़ी में सामान्य एवं साहित्यिक शब्दों के विभिन्न प्रयोगों में बँधी संकल्पनाओं की परिभाषिकता के अनुसार हिंदी में उनके एक ही पर्याय रूप से काम न चलने के कारण शब्द संयुक्तियां बनाते समय अनेक प्रसंगों में मूल शब्द के पर्याय को बार बार बदलना पड़ता है। जैसे- general option, general house, general qualification के पर्याय निर्धारण में यदि प्रत्येक मूल का पर्याय 'साधारण' रख दिया जाये या 'सामान्य' रख दिया जाये तो यह हास्यास्पद ही होगा। जैसे कि 'साधारण मत', 'साधारण सदन', 'साधारण योग्यताएँ'। इसी प्रकार 'general election' के लिए 'आम चुनाव' general principle' के लिए 'सामान्य सिद्धांत' और 'general welfare' के लिए सामान्य हित ही स्वीकार्य होंगे।

एक समस्या उस समय आती है जब अनुवादक को अंग्रेज़ी के एक शब्द के लिए हिंदी में एक ही अर्थ के बोधक कई कई शब्दों में किसी एक का चुनाव करना पड़ता है। उदाहरण के लिए 'government' के लिए 'सरकार', 'राज्य', 'हकूमत', 'शासन' तथा discussion के लिए 'परिचर्चा', 'बहस', बातचीत आदि शब्द

समस्या उत्पन्न कर देते हैं कि वह कौन-सा शब्द चुने। कई बार एक ही अर्थ के बोधक होने पर भी इन शब्दों में सूक्ष्म अंतर पाया जाता है और वाक्य विशेष में अर्थ की दृष्टि से किसी शब्द विशेष का ही प्रयोग करना पड़ता है।

इस संदर्भ में अगली समस्या अंग्रेज़ी के मूल शब्दों के व्युत्पन्न शब्दों (derived words), विकल्प शब्दों एवं संपूर्तियों के पर्यायों की आती है। जैसे- translate के लिए 'अनुवाद करना', translation के लिए 'अनुवाद' और translated के लिए 'अनूदित' पर्याय ही ठीक है। 'Translated book' का अनुवाद यदि 'अनुवाद की पुस्तक' कर दिया जाए तो अनर्थ ही होगा क्योंकि इसका अनुवाद होना चाहिए 'अनूदित पुस्तक'।

अनुवाद में पर्याय निर्धारण की समस्या, बहुआयामी किन्तु सृजनात्मक होती है। यह समस्या मुख्यतः भाषान्तरण के क्रम में पैदा होती है। भाषान्तरण दरअसल शब्दान्तरण है जो सम्भव होता है, अन्तरभाषिक पर्यायों के माध्यम से। इसमें एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा के शब्दों से प्रतिस्थापित किया जाता है। इस तरह अनुवाद अन्तरभाषिक पर्याय प्रतिस्थापन भी है। इसमें दो भाषाओं के ज्ञान और दक्षता की बड़ी भूमिका होती है। यह भूमिका अनुवादकर्ता से जुड़ी होती है, जिसे किसी भाषा विशेष की शाब्दिक संरचना को दूसरी भाषिक संरचना में परिवर्तित करना पड़ता है।

शब्द पर्याय के निर्धारण में अर्थ की सूक्ष्मता एक बड़ी समस्या है। उपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थ में सूक्ष्म अंतर होता है। जैसे पाठ में आए कुछ शब्द मसलन 'part', 'section', 'department' आदि। इनके पर्याय हिंदी में क्रमशः 'भाग',

'अनुभाग' 'प्रभाग' होंगे। इसी प्रकार 'Lecture', 'speech', 'chatter', 'conversation', 'discussion', 'briefing' आदि शब्दों के हिंदी पर्याय निर्धारित करने में अनुवादक को समस्या का सामना करना पड़ता है क्योंकि इन शब्दों में उपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थों में अंतर है।

अंग्रेज़ी शब्दों के हिंदी पर्यायों के निर्धारण में एक समस्या उस समय उत्पन्न होती है जब अंग्रेज़ी शब्दों का अनुवाद विषय, प्रसंग और संदर्भ को ध्यान में रखे बिना किया जाता है।

''विभिन्न शास्त्रीय विषयों की अभिव्यक्ति के लिए पारिभाषिक शब्द बड़े ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। शास्त्रीय विषयों में यह बहुत आवश्यक होता है कि वक्ता या लेखक जो कहना या लिखना चाहे, श्रोता या पाठक तक वह बात ठीक उसी रूप में बिना अर्थ-विस्तार या अर्थ-संकोच के स्पष्ट एवं असंदिग्ध रूप में पहुँच जाय। ऐसा तभी हो सकता है जब उस विषय के संकल्पनासूचक या वस्तुसूचक पारिभाषिक शब्द सुनिश्चित हो। यह सुनिश्चियन दो दिशाओं में होता है। एक तो यह कि उस शब्द के अर्थ में उसी शब्द का प्रयोग करते हों। यदि अर्थ निश्चित नहीं होगा तो उसका प्रयोक्ता उसे एक अर्थ में प्रयुक्त करेगा और श्रोता या पाठक उसे दूसरे अर्थ में लेगा।''

पाठ में आए लिप्यंतरित शब्द

मूल अंग्रेज़ी शब्द	हिन्दी में अनुवाद
Sahib (page no. 49)	साहिब
Captain (page no. 86)	कैप्टन

Christamas (page 95)	क्रिसमस
tie (page no. 95)	टाई
Gaonburah (Page no. 81)	गाँव बुराह
Assam Rifle (Page no. 72)	असम राइफल
Collie (Page no. 63)	काली
Shawl and dao	शॉल और दाव
Naga (Page no. 55)	नागा
Babus (Page no. 56)	बाबू
Chairman (Page no. 13)	चेयरमैन
Kilometres (Page no. 19)	किलोमीटर
Sambar (Page no. 22)	सांबर
bullet (Page no. 28)	बुलेट
Engineer (Page no. 73)	इंजिनियर
Jacket (Page no. 81)	जैकेट
tax (Page no. 82)	टैक्स
Havildar (Page no. 84)	हवलदार
truck (Page no. 85)	ट्रक
Army (Page no. 85)	आर्मी
Jungle (Page no. 86)	जंगल
Phone (Page no. 95)	फोन

town (Page no. 97)	टाउन
papa (Page no. 100)	पापा
taxi (Page no. 100)	टैक्सी
Bag (Page no. 101)	बैग
Bank (Page no. 102)	बैंक
Floppy (Page no. 101)	फ्लॉपी
Machine (Page no. 47)	मशीन
Camp (Page no. 46)	कैम्प
Cartoons (Page no. 45)	कार्टून
rickshaw (Page no. 43)	रिक्शा
train (Page no. 42)	ट्रेन
railway (Page no. 42)	रेलवे
Station (Page no. 41)	स्टेशन
Cigarette (Page no. 32)	सिगरेट
Circus (Page no. 31)	सर्कस
Pulao (Page no. 43)	पुलाव
tin (Page no. 43)	टिन
Sweaters (Page no. 50)	स्वेटर
Suitcase (Page no. 50)	सूटकेश
Cup (Page no. 52)	कप

agent (Page no. 57)	एजेंट
postbox (page no. 61)	पोस्ट बॉक्स
Commander (Page No. 47)	कमांडर
Daal (Page No. 48)	दाल
Curry (Page No. 48)	करी
Camp (Page 49)	कैम्प
Uncle (Page No. 34)	अंकल
Karhai (Page No. 32)	कड़ाही
Dobhashi (Page No. 23)	दोभाषी
Madam (Page No. 19)	मैडम
Kilometres (Page No. 19)	किलोमीटर
Picnic (Page No. 19)	पिकनिक
Easter (Page No. 1)	ईस्टर
Baba (Page No. 44)	बाबा

लिप्यंतरण से तात्पर्य है लिपि-परिवर्तन अर्थात् किसी लिपि में लिखे शब्द के उच्चारण का ध्यान रखते हुए उसे दूसरी लिपि में लिखना। शब्द का लिप्यंतरण करने के लिए एक लिपि की ध्वनियों के लिए दूसरी लिपि की ध्वनियों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार स्त्रोत भाषा के शब्दों का लक्ष्य भाषा में लिप्यंतरण करने के लिए ध्वनि-विज्ञान का सहारा लेना पड़ता है।

अनुवाद करते समय अंग्रेज़ी के अनेक शब्दों का हिंदी में भावार्थ लिखने की बजाय

उन्हें यथावत् देवनागरी में लिखना होता है। इस प्रकार के शब्दों की संख्या अधिक होने के कारण अंग्रेज़ी से हिंदी में लिप्यंतरण के नियम निर्धारित है। लिप्यंतरण अनुवाद की भांति भूमिका निभाता है। लिप्यंतरण द्वारा शब्द के स्वरूप की पूर्ण रक्षा हो जाती है और उसमें निहित भाव-विशेष को हू-ब-हू व्यक्त किया जा सकता है। प्रत्येक समाज की अपनी-अपनी धार्मिक, दार्शनिक, आर्थिक, सामाजिक आदि विविध संकल्पनाएँ होती हैं। अनुवाद में उन्हें लिप्यंतरण के अलावा यथावत व्यक्त करना संभव नहीं होता। हिंदू समाज में, आत्मा, कर्म; जापानी समाज में इकेबाना, निप्पन; ब्रिटिश समाज में टोरी, विग जैसी संकल्पनाओं के कुछ उदाहरण है। इन संकल्पनाओं को यदि अनूदित रूप में प्रस्तुत किया जाय तो भरसक कोशिश करने पर भी इनके भाव की रक्षा नहीं हो पाएगी जबकि लिप्यंतरण शत-प्रतिशत वही भाव व्यक्त करने में समर्थ होता है। लिप्यंतरण के अन्य उपयोगों में अंतरराष्ट्रीय प्रतीकों की अभिव्यक्ति, स्थानों, पुस्तकों, कंपनियों के अन्य उपयोग भी सम्मिलित हैं जिनका एक ही जगह पर संकलन कर देना संभव नहीं है। इस प्रकार लिप्यंतरण अनुवाद का एक पहलू होने के साथ-साथ उसका अभिन्न अंग भी है।

व्याकरण के स्तर पर अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद की सर्वप्रथम समस्या अंग्रेज़ी भाषा के वाक्यांशों (Phrases) और उपवाक्यों (Clauses) के अनुवाद से संबंधित है। कई बार इन वाक्यांशों और उपवाक्यों के हिंदी अनुवाद में अंग्रेज़ी भाषा की वाक्य संरचना की प्रतिछाया स्पष्ट रूप से देखने में आती है और दूसरे वह हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुकूल भी नहीं पड़ते। उदाहरण के लिए, 'This is a

medicine which can cure every disease' और 'He was asked to deliver a speech for which he was not at all prepared' का अनुवाद यदि 'यह एक ऐसी औषधि है जो हर बीमारी का इलाज कर सकती है' और 'उसे ऐसा भाषण देने को कहा गया जिसके लिए वह तैयार नहीं था', किया जाय तो यह हिंदी की प्रकृति के अनुकूल नहीं जान पड़ता क्योंकि इस पर अंग्रेज़ी भाषा की छाप स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। ऐसे वाक्यों में वाक्यांशों (Phrases) के स्थान पर यदि कोई अन्य उपयुक्त शब्द प्रतिस्थापित कर दिया जाय और फिर उस वाक्य का अनुवाद किया जाए तो काफी हद तक इस समस्या का समाधान हो सकता है। जैसे उपर्युक्त वाक्यों में 'Which can cure every disease' और 'For which he was not at all prepared' वाक्यांशों के के लिए क्रमशः 'panacea' और 'extempore' शब्दों को प्रतिस्थापित करके अनुवाद को सहज बनाया जा सकता है। अर्थात् 'This medicione is a panacea' और 'He was asked to deliver on extempore speech' का अनुवाद क्रमशः 'यह औषधि रामबाण है' और 'उसे अचानक भाषण देने को कहा गया' किया जा सकता है, जो कि हिंदी की प्रकृति के अधिक निकट है।''[18]

अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद की व्याकरण के स्तर पर अगली समस्या अंग्रेज़ी की अनेकार्थक सहायक क्रियाओं (auxiliaries) की है। विभिन्न संदर्भों एवं प्रसंगों में ये सहायक क्रियाएँ भिन्न अर्थ की प्रतीति कराती हैं जिससे अनुवादक के लिए यह समस्या उत्पन्न हो जाती है कि वह कौन से अर्थ को ग्रहण करे। इस विषय में

---

[18] हिंदी-अंग्रेजी व्याकरणिक संरचना, शर्मा, रमेश चंद्र, पृ. 77

अनुवादक को बहुत सोच–समझकर ही सही अर्थ ग्रहण करना चाहिए। उदाहरण के लिए, 'have को 'लेना/करना' (take), 'देना' (give), 'आना' (come), 'आनन्द उठाना' (enjoy), 'अनुभव करना' (encounter) तथा 'स्वामित्व' (possession) आदि विभिन्न अर्थों में प्रयोग किया जाता है। कई बार वाक्यों में इसके प्रयोग से यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि यह किस अर्थ विशेष को व्यक्त करती है इसलिए अनुवाद में अशुद्धि की सम्भावना बनी रहती है। अनुवादक यदि इन अर्थों से परिचित न हो या वह इन्हें समझने में ज़रा भी चूक जाए तो अर्थ का अनर्थ होते देर नहीं लगती। उदाहरण के लिए, 'Did you have a good holidya?' का अनुवाद यदि 'क्या तुम्हारी छुट्टी थी?' कर दिया जाए तो यह हास्यास्पद ही होगा क्योंकि प्रस्तुत वाक्य में 'have' का प्रयोग 'आनंद उठाना' या 'गुजारना' (To enjoy or spend) के भाव को लेकर किया गया है इसलिए इसका अनुवाद 'तो छुट्टी का खूब आनन्द उठाया?' या 'छुट्टी तो अच्छी बीती/गुजरी?' ही होना चाहिए। इसी प्रकार 'We are having some guests today' का अनुवाद यदि 'आज हम कुछ मेहमानों को रख रहे हैं' कर दिया जाय तो इसका अर्थ बिल्कुल ही बदल जाता है क्योंकि इसमें 'have' का प्रयोग 'रखने' के लिए नहीं बल्कि 'आने' (come) के लिए हुआ है अतः अनुवाद होना चाहिए–'आज हमारे यहाँ कुछ मेहमान आ रहे हैं / आने वाले हैं।' ऐसे ही एक अन्य वाक्य देखा जा सकता है–'They are having a party tomorrow' इसका अनुवाद एक महाशय ने यूँ किया–'वे कल पार्टी ले रहे हैं।' सामान्य व्यक्ति शायद इसका यही अनुवाद करे लेकिन यह बिल्कुल ही उलट हो गया है क्योंकि इसमें 'have' का प्रयोग 'लेने' की अपेक्षा 'देने' के लिए

किया गया है। सही अर्थों में इसका अनुवाद 'वे कल पार्टी दे रहे हैं' ही होना चाहिए।

अंग्रेज़ी में 'shall' सहायक क्रिया का प्रयोग सामान्यतः first person के साथ किया जाता है किंतु 'shall' का प्रयोग यदि 'second और third person के साथ किया जाए तो यह इसका असमान्य प्रयोग होता है जो कि कुछ विशेष एवं भिन्न अर्थों की अभिव्यक्ति करता है जैसे कि धमकी (threat), वायदा (promise), दृढ़ निश्चय (determination), विवशता (compulsion), निश्चित स्थिति (certainty), आदेश (order) आदि। प्रायः वाक्य में ये अर्थ सूक्ष्म होते हैं कि इन्हें बहुत गहराई से समझना पड़ता है। ऊपर से देखने में ये अर्थ स्पष्ट नहीं होते इसलिए इन्हें समझने के लिए सन्दर्भों एवं प्रसंगों को ध्यान में रखना भी आवश्यक है, तभी अनुवादक इन सूक्ष्म अर्थों को हिंदी लक्ष्यभाषा में उतारने में सफल होगा। यदि आँख बंद करके वाक्यों में shall का प्रयोग केवल 'गो-गे-गी' के लिए कर दिया जाएगा तो वांछित अर्थ को अभिव्यक्त किया गया है और यह विशेष अर्थ यहाँ पर धमकी के भाव को दर्शाता है इसलिए इसका अनुवाद इसी बात को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए कि आज्ञा के उल्लंघन करने की स्थिति में उसे नौकरी से हटा दिया जाएगा। इसी प्रकार 'They shall fight to the last breath' में अंतिम साँस तक लड़ते रहने का दृढ़ निश्चय, 'You shall go home now' में विवशता, 'The servent shall finish this today' में आदेश, 'Mohan shall return your book tomorrow' में वायदा जैसे सूक्ष्म अर्थ निहित है जिन्हें हिंदी लक्ष्यभाषा में उतारने का प्रयास अनुवादक को करना चाहिए।

अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद के संदर्भ में अर्थ के स्तर पर आने वाली समस्याओं में सर्वप्रथम समस्या अंग्रेज़ी की अनेकार्थक संज्ञाओं के अनुवाद की है। एक ही संज्ञा जब कई-कई अर्थों को संप्रेषित करने की क्षमता रखती हो तो स्वाभाविक है कि उनका अर्थ समझने में अनुवादक को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, 'hand' संज्ञा 'हाथ' (a part of human body), 'स्वामित्व/अधिकार' (possesson), 'अनुभवी व्यक्ति' (an experienced person), 'कारीगर' (worker), 'हाथ होना/भागीदार होना' (to share or contribute), 'लेख' (handwriting), और 'निकट' (close) के विभिन्न अर्थों में प्रयोग की जाती है इसलिए इनके अनुवाद के लिए अनुवादक को ध्यान से काम लेना पड़ता है। उदाहरण के लिए यहाँ कुछ वाक्य देखे जा सकते हैं। 'An old hand is always an asset to a factory', 'He always finds me at hand whenever needed', 'He needs an extra hand to finish it today', 'He writes a legible hand' आदि वाक्यों में 'an extra hand' का एक 'फालतू हाथ' की अपेक्षा 'अतिरिक्त कारीगर', 'a legible hand' का 'पढ़े जा सकने वाला हाथ' की अपेक्षा 'पढ़े जा सकने वाला लेख' ही होना चाहिए।

अर्थ के स्तर पर दूसरी समस्या अंग्रेज़ी शब्दों के लिए हिंदी पर्यायों के निर्धारण की हे। इस समस्या से अनुवादक को कदम-कदम पर जूझना पड़ता है। उदाहरण के लिए, 'It is the height of selfishness' में 'height' का हिंदी पर्याय यदि 'ऊँचाई' की अपेक्षा यदि 'हद' कहें तो बात सहज हो जाती है। इसलिए यहाँ 'स्वार्थ की ऊँचाई है' की अपेक्षा 'स्वार्थ की हद है' कहना ही उचित होगा। 'The towering enemy of mankind is war' में 'Towering' के लिए 'गुंबदाकार' या 'बहुत

ऊँचा' जैसे पर्याय बिल्कुल असंगत प्रतीत होते हैं जबकि 'महान' या 'सबसे बड़ा' जैसे पर्याय एकदम उपयुक्त है। इसी प्रकार 'the younger ones ape everything done by the elder ones' तथा 'I like to have sun-bath in winter' में 'ape' का हिंदी पर्याय 'लंगूर' की अपेक्षा 'नकल उतारना' या 'अनुकरण करना' तथा 'sun-bath' के लिए 'सूर्य में स्नान करना' की अपेक्षा 'धूप सेंकना' ही ठीक होगा।

शब्द-पर्याय के निर्धारण में अर्थ की सूक्ष्मता एक बड़ी समस्या है। ऊपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थ में सूक्ष्म अंतर होता है जैसे, 'part', 'section', 'department' आदि। 'lecture', 'speech', 'chatter', 'conversation', 'discussion', 'briefing' आदि शब्दों के हिंदी पर्याय निर्धारित करने में अनुवादक के समस्या का सामना करना पड़ता है क्योंकि इन शब्दों में ऊपरी साम्य होते हुए भी इनके अर्थों में अंतर है। यदि अनुवादक 'chatter' के लिए 'वार्तालाप' और 'conversation' के लिए 'भाषण' आदि का प्रयोग करता है तो यह एक निरर्थक प्रयास होगा।

इसके बाद अंग्रेज़ी के कुछ ऐसे शब्द हैं जो हिंदी में बहुत ही प्रचलित हैं और जनमानस में गहरे उतर चुके हैं किंतु उनके लिए हिंदी में नये शब्द गढ़ लिए गये हैं। ऐसी स्थिति में पूर्व प्रचलित शब्दों को ही अनुवाद में स्थान देना उचित है न कि नव-निर्मित शब्दों को क्योंकि इन्हें समझने में पाठक को कठिनाई हो सकती है। 'क्लर्क' शब्द आम आदमी और अशिक्षित आदमी भी समझ सकता है लेकिन 'लिपिक' को नहीं। 'cheque' के लिए 'धनादेश' ठीक है किंतु 'चेक' अधिक सहज है। इसी प्रकार 'telegram', 'telephone' और 'television' के लिए हिंदी पर्याय क्रमशः 'टेलीग्राम', 'टेलीफोन' और टेलीविजन' अधिक प्रचलित और स्वीकार्य हैं यद्यपि 'दूरलेख', 'दूरभाष' और 'दूरदर्शन' भी ठीक है।

शब्द–पर्याय के निर्धारण संदर्भ में एक अन्य समस्या उस समय सामने आती है जब अंग्रेज़ी भाषा में कोई शब्द–विशेष किसी अर्थ–विशेष को व्यक्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है किंतु हिंदी में अनुवाद करने वाला उस अर्थ–विशेष को न पकड़कर उसका सामान्य अर्थ ही लक्ष्यभाषा में उतार देता है, जैसे 'He is a good boy' में 'good' विशेषण कई प्रकार के अर्थों को व्यक्त करने में सक्षम है। अनुवादक को देखना होगा कि वह किस दृष्टि से अच्छा है। वह शारीरिक रूप से अच्छा है या चारित्रिक रूप से। मान लीजिये 'He is a black person' में लेखक उस अभिव्यक्ति की दुष्चरित्रता (not good at heart) व्यक्त करना चाहता है लेकिन यदि हिंदी का अनुवादक इस अर्थ से हटकर इसका अर्थ श्याम वर्ण के संदर्भ में करता है तो अपेक्षित अर्थ बहुत दूर जा पड़ता है। इसलिए इसका अनुवाद उस व्यक्ति की चारित्रिक विशेषता को ध्यान में रखकर ही किया जाना चाहिए न कि शारीरिक रंग को। ऐसी स्थिति में अनुवादक की प्रसंगों से ही सहायता लेनी चाहिए।

अगली समस्या अंग्रेज़ी के संदेहास्पद (confusing) शब्दों के हिंदी पर्यायों की है। कुछ शब्द रूपात्मक स्तर पर लगभग एक जैसे प्रतीत होते हैं जिससे अनुवादक के लिए संदेहास्पद स्थिति उत्पन्न हो जाती है और इसीलिए अर्थ की दृष्टि से उनके हिंदी पर्यायों के गलत चयन की संभावना बनी रहती है जिससे अर्थ का अनर्थ भी होता है। लेकिन ऐसा उसी समय होता है जब अनुवादक लापरवाही से काम ले या फिर वह समयाभाव के कारण शीघ्र ही काम निबटाना चाहे। उदाहरण के लिए, 'meconic' और 'mechanic' को देखा जा सकता है। यहाँ पहले शब्द का अर्थ

'अफीम से निकलता हुआ' और दूसरे का 'कारीगर' है। यदि इन दोनों के पर्यायों को परस्पर बदल दिया जाये तो स्थिति बिल्कुल भिन्न हो जायेगी। इसी प्रकार 'mealie' और 'mealy' के लिए क्रमशः 'अफ्रीका में पाये जाने वाला ज्वार या भुट्टा' और 'आटे का' / 'सूखा और सफेद' / 'मृदुभाषी' पर्याय ही प्रसंगानुसार रखे जाने चाहिए। 'Errand' और 'Errant' में भी यही स्थिति देखने को मिलती है। यहाँ पहले शब्द का अर्थ व्यवसाय/संदेश/दूतकार्य प्रसंगानुसार तथा दूसरे का 'किसी साहसिक कार्य की खोज में भटकने वाला' है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को चौकन्ना रहना चाहिए।

''सृजनात्मक स्तर पर अंग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद के दौरान आने वाली समस्याओं में सर्वप्रथम समस्या बिंबानुवाद की है। बिंबों के अनुवाद के लिए अनुवादक को सृजनात्मक प्रतिभा का धनी होना चाहिए और साथ ही दोनों भाषाओं की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का भी अच्छा ज्ञान होना चाहिए तभी वह इस प्रकार के अनुवाद में आने वाली समस्याओं से जूझ सकेगा। मान लीजिए अंग्रेज़ी में 'hen' का बिंब 'chicken-hearted' का वाचक है और हिंदी अनुवादक इसका अनुवाद 'मुर्गी' करता है तो यह असंगत है, क्योंकि हिंदी में भी वही भाव लक्षित होना चाहिए जो अंग्रेज़ी में है। इसके लिए हिंदी में बिंबानुवाद होना चाहिए– 'कमजोर दिल' न कि 'मुर्गी'। बाइबिल के वाक्य– 'Touch not, thou shalt commit adultery' का हिंदी में अनुवाद यदि 'स्पर्श मत करें, आप अपराध कर रहे हैं' किया जाए तो यह भाव की दृष्टि से बिल्कुल गलत होगा। इसका बिंबानुवाद परस्त्रीगमन के रूप में ही संभव होगा। जैसे कि 'परस्त्रीगमन महापाप है'। ऐसे ही

'sunny smile' बिंब का अनुवाद हिंदी में 'रविस्मित' की अपेक्षा 'रजतहास' ही होना चाहिए। 'smile of Monalisa' का हिंदी में बिंबानुवाद यदि 'मोनालिसा की मुस्कान' किया जाए तो असंगत होगा क्योंकि हिंदी में मोनालिसा का पर्याय नहीं खोजा जा सकता इसलिए मोनालिसा की विशेषता के अनुरूप कोई विशेषण खोजना होगा जैसे- 'अलौकिक मुस्कान'। कई बार अंग्रेज़ी के बिंब का हिंदी में अनुवाद उपमा की सहायता से भी किया जा सकता है, जैसे 'a slim lady' को 'पतली-दुबली स्त्री' कहकर 'छरहरी कलगी बाजरे की' कहा जा सकता है।

ऐसी ही समस्याएँ अंग्रेज़ी भाषा में प्रयुक्त प्रतीकों के अनुवाद में भी आती हैं। प्रायः ये प्रतीक किसी स्थिति, संदर्भ अथवा मानसिकता विशेष के सूचक होते हैं जिनका अनुवादक को बड़ी सूझबूझ से लक्ष्यभाषा में अनुवाद करना होता है। जैसे- 'Beware of the crown, it is serpentile' का हिंदी में अनुवाद 'मुकुट से सावधान, इसमें छिपा है विषधर महान' किया जा सकता है। प्रतीकों का अनुवाद करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि अंग्रेज़ी में प्रतीकात्मक रूप में जो वस्तु ग्रहण की गयी है वह हिंदी में भी वही अर्थ देती है या नहीं। जैसे, 'He is an owl' का हिंदी अनुवाद यदि 'वह उल्लू है' कर दिया जाए तो यह गलत होगा, क्योंकि अंग्रेज़ी भाषा में 'उल्लू' विवेका का प्रतीक है न कि मूर्खता का। टी.सी. इलियट की 'The Waste Land' की पंक्ति 'April is the cruellest month' का प्रतीकानुवाद 'अप्रैल मास अति क्रूर है' करना बिल्कुल गलत होगा क्योंकि यहाँ अप्रैल मास जो कि बसन्त का सूचक है, का प्रयोग विपर्यय रूप में किया गया है जिसमें युद्ध से पहले के वसन्त की स्मृति का बोध निहित है।

इसलिए इसका सही प्रतीकानुवाद 'टीस रहे हैं वसन्त के जख्म' ही होगा।''[19]

प्रत्येक देश एवं समाज की अपनी निजी सांस्कृतिक विरासत एवं जीवन-दृष्टि होती है। संघर्षों से जूझकर कमाये गए जीवन-मूल्य होते हैं। सांस्कृतिक-ऐतिहासिक, सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक-धार्मिक व नैतिक विकास की विशिष्ट ढंग की विशिष्टताएं होती हैं। प्रायः इन विशिष्टताओं में ही समाज की सम्पूर्ण अन्तर्मानसिकता निहित होती है। यह अन्तर्मानसिकता ऐतिहासिक पीठिका की अनवरतता और काल-चक्र से जुड़ी होती है। विभिन्न देशों के और कालों के भावों, विचारों, संकल्पनाओं, प्रत्ययों और कृत्यों में मानव का सम्पूर्ण बौद्धिक एवं कार्यात्मक-ज्ञानात्मक भण्डार अनुवाद के माध्यम से मुक्त विचार-विनिमय व्यापार में प्रवृत होता है।

मानव के पास आयु, समय और साधन की एक सीमा रहती है। हर व्यक्ति संसार की प्रत्येक भाषा नहीं सीख सकता। ऐसी स्थिति में अनुवादक ही वह माध्यम है जिसके द्वारा हम सभी भाषाओं से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। इस प्रकार सभ्यता के विकास में वह सृजनात्मक योगदान देता रहा है। अनुवादक के इस उदात्त एवं निष्ठापूर्ण हो उसकी संदर्भगत अर्थवत्ता पर कोई संशय न हो तो उसे ग्रहण कर लेना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक के अनुवाद का अनुभव बड़ा ही व्यापक और विशिष्ट रहा है। चूँकि कहानी-संग्रह की सभी कहानियाँ उत्तर-पूर्व के समाज से ली गई है इसलिए इन कहानियों में सहज ही वहाँ की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ पैनेरूप से

---

[19] अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद की समस्याएँ, सिंगला, सुरेश, पृ. 89

व्यंजित हुई है। हर संस्कृति की कुछ अपनी विशेषताएँ होती है और उन विशेषताओं के अनुरूप उस संस्कृति की भाषा में कुछ विशिष्ट शब्द और अभिव्यक्तियाँ होती हैं। ऐसे शब्दों और अभिव्यक्तियों का अनुवाद करना एक टेढ़ी खीर ही साबित हुआ। क्योंकि उत्तर पूर्व से नहीं होने के कारण मैं उत्तर-पूर्व की कई ऐसे सांस्कृतिक अर्थछवियों वाले शब्दों से अनभिज्ञ थी जिनके तात्विक अर्थ को संदर्भ के परिप्रेक्ष्य में समझे बिना अनुवाद में सटीकता व खड़ापन लाना कदापि संभव न था। इस दिशा में उत्तर पूर्व के सहपाठियों और स्वयं लेखिका का अभूतपूर्व सहयोग प्राप्त हुआ। अन्य संस्कृतियों में पनपी भाषाओं में यह आवश्यक नहीं कि उसके समकक्ष अभिव्यक्ति मिले ही। और यदि उचित अभिव्यक्ति वाले शब्द नहीं मिले तो अभिव्यक्ति का पैनापन समाप्त हो जाता है। अनुवाद के दौरान बहुत से ऐसे शब्द आए जिनका अपना सांस्कृतिक-स्थानीय महत्त्व है यथा- "Supeti', 'age-set feast', waist cloth, Dobhashi, cold rice and black tea, village sentries, 'pulao', Chicken curry', beef curry, corned-beef, 'Dobhashi,', 'Easter week'. इन शब्दों ने अनुवाद के दौरान दुरूहता और अननुवादेयता उत्पन्न किया। अंग्रेज़ी के 'अंकल' और 'आंट' को भारतीय भाषा में अनूदित करना कठिन प्रतीत हुआ। जैसे अंग्रेज़ी में आये Waist cloth के लिए एक ही सन्निकट पर्याय शब्द सबसे उपयुक्त जान पड़ा वो था 'मेखला'। यह पूर्वोत्तर की पारंपरिक वेश-भूषा का एक अहम् हिस्सा है। इस लिहाज से इसका अनुवाद लुंगी, या पेटीकोट आदि करना सर्वथा अनुचित था इससे 'मेखला' में निहित भाव की अभिव्यक्ति कदापि नहीं आ पाती। उसी प्रकार Cold rice और black tea की अभिव्यक्ति 'ठंडे चावल' व 'काली चाय' के अनुवाद से कदापि अभिलक्षित नहीं

की जा सकती। पूर्वोत्तर के समाज में खान-पान की अपनी अलहदा परंपरा है। प्रत्येक भोजन के बाद 'ब्लैक टी' परंपरागत तौर पर लोगों द्वारा ली जाती है जिसे विशेष तौर पर विभिन्न प्रकार के मसालों और जड़ी बूटी के मिश्रण से तैयार किया जाता है। उत्तर भारत में बनाई जाने वाली 'काली चाय' (जिसे केवल चीनी और चायपत्ती के मिश्रण से बनाया जाता है) कभी भी 'ब्लैक टी' में निहित भाव को अनूदित नहीं कर पाती। इसी प्रकार चिकन करी, बीफ स्टीव और कार्न बीफ का भी अपना क्षेत्रिय पारंपरिक व सांस्कृतिक महत्त्व है जिन्हें हिंदी में अनूदित करना कठिन है। जहाँ तक कार्न बीफ का प्रश्न है तो यह पूर्वोत्तर समाज के भोजन का एक अभिन्न अंग है जिसका अनुष्ठानिक महत्त्व है। विशेष अवसर (जैसे- शादी-ब्याह या जन्म) पर विभिन्न प्रकार के अन्न व मांस के मिश्रण से तैयार इस पकवान को समाज के सभी वर्ग मिल के लोग बाँटकर खाते हैं। इसका अनुवाद यदि 'अन्न मांस' कर दिया जाए तो अर्थ का अनर्थ हो जायेगा। यहां दुरूहता को कम करने के लिए पाद-टिप्पणी के माध्यम से शब्द को लिप्यंतरित कर अर्थ स्पष्ट करने की कोशिश की गई है।

अनुवाद भी एक तरह का सृजन है। इसके लिए अन्तर्दृष्टि की बड़ी अर्थवान भूमिका होती है। अच्छा अनुवाद तो अन्तर्दृष्टि के बिना सम्भव ही नहीं होता। एक अनुवादक के तौर पर मैंने गहनता से यह अनुभव किया कि अनुवाद करते समय भाषा की प्रकृति तथा सांस्कृतिक सन्दर्भों का सम्यक विचार होना अति आवश्यक है। जहाँ तक कठिनाई का प्रश्न है तो अनुवाद करते समय मुझे स्त्रोत तथा लक्ष्यभाषाओं के बीच मौजूद अन्तर अथवा व्यतिरेक से हर कदम पर जूझना पड़ा।

सहज, सटीक और ग्राह्य अनुवाद के लिए अनुवाद करते समय भाषा के व्यतिरेक का सम्यक् विश्लेषण करना पड़ा। साथ-ही भाषा के स्तर पर ध्वनि, रूप, विन्यास आदि संरचनागत विशेषताओं का ध्यान भी रखना पड़ा। भाषा की प्रकृति तथा सांस्कृतिक सन्दर्भों का सम्यक विचार एक अनुवादक के तौश्र पर मेरे लिए सबसे दुष्कर कार्य था। परंतु निश्चय ही इस अभीष्ट ध्येय में मैंने सफल रहने का प्रयत्न किया है।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध में दो भाषाओं की व्याकरण सम्मत तुलना की गई है। प्रथम अध्याय में मैंने भारत में अंग्रेजी-कथा साहित्य का विस्तार, लेखिका परिचय, अनुवाद की परम्परा की शुरूआत आदि की विस्तार से चर्चा की है वहीं दूसरा अध्याय मूल पुस्तक सभी आठ अंग्रेजी कहानियों के हिंदी अनुवाद पर आधारित है। इससे इतर तीसरे अध्याय में भाषा के सभी अंगों को लेकर अंग्रेजी और हिंदी की संरचनाओं का तुलनात्मक और व्यतिरेकी विश्लेषण किया है जैसे- ध्वनि, लिपि, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, वाक्य संरचना, काल पक्ष, वृत्ति वाच्य आदि। साथ ही अनुवाद में प्रयुक्त भाषा की अभिव्यक्ति की बारीकियों, अर्थ-छटाओं, समकक्ष, व्याकरणिक नियमों, अपवादों और संभावित उक्तियों का भी विश्लेषण व अध्ययन किया है।

शोधकार्य के अंतर्गत एक अध्याय पाठाधारित समस्याओं पर आधारित है, जिसका प्रयोजन दो भाषाओं की संरचनाओं की तुलना कर उन स्थलों की पहचान करना था जहां वे एक दूसरे से असमान और भिन्न है। साथ ही अन्तर्भाषिक अनुवाद से जुड़ी समस्याओं का विश्लेषण, सांस्कृतिक अर्थछवियों का मीमांसा एवं लोप तथा संयोजन के स्तर पर समस्याओं का भी विश्लेषण किया है।

टेमसुला ओ पूर्वोत्तर के नागा जनजातीय समुदाय से आती है। अब तक उनकी पाँच कविता-संग्रह और दो किताबें प्रकाशित हो चुकी है जिसमें एक 'हेनरी जेम्स' पर आधारित है। दो लघु कहानी संग्रह 'दिज हिल्स कॉल्ड होम : स्टोरिज फ्राम ए वार जोन, 2006 और लाबुरनम फॉर माई हेड, 2009 भी खासी चर्चित

रही। इके अलावा नागा संस्कृति पर आधारित निबंध पुस्तक : वन्स अपॉन ए लाइफ : बर्नट करी और ब्लडी रैग्स, 2013 और ऑन बीइंग ए नागा 2014 में उन्होंने अपनी लेखनी का जादू चलाया। आओ नागा ओरल ट्रेडिशन का दूसरा संस्करण वर्ष 2012 में प्रकाशित हुआ और कविता संग्रह वर्ष 2013 में 'बुक ऑफ सांग्स' में एक खंड में प्रकाशित हुआ।

उत्तर-पूर्व राज्य से होने के करण लेखिका के पास वहां की संस्कृति को समझने का एक व्यापक नजरिया है। विशेषकर क्षेत्रिय समस्याओं से वे बखूबी परिचित है। अभी तक अंग्रेजी भाषा में उनकी दो लघु कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुकी है। पूर्व के अपने कहानी संग्रह में उन्होंने नागा विद्रोह की समस्याओं को सिरे से उठाया है। प्रस्तुत लघु कहानी संग्रह में भी उन्होंने अपनी उसी लेखन परंपरा को आगे बढ़ाया है। सभी कहानियों में संवेदनाओं और उद्‌बोधक का सम्पुट है जिसे बड़ी ही गहराई से उकेरा गया है। संग्रह की आठों कहानियां आठ अलग परिवेश, अलग विचारधारा और अलग रंग की कहानियां हैं।

स्त्री उपेक्षा, पीड़ा, संघर्ष, नागा आंदोलन, प्रेम और अलगाव की पृष्ठभूमि में लिखी गई ये कहानियाँ भाषा, शिल्प व कथ्य की शैली पर एकदम खड़ी उतरती है। जीवन की विभिन्न अनुभूतियों से रंगी ये कहानियाँ तस्दीक करती है कि प्रेम का रंग गहरा होता है। ये कहानियाँ सच के करीब लाकर वास्तविकता का आइना दिखाती है। भाषा और कथ्य की कसौटी पर कसी इन कहानियों में कहीं दर्द है तो कहीं सैलाब, कहीं प्रेम का रूहानी एहसास तो कहीं डार से बिछुड़ने की पीड़ा। संग्रह की मुख्य कहानी 'लाबुरनम फॉर माई हेड' एक स्त्री की अमलतास के

फूलों के प्रति प्रेम व आकर्षण को दर्शाता है वहीं एक अन्य कहानी 'सौन्नी' दो युवा जोड़े की एक दुखद प्रेम कहानी है जिसमें मिलन का सुखद एहसास है तो दूसरी ओर बिछड़न की तड़प भी। भाषा, परिवेश और कथ्य की शैली पर कसी हुई सभी कहानियाँ आंखों में आंखें डालकर सच को देखने पर मजबूर करती है। स्त्री शक्ति की कहानी 'श्री वूमन', संग्रह की उम्दा कहानियों में से एक है। स्त्री भावनाओं से ओत-प्रोत इस कहानी में प्रत्येक स्त्री खुद को एकाकार करती है। संप्रेषण व अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से भी कहानियाँ बिल्कुल अहलदा है।

अनुवाद में 'भाषा' का दोहरा जोखिम होता है। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के मध्य खड़ा अनुवाद एक तटस्थ विक्रेता की तरह तुला थामे कीमत के बराबर वस्तु तोलने का प्रयास करता है। अनुवाद की भाषा और भाषा का अनुवाद की तुला के दो पलड़ों में रखी उन महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के समान है जिनमें तटस्थता, ईमानदारी तथा सेवा का भाव-सौन्दर्य विद्यमान रहता है। न घटाने-न-बढ़ाने का सिद्धांत इसी सौन्दर्य का पोषक है। अनुवाद दो भाषाओं और संस्कृतियों के बीच सम्पर्क-सेतु के रूप में अनुवाद की विशिष्ट भूमिका है लेकिन अनुवाद कर्म के लिए पूरी सावधानी एवं गम्भीरता की अपेक्षा होती है। अनुवादक अपनी भाषा के माध्यम से एक ऐसा वैचारिक प्रयोग करता है जिससे वह अपने पाठक के लिए अदृश्य और अनदेखे को भी दृश्य बना सकता है। अनुवाद, संस्कार, संस्कृति और अनुशासन के आत्म प्रसार की प्रक्रिया है। हालांकि अनुवादक के तौर पर खतरों और जोखिमों से भरी हुई है। किन्तु आवश्यकता, अनिवार्यता और उपादेयता उसे भाषा के अनुवाद की शक्ति प्रदान करते है। और यह अनुवाद की भाषा का नया सौन्दर्यशास्त्र सृजित करता चलता है।

किसी भी सामग्री का अनुवाद करते समय अनुवादक को अनेक प्रकार की समस्याओं और सीमाओं का सामना करना पड़ता है। ये सीमाएँ भावपरक ही नहीं भाषापरक भी होती है। और प्रयुक्ति परक वैशिष्टय सम्बन्धी भी। सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों का अनुवाद भी अनुवादक की सीमा बन जाता है। प्रस्तुत शोध में इन्हीं चुनौतियों और सीमाओं पर विश्लेषण किया गया है। दो संस्कृतियों, विचारधाराओं, चिंतन परम्पराओं, भाषिक संस्कारों, रीति रिवाजों, परम्पराओं एवं भावधाराओं के बीच एक अनुवादक के तौर पर मैंने किस तरह दोहरा जोखिम उठाया है इस बारे में विस्तृत चर्चा की गई है।

संदर्भ सूची (Bibliography)

आधार ग्रंथ-

''लाबुरनम फॉर माई हेड'' टेमसुला ओ (पेन्गूइन, 2009)

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- रमणिका गुप्ता (संपादक), शौर्य एवं विद्रोह, आदिवासी, साहित्य उपक्रम, रमणिका फाडंडेशन, 2004
- रमेशचंद मीणा, आदिवासी दस्तक : विचार, परम्परा और साहित्य, अलख प्रकाशन, जयपुर 2013
- हरिराम मीणा, आदिवासी दुनिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली 2013
- वंदना टेटे, आदिवासी साहित्य, परंपरा और प्रयोजन, प्यार, केरकेट्टा फाउंडेशन, रांची 2013
- Naga : A People Struggling for Self Determination, Shimerichon Luithui and IWGIA, 2001 Mills Publiation.
- Let Freedom Ring : Story of Nagar Nationalism; A.S. Shimray, Promilla & Co-Publisher, 2005
- Naga Identity, B.B. Kumar, Concept Publishing Company, 1941
- NAGA HILLS AND MANIPUR : Socio-Economic History, B.C.A. LLE Gian publications, 1980
- THE NAGA CHRONICLE, Compiled by V.K. Nuh edited by WETSHOKH ROLO LASUH, ISBN 10, 2002, Regency Publications
- WHO ARE THE NAGAS? Author : Nandita Haksar ISBN 13 : Chicken neck publisher

- Ghosh, Arun Kumar, 1994. Santale - A Look into Santal morphology, New Delhi : Gyan Publishing House
- Chaudhuri, A.B.,The Sanal Religion and Rituals; Ashish publishing House; New Delhi, 1985
- Nagaland : A Journey to India's Forgotten Frontier by Janathan Glancey, 2011, Gian Publication
- History of the relation of the Government with the Hill-Tribes of the North-East Frontier of Bengal First edition 1884, Digitized 2012
- Verghese, B.G. India's North-east Resurgent : Ethnicity, Insurgency, Governance, Development, Delhi: Konark Publishers, 2004
- Baruah, Sanjib, India Against Itself : Assam and the politics of Nationality, New Delhi : Oxford University Press, 2001
- Dutta, Akhil Ranjan Ed-Human Security in North-East India: Issues and Policies, Guwahati : Anwesha, Publication, 2003
- Discipline and Punish Trans, Alan Sheridan, New York : Vintage Book, 1995
- Hutchens, Benjamin C, Levinas : A Guide for the Perplexed, 19, Vintage Books, Continuum, 2006

सहायक पत्र-पत्रिकाएं

अंग्रेजी पत्रिकाएँ

- टी.एन.टी., द नार्थ-ईस्ट टुडे मार्च अंक 2014
- ईस्टर्न पैनोरेमा, जनवरी, 2004
- ऐसेंट, अक्तूबर 2013
- नार्थ-ईस्ट टाइम्स, मार्च, 2013

हिंदी पत्रिकाएँ

- समकालीन भारतीय साहित्य, जनवरी, 2013, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
- प्रभात-पुंज, मार्च 2013, डॉ. वेदप्रकाश दुबे
- 'गवेषणा' (अंक 89/2008), केंद्रीय हिंदी संस्थान
- मीडिया (अंक 13 तक/2010), केंद्रीय हिंदी संस्थान
- समन्वय (छात्र पत्रिका, मई 2013), केंद्रीय हिंदी संस्थान
- 'गवेषणा' संचयन (2008) वार्षिकी, केंद्रीय हिंदी संस्थान
- 'अनुवाद' (जर्नल) अंक जुलाई 2013, भारतीय अनुवाद परिषद्

वेबसाइट एवं ब्लॉग

- www.North east Women Writers.org
- Books. Google.co.in (About Biography of TEMSULA AO)
- www.Zubaan publication.org.in (Content taken : TEMSULA AO Literary Works and her life time achivements)

. परिशिष्ट

1. **Waist Cloth-** पूर्वोत्तर में, विशेषकर महिलाओं द्वारा कमर के चारो ओर गोल लपेट कर पहना जाने वाला साड़ी जैसा वस्त्र।
2. **Head Stone-** ईसाई परंपरानुसार मृत्युपरांत मृतक के कब्र के पास लगाया जाने वाला पत्थर।
3. **Hind-Leg of Sambar-** पूर्वोत्तर के भोजन का एक अहम् व्यंजन, जिसे बीफ या पोर्क के साथ मिलाकर तैयार किया जाता है।
4. **Dobhashi-** सेना और नागा समुदाय के बीच भाषा मध्यस्थ के रूप में काम करने वाला व्यक्ति
5. **Sahibs-** नागा समाज में भारतीय अधिकारियों को दिया जाने वाला सम्मानसूचक शब्द
6. **Karhai-** लोहे की चौड़े मुँहवाली बर्तन जिसमें सब्जी या मांस पकाया जाता है।
7. **Pulao-** चावल और मसालों से तैयार भात
8. **Corned-beef-** मकई के दानों और गाय के मांस के मिश्रण से तैयार व्यंजन
9. **Gaonburah-** नागालैंड के जनजातीय समुदाय में पंचायत स्तर पर सरकार का प्रतिनिधि, जो मुखिया की भूमिका निभाता है।
10. **Black tea-** उत्तर–पूर्व, (नागालैंड की आदिवासी जनजातीय) में पीया जाने वाला पेय
11. **Shawl and dao-** आदिवासी कबीले के पंचायत प्रतिनिधि को सरकार द्वारा दी जानेवाली सम्मानजक वस्तुएँ।
12. **Bamboo Stakes-** बाँस से बना खाँचा या ढेर जिसे विशेषकर उत्तर–पूर्व समाज में गृहनिर्माण के कार्य में उपयोग किया जाता है।